नीलदर्पण
दीनबन्धु
मित्र

यह नाटक

हमारे पुरखों ने विदेशी निलहों के अत्याचारों को चुपचाप सहा नहीं, उन्होंने विद्रोह किया, प्रतिशोध लिया, और संघर्ष की ज्योतिशिखा को प्रज्ज्वलित बनाए रहे। ···उन संघर्षों को, अश्रु-स्वेद-रक्त की उस कहानी को याद रखना आवश्यक है।

हिन्दी में 'नीलदर्पण' का यह संस्करण अभूतपूर्व और अद्वितीय है। पाठकों को प्रथम बार इस नाटक में गोरे निलहों के अनाचारों, अत्याचारों की दारुण कथा रक्ताक्षरों में पढ़ने को मिलेगी। नाटक के सभी पात्र सजीव हैं। कथानक रोचक और रोमांचकारी है। भाषा सरल और प्रभावपूर्ण है।

इस नाटक को हिन्दी में प्रकाशित करने का अवसर पाकर मित्र प्रकाशन अपने को गौरवान्वित अनुभव करता है।
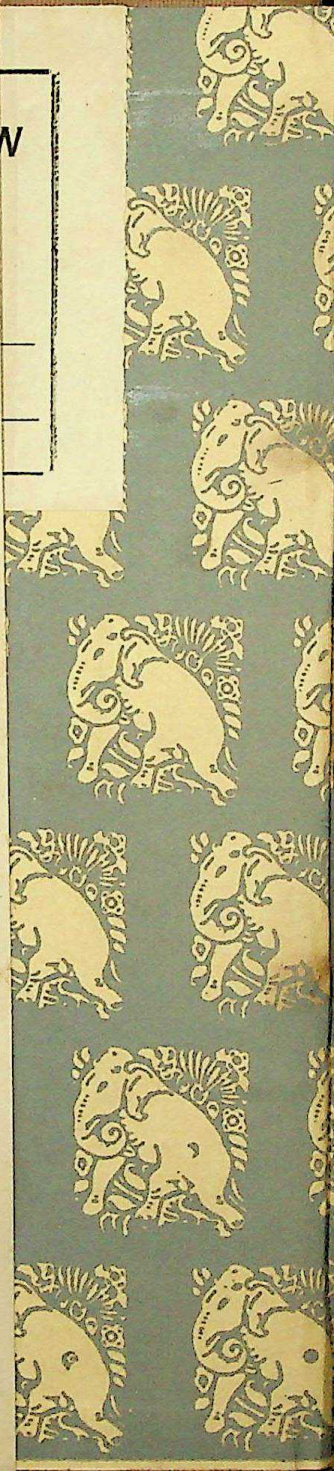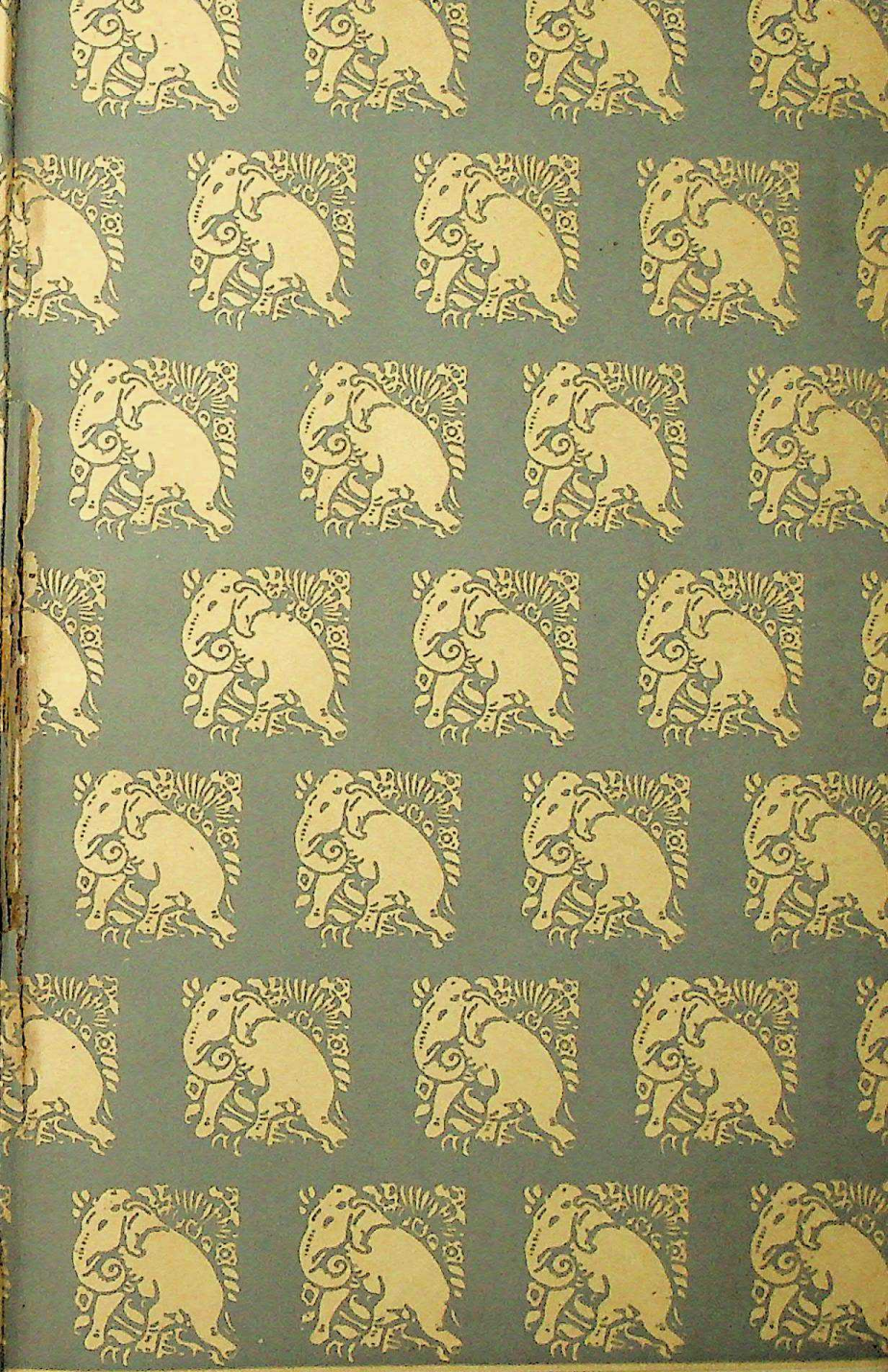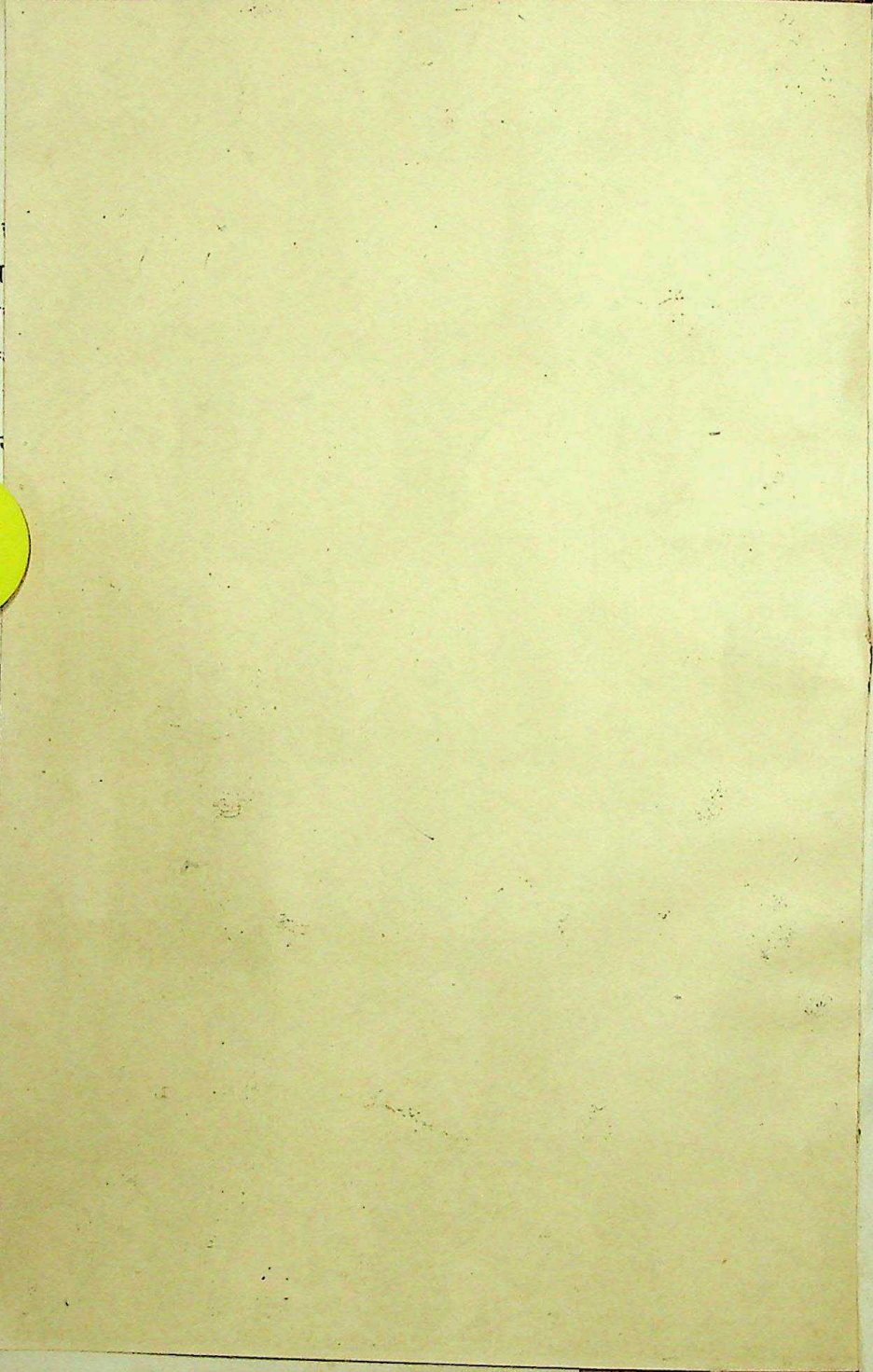
नोलदर्पण

मित्र प्रकाशन गौरव ग्रंथ माला — ९

दीनबन्धु मित्र कृत

नीलदर्पण

(नाटक)

अनुवादक

महादेव साहा

संपादक

श्रीकृष्ण दास

मित्र प्रकाशन प्राइवेट लिमिटेड, इलाहाबाद–३

प्रकाशक :
मित्र प्रकाशन प्राइवेट लिमिटेड,
इलाहाबाद।

मूल्य
चार रुपये पचास पैसे
१९६४

मुद्रक :
वीरेन्द्रनाथ घोष,
माया प्रेस प्राइवेट लिमिटेड,
इलाहाबाद।

समर्पण

जननी गूजरी की स्मृति में

यह नाटक

प्रसिद्ध भारतविद्या विशारद डा० महादेव साहा द्वारा अनूदित दीनबन्धु मित्र कृत 'नीलदर्पण' नाटक पाठकों की सेवा में अर्पित है

'नीलदर्पण' नाटक का प्रकाशन १८६० ई० में प्रथम बार हुआ था। विदेशी व्यापारियों के क्रूर शोषण के फलस्वरूप तत्कालीन बंगाली कृषक समाज का जीवन कितना करुण, दयनीय और विशृंखलित हो गया था, उसका स्तर कितना नीचे गिर गया था, वह कितना निराश, उदास और किंकर्त्तव्य-विमूढ़ हो गया था—इसकी एक जीवन्त, रक्ताभ झाँकी 'नीलदर्पण' नाटक में मिलती है। साथ ही, उस अनाचार और अत्याचार के विरुद्ध जनता के हृदय में जो विद्वेष था, जो आक्रोश था, प्रतिशोध की जो भावना थी उसका भी सफल और गाढ़ा चित्रण प्रस्तुत नाटक में हुआ है। बंगाल की नाट्य परंपरा में यह नाटक युग प्रवर्तक के रूप में स्वीकृत हुआ, और दीनबन्धु मित्र की प्रतिष्ठा एक महान् क्रान्तिकारी विचारक और मंत्रद्रष्टा के रूप में हुई। परवर्ती नाटककारों ने दीनबन्धु मित्र से प्रेरणा ग्रहण की और 'नीलदर्पण' की परम्परा में अनेक क्रान्तिकारी नाटकों का प्रणयन बंगाल और भारत के अन्य क्षेत्रों एवं प्रदेशों में हुआ। इस प्रकार 'नीलदर्पण' नाटक का ऐतिहासिक महत्व तो था ही, राजनीतिक दृष्टि से भी वह अत्यन्त महत्व-पूर्ण रचना प्रमाणित हुआ। आज भी इस नाटक की महत्ता कम नहीं हुई है। नाट्य-रचना की कला को जातीय जीवन के यथा तथ्य चित्रण में कितनी सफलतापूर्वक प्रयुक्त किया जा सकता है और ऐसी रचना जातीय चेतना को कितना उद्वेलित और अनुप्राणित कर सकती है—'नीलदर्पण' इसका एकान्तिक उदाहरण है। ऐसे महत्वपूर्ण नाटक को अनूदित करके डा० महादेव साहा ने सचमुच हिन्दी साहित्य की श्री वृद्धि की है। मित्र

प्रकाशन इस नाटक को हिन्दी में प्रकाशित करने का अवसर पाकर अपने को गौरवान्वित अनुभव करता है।

डा० महादेव साहा ने अनुवाद के अन्त में जो परिशिष्ट जोड़ दिए हैं उनमें दीनबन्धु की जीवनी, दीनबन्धु के कवित्व, वंगीय रंगमंच पर नीलदर्पण, नील दर्पण के तथ्यगत आधार, नील की खेती और व्यापार, नीलदर्पण सम्बन्धी गीत, नील-विद्रोह, नील कमीशन, नीलदर्पण का मुक़दमा आदि का संपूर्ण ब्यौरा दिया गया है। इन परिशिष्टों का अनुशीलन करने से तत्कालीन सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक जीवन की पूरी जानकारी हो जाती है। इस संदर्भ में 'नीलदर्पण' की रचना करके दीनबन्धु मित्र ने सत्यमेव अपूर्व कौशल और वैचारिक दृढ़ता का परिचय दिया। यह नाटक अभिनय की दृष्टि से भी अत्यन्त सफल सिद्ध हुआ।

हिन्दी में 'नीलदर्पण' नाटक का यह संस्करण अभूतपूर्व और अद्वितीय है। पाठकों को प्रथम बार इस नाटक में गोरे निलहों के अनाचारों-अत्याचारों की दारुण कथा रक्ताक्षरों में पढ़ने को मिलेगी। नाटक के सभी पात्र सजीव और सशक्त हैं। कथानक रोचक और रोमांचकारी है। भाषा सरल और प्रभावपूर्ण है।

हमारे पुरखों ने विदेशी निलहों के अत्याचारों को चुपचाप सहा नहीं, उन्होंने विद्रोह किया, प्रतिशोध लिया और संघर्ष की ज्योतिशिखा को प्रज्ज्वलित बनाए रहे। सौ वर्षों से भी अधिक काल के अनवरत संघर्षों के फलस्वरूप ही हमारे देश को विदेशी परतंत्रता से मुक्ति मिली। मगर उन संघर्षों को, अश्रु-स्वेद-रक्त की उस कहानी को याद रखना आवश्यक है।

इसी दृष्टि से मित्र प्रकाशन ने इस गौरव ग्रंथ को प्रकाशित किया है। पाठक वर्ग इस नाटक को इस रूप में प्राप्त करके संतुष्ट होगा, इसमें सन्देह नहीं।

—श्रीकृष्ण दास

आमुख

नील पर लिखा यह प्रथम और अद्वितीय नाटक १८६० ई० में प्रकाशित हुआ। इसमें कहीं भी दीनबन्धु मित्र का नाम नहीं था। आख्यापत्र से इसके बारे में कुछ बातों का पता चलेगा। वह इस प्रकार था--

नीलदर्पण। नाटकं। नीलकर--विषधर-दंशन कातर-प्रजानिकर। क्षेमंकरेण केनचित् पथिकेनाभिप्रणीतं। ढाका। श्री रामचन्द्र भौमिक कर्त्तृक। वांङ्गालायंत्रे मुद्रित। शकाब्दा १७८०। २ आश्विन॥

१८६१ में इसका तर्जुमा 'A Native' ने किया। Nil Durpun, or The Indigo Planting Mirror के छपने पर निलहों ने उत्पात शुरू किया। इसमें भी लेखक और अनुवादक का नाम नहीं था। इंगलिशमैन पत्रिका के सम्पादक ने प्रकाशक पर मानहानि का मुक़दमा दायर किया। भूमिका लेखक पादरी जेम्स लाङ ने सारी ज़िम्मेदारी अपने ऊपर ले ली। प्रकाशक पर मामूली जुर्माना हुआ। सुप्रीम कोर्ट ने लाङ को एक महीने की कड़ी सजा और हज़ार रुपए जुर्माना किया। महात्मा कालिप्रसन्न सिंह ने जुर्माना जमा कर दिया। लाङ ने सज़ा काटी। रोज़ जेल में जितने आदमी उनसे मिलने जाते थे, उनकी संख्या तत्कालीन बड़े लाट और वायसराय से मिलने-वालों से अधिक होती थी।

'नीलदर्पण' के लिखने का कारण 'कस्यचित् पथिकस्य' 'भूमिका' में दीनबन्धु ने दिया है। परिशिष्ट में इसके बारे में कुछ और बातें हमने दी हैं।

'नीलदर्पण' किसी सच्ची घटना को लेकर लिखा गया था कि नहीं, यह प्रश्न स्वाभाविक है। इसका यथासाध्य उत्तर परिशिष्ट में

मिलेगा। इसके बारे में वहाँ जो कुछ लिखा है उसमें हम दीनबन्धु की मृत्यु के बाद 'भारत-संस्कारण' (७ नवम्बर १८७३) के सम्पादकीय से नीचे लिखी बात जोड़ देना चाहते हैं––

नीलहों द्वारा अत्याचारित निराश्रय प्रजा के लिए उन्होंने जो कुछ किया है, उसके लिए वंगभूमि उनकी सदा कृतज्ञ रहेगी। नदीया और यशोहर ज़िले के कितने ही स्थानों का भ्रमण करने के बाद नीलहों के उपद्रव के बारे में बहुत सी यथार्थ घटनाओं का उन्हें पता चला। इससे उनके हृदय को पीड़ा हुई और नीलदर्पण लिखने लगे। नदीया के अन्तर्गत गुंयातेली गाँव के मित्र परिवार की दुर्दशा नील-दर्पण के कथानक का आधार है।

'नीलदर्पण' का प्रकाशन अत्यन्त समयोपयोगी हुआ था। निदारुण अत्याचार पीड़ित किसानों के आर्तनाद से शिक्षित समाज भी दंग रह गया था। 'नीलदर्पण' में ही उनके प्रतिवाद ने वाणी का रूप लिया।

'नीलदर्पण उच्चकोटि का नाटक है या नहीं, इसके बारे में बहस का अन्त नहीं। लेकिन अभिनीति नाटक के तौर पर इसकी सफलता इस देश के नाटचमंच के इतिहास में सभी दृष्टि से अद्वितीय है। अभि-नय के बारे में कितनी ही बातें परिशिष्ट में दी गई हैं और विस्तृत विवरण के लिए ब्रजेन्द्रनाथ वन्द्योपाध्याय लिखित 'वंगीय नाटच-शालार इतिहास' (तृतीय संस्करण, पृ० ९२–१०४) देखना चाहिए। 'शास्ति कि शान्ति' नाटक (१९०८) के उत्सर्गपत्र में गिरिशचन्द्र घोष ने दीनबन्धु के प्रति अपनी कृतज्ञता इन शब्दों में स्वीकार की है––

नाटचगुरु स्वर्गीय दीनबन्धु मित्र
महाशय श्रीचरणेषु––

वंगे रंगालय स्थापनेर जन्य महाशय कर्म्म क्षेत्रे आसियाछिलेन। . . . जे समये 'सधवार एकादशी' अभिनय हय सेइ समय धनाढ्य व्यक्तिर

साहाय्य व्यतीत नाटकाभिनय करा एक प्रकार असम्भव हइत; कारण परिच्छद प्रभृतिर जे रूप विपुल व्यय हइत, ताहा निर्व्वाह करा साधारणेर साध्यातीत छिल। किन्तु आपनार समाजचित्र 'सधवार एकादशी' ते अर्थ व्ययेर प्रयोजन हय नाइ। से जन्य सम्पत्तिहीन युवक वृन्द मिलिया 'सधवार एकादशी' करिते सक्षम हय। महाशयेर नाटक यदि ना थाकित, एइ सकल युवक मिलिया 'न्यासान्याल थियेटर' स्थापन करिते साहस करित ना। सेइ निमित्त आपनाके रंगालय-स्रष्टा बलिया नमस्कार करि।"

दीनबन्धु उन्नसवीं सदी के उत्तरार्द्ध के मधुसूदन-वंकिम के युग की नवजाग्रत जातीय चेतना और प्रतिभा के अन्यतम श्रेष्ठ प्रतिनिधि थे। यूरोपीय और विशेष कर के अँगरेजी साहित्य से प्रेरणा और आदर्श लेकर उसे युग के अनुकूल बना कर उन्होंने बँगला साहित्य के नवयुग का प्रारंभ किया था।

उन्नीसवीं सदी के पूर्वार्द्ध में संस्कृति और साहित्य में जो उथल-पुथल पैदा हुई थी, उसके बारे में कुछ बातों का जानना आवश्यक है। १८१७ में हिन्दू कालेज की स्थापना से अँगरेज़ी शिक्षा का प्रचार बढ़ने लगा। इस कालेज के नाम और काम में कोई मेल नहीं बैठता क्योंकि बहुत दिनों तक उसकी पाठ्यतालिका में प्राच्य भाषा और साहित्य का नामोनिशान भी नहीं था। आगे चल कर मेकाले की मनमोहक नीति का पोषक जातीय संस्कृति से सम्बन्धहीन यह जातीय कालेज हुआ था। यहाँ युक्तिवादी तरुण शिक्षक डिरोज़िओ[1] के पढ़ाये विद्यार्थी आगे चल कर समाज के कितने ही क्षेत्रों के नेता बने। इस काल में परस्पर युक्त लेकिन साथ ही विछिन्न तीन धाराएँ मिलती हैं। एक ओर डिरोज़िओ के विद्यार्थी थे जो प्राचीन विचार, धर्म और समाज को अस्वीकार कर अपने को सत्य का मित्र और मिथ्या का शत्रु कहते थे। दूसरी ओर सामान्य रूप से राम मोहन राय और आगे चल कर

---

१. हेनरी लुइ विवियन डिरोज़िओ (१८०९-३१)

देवेन्द्रनाथ ठाकुर के अनुगामी जो हिन्दू धर्म में सुधार करना और तर्क द्वारा धर्म-समन्वय करना चाहते थे। इन दोनों की विरोधी राधाकान्त देव और भवानीचरण वन्द्योपाध्याय की 'धर्म सभा' थी। यह सभा जो कुछ प्राचीन है उसी से चिपकी रहना चाहती थी। इसी समय पादरी डफ और डियाल्ट्री का कट्टर मिशनरी मनोभाव के साथ उदय हुआ। डफ के प्रभाव में कृष्णमोहन वन्द्योपाध्याय (१८३२) और डियाल्ट्री के प्रभाव में मधुसूदन दत्त (१८४३) ईसाई बनाये गये।

इस काल को पथ की खोज का काल कहा जा सकता है। शिक्षा, समाज, साहित्य, धर्म, सभी क्षेत्रों में नवलब्ध पश्चिमी विद्या और बुद्धि के प्रयोग द्वारा सुधार के लिए प्रबल आग्रह देखा जाता है। इस युग में साहित्य-सृजन का प्रयास करने वाले राममोहन, भवानीचरण, कृष्णमोहन, ईश्वरचन्द्र विद्यासागर, प्यारीचाँद स्मरणीय पथ-प्रदर्शक हैं, युग-मनीषा के निर्देशक हैं। अनुकरण और उपकरण-संग्रह, या प्रयोग-परीक्षा और अभ्यास के तौर पर इनका प्रयास प्रशंसनीय होने पर भी, साहित्य तब भी शिल्प-परीक्षागार का शिक्षार्थी ही था।

डिरोज़िओ की बहुत कम अवस्था में मृत्यु के उपरान्त डी० एल० रिचर्डसन जैसे साहित्य-रसिक अध्यापक के प्रभाव में हिन्दू कालेज के विद्यार्थियों ने अँगरेज़ी साहित्य से बृहत्तर और घनिष्टतम परिचय प्राप्त किया। उस साहित्य के ऐश्वर्य और वैचित्र्य ने नवीन बंगाल की सुप्त साहित्यिक प्रतिभा को केवल अनुकरण, उपकरण संग्रह के लिए ही नहीं, उसके मर्म की गहराई का अनुभव करके बँगला साहित्य में प्रतिफलित करने के लिए झकझोर कर प्रेरित किया। यही मधुसूदन-वंकिम-दीनबन्धु बिहारीलाल के युग की विशेषता और कृतित्व है।

अब पाश्चात्य आदर्श के प्रति असीम विश्वास के साथ ही देशीय आदर्श के प्रति ममता और उसकी रक्षा का आग्रह भी दीख पड़ा। स्वजाति और स्वदेश में आत्मप्रतिष्ठित होने की बेचैनी और निश्चित प्रयास ने उस युग के साहित्यकारों को विशेषरूप से प्रेरित किया।

इन्होंने पाश्चात्य मानवतावाद (Humanism) के आदर्श को देशी साँचे में ढाला। इस आदर्श का मूल सूत्र है––मनुष्य का मनुष्यत्व बोध, उसके जीवन के रहस्य के प्रति श्रद्धा, स्वस्थ सहज जीवन-प्रीति। पारलौकिकता नहीं, इहलौकिकता, देवता का महात्म्य-कीर्त्तन नहीं, मनुष्य में ही देवत्व की खोज, अमरता की 'अदृष्ट' लीला और उत्कर्ष में नहीं, मरणशील जीवन की प्रत्यक्ष संभावना और महिमा में विश्वास इत्यादि। पाश्चात्य साहित्य के इस नव मानवीय आदर्श की उदारता और इहकाल के जीवन से प्रेम ने जीवन के कामों और साहित्य में नई प्रेरणा उत्पन्न की। सती प्रथा का खात्मा, विधवा विवाह, कुलीन-प्रथा विरोधी आन्दोलन आदि इसी के फल हैं। साहित्य में भी इस आदर्श ने वस्तुगत दृष्टि और कल्पना को नए रूप और शैली में विकसित किया था।

वंकिमचन्द्र ने लिखा है कि १८५९-६० बंगला साहित्य में चिर-स्मरणीय है, क्योंकि यह नवीन और प्राचीन का सन्धि-स्थल है। प्राचीन धारा के अन्तिम प्रतिनिधि ईश्वर गुप्त अस्तमित हुए (१८५९) और मधुसूदन नवोदित हुए। १८६० में 'तिलोत्तमा' और १८६१ में 'व्रजांगना' प्रकाशित हुई। रवि बाबू के गुरु कवि बिहारीलाल का 'स्वप्न-दर्शन', और 'संगीतशतक' क्रमशः १८५८ और १८६२ में निकला। १८५८ से १८६२ के बीच गद्य के निम्नलिखित ग्रंथ प्रकाशित हुए––

१८५८––प्यारीचाँद मित्र लिखित 'आलालेर घरेर दुलाल', रामनारायण तर्करत्न की 'रत्नावली', कालिप्रसन्न सिंह की 'सावित्री-सत्यवान।'

१८५९––मधुसूदन की 'शर्म्मिष्ठा', प्यारीचाँद की 'मद खावा बड़ दाय' और कालिप्रसन्न की 'मालती माधव।'

१८६०––ईश्वरचन्द्र का 'सीतार वनवास', दीनबन्धु का 'नीलदर्पण', राजेन्द्रलाल मित्र का 'शिल्पिक दर्शन', मधुसूदन का 'पद्मावती', 'एकेइ कि वले सभ्यता' और 'बुड़ो शालिकेर घाड़े रों।'

१८६२—कालिप्रसन्न सिंह का 'हुतोम प्याँचार नक्शा' प्रथम भाग।

इन रचनाओं से पता चलता है कि गद्य रीति की निश्चयता नहीं थी, उसका अपना रूप वहीं बना था। एक ओर असाधु-साधु भाषा चल रही थी और दूसरी ओर अनगढ़ चलती भाषा का प्रचार हो रहा था। इसी से पता चलेगा कि दीनबन्धु के आविर्भाव के समय गद्य की समस्या कितनी जटिल थी। लेकिन जीवन और जगत् के बारे में जो विस्मय और श्रद्धा उस समय उत्पन्न हुई थी, उसी की प्रेरणा से साहित्य स्रष्टाओं ने इस समस्या का समाधान ढूँढ़ निकाला। इसमें दीनबन्धु की देन कुछ कम नहीं थी।

दीनबन्धु प्रधानतः हास्यरस के कवि थे। मगर उनका पहिला नाटक 'नीलदर्पण' हास्य के लिए नहीं लिखा गया था। यह नीलहों के अत्याचार की कहानी मात्र नहीं है, इसमें ग्रामीण जीवन के रोज़मर्रा के दुःख-दर्द, उसकी यथार्थ अनुभूति, और संवेदना और संघर्ष का चित्र अंकित है। इस दृष्टि से इसका स्थायी साहित्यिक मूल्य कुछ कम नहीं है। कितने ही सामाजिक और राजनीतिक अत्याचारों के विरोध में लिखे गये अनगिनत नाटक बिसार दिये गए, मगर 'नीलदर्पण' का स्मरणीय होना उपर्युक्त सत्य को ही बताता है।

उच्च सरकारी कर्मचारी दीनबन्धु का स्वजातिवात्सल्य आन्तरिक था। उनका युग उथल-पुथल के साथ ही सृजन का युग भी था। नवीन आदर्श के संघर्ष में पुराने आदर्श चकनाचूर होते जा रहे थे, कुप्रथाओं के साथ सुप्रथाएँ भी बही जा रही थीं, नयी कुप्रथाओं की आमद के साथ जाति के लिए गर्व और गौरव की वस्तुएँ भी नवीन बंगाल के युवक आसानी से खोते जा रहे थे। ऐसे समय में ग़लती समझाने के लिए केवल आदर्श को प्रतिष्ठित करना ही नहीं, प्रत्यक्ष जीवन की हास्यास्पद दुर्बलताओं के आईने में अपना मुँह देखने की भी जरूरत थी। इसी लिए दीनबन्धु को 'नवीन तपस्विनी' (१८६३), 'बिये पागला बुड़ो' (१८६६), 'सधवार एकादशी' (१८६६), 'लीलावती'

(१८६७), 'जमाई-बारिक' (१८७२) और 'कमले कामिनी' (१८७३) नाटक लिखने पड़े।

प्रसंगवशात् यहां एक बात का चर्चा करता हूं।

श्री जवारह लाल नेहरू ने ७ दिसम्बर १९३२ में एक ख़त लिखा था—"In 1872 a Bengali, Bankim Chandra Chatterjee, wrote a novel called Anand Math.

"I might mention here that a dozen years before Anand Math, a Bengali poem had come out which created a stir. This was called Nil-Darpan—The mirror of indigo. It gave a very painful account of the Bengal peasantry under the plantation system". Glimpses of World History, (vol. 2, p. 687–688. Allahabad, 1935.)

श्री नेहरू ने आनन्द मठ की प्रकाशन तिथि गलत लिखी है। १८८२ में यह पुस्तक छपी थी। इसके २२ वर्ष पहिले 'नीलदर्पण' नाटक प्रकाशित हुआ था। यह कविता नहीं नाटक था।

लिखने के तीस और छपने के सत्ताइस वर्षों के बाद इन पंक्तियों के लेखक के प्रयत्न से उपर्युक्त पुस्तक की यह ग़लती सुधार दी गई। बँगला के अतिरिक्त जिन भाषाओं में इसका तर्जुमा हुआ है वहाँ यह ग़लती ज्यों की त्यों बनी हुई है। इस पुस्तक की कई दर्जन तथ्यगत ग़लतियों का ज़िक्र यहाँ अप्रासंगिक होगा।

हिन्दुस्तान की सभी संस्कृतियों और साहित्यों का परिचय प्राप्त करना आसान काम नहीं है। ऊपर की ग़लती से हमें यही सबक़ लेना चाहिए कि भारतीय भाषाओं के सत्साहित्य का देश की दूसरी भाषाओं में जितना भी अनुवाद हो उतना ही हमारा कल्याण होगा।

दीनबन्धु के असाधारण सामाजिक अनुभव, प्रत्यक्ष अनुभूति, मनुष्य में अनन्त विश्वास और उससे प्रेम, उदार और हास्य रस की शक्ति नाटचकार के लिए वरदान सिद्ध हुए थे। ऐसे नाटचकार की आवश्यकता आज भी है और बहुत दिनों तक रहेगी।

'नीलदर्पण' के अलावा बँगला में दीनेन्द्रकुमार राय ने क़रीब पचास साल पहिले इसी विषय पर एक विशाल उपन्यास भी लिखा था। इसके अलावा बँगला या देश की किसी दूसरी भाषा में नील पर कुछ भी नहीं मिलता।

१९६० में 'नीलदर्पण' की शतवार्षिकी के अवसर प्रकाशित कराने के लिए मैंने इसका तर्जुमा किया, मगर समय पर इसका छपना संभव न हुआ और वर्षों तक यह एक देहलवी प्रकाशक के यहाँ पड़ा रहा। बाद में श्रीराधेनाथ चोपड़ा के प्रयत्न से इसका उद्धार हुआ और भाई श्रीकृष्ण दास ने उसे मित्र प्रकाशन की ओर से प्रकाशित कराने की व्यवस्था की। इसके लिए इन मित्रों का आभारी हूँ। पांडुलिपि की प्रेस कापी तैयार करने में श्री महेशदास भूँधड़ा की सहायता स्वीकार करता हूँ। श्री शैलेन्द्रनाथ मुखर्जी ने 'नीलदर्पण' का एक पुराना संस्करण दिया जिससे चित्र लिये गये हैं। एतदर्थ उनका कृतज्ञ हूँ।

नील इतिहास की चीज़ बन गया है। नील तथा 'नीलदर्पण' की पृष्ठभूमि सम्बन्धी जो सामग्री परिशिष्ट में दी गयी है, उम्मीद करता हूँ, उससे पाठकों को सुभीता होगा।

मैं साहित्य का विद्यार्थी नहीं रहा। कविता आती ही नहीं। इसीलिए गानों को मूल में देकर उनका अर्थ दे दिया है। कुल मिलाकर 'नीलदर्पण' का हिन्दी संस्करण कैसा बना है, इसका फ़ैसला पाठक करेंगे।

—महादेव साहा

एशियाटिक सोसाइटी,
कलकत्ता—१६

दीनबन्धु मित्र

अनुक्रम

भूमिका

नीलकर निकर के करों में 'नीलदर्पण' अर्पण करता हूँ। अब वे निज-निज मुखसंदर्शनपूर्वक उनके ललाट पर विराजमान स्वार्थपरता-कलंक-तिलक विमोचन करके उसके बदले परोपकार-श्वेत चन्दन धारण करें, तभी मेरा परिश्रम सफल, निराश्रय प्रजाव्रज का मंगल और विलायत की लाज रहेगी। हे नीलकरगण ! तुम लोगों के नृशंस व्यवहार से प्रातः-स्मरणीय सिडनी, हावर्ड, हाल आदि महानुभाव द्वारा अलंकृत अँगरेजों के कुल में कलंक लगा है। तुम लोगों की धन-लिप्सा क्या इतनी बलवती हैं कि तुम अकिंचित्कर धनानुरोध से अँगरेज़ जाति के बहुकालार्जित विमल यशस्तामरस में कीट की भाँति छेद बनाने के लिए आमादा हो गए हो ? आजकल तुम लोग जो सातिशय अत्याचार से विपुल अर्थ प्राप्त कर रहे हो उसका परिहार करो, तो अनाथ प्रजागण सपरिवार कालातिपात कर सकेंगे। तुमलोग इस समय दस रुपए खर्च करके सौ रुपए का माल ले रहे हो इससे प्रजापुंज को जो क्लेश हो रहा है उसे तुम लोग भलीभाँति जानते हो, केवल धनलाभपरतंत्र होकर उसे प्रकट नहीं करना चाहते। तुम लोग कहते हो कि तुममें कोई-कोई विद्यादान के लिए धन वितरण करते हैं और अवसर पड़ने पर दवा देते हैं। यह बात सत्य हो भी सकती है; किन्तु विद्यादान दुधार गाय मार कर जूता दान करने से अधिक घृणित है और दवा दोनों कालकूट के कुंभ को क्षीर से ढँकने के बराबर है। कोड़े की मार के बाद थोड़ा-सा तारपीन का तेल डाल देना ही अगर दवा-खाना बनाना है तो कहना पड़ेगा, कि तुम्हारी हरेक कोठी में औषधालय है। दोनों दैनिक समाचार पत्रों के सम्पादक तुम्हारी तारीफ़ से अपने पत्रों को भर रहे हैं, इससे दूसरे जो कुछ भी सोचें लेकिन तुम्हारे मन में कभी भी आनन्द नहीं उत्पन्न हो सकता क्योंकि, तुम लोग उनके इस काम के कारणों को भली-भाँति जानते हो। चाँदी की कैसी आश्चर्यजनक आकर्षक शक्ति

होती है ! चाँदी के तीस टुकड़ों के लिए अवज्ञास्पद जुडास ने ईसाई-धर्म-प्रचारक महात्मा ईसा को कराल पाइलट के हाथों में सौंप दिया था। सम्पादक-द्वय हज़ार टुकड़ों के वश होकर लाचार दीन प्रजा को तुम्हारे चंगुल में झोंक देंगे, इसमें आश्चर्य की कौन-सी बात है ? किन्तु 'चक्रवत् परिवर्त्तन्ते दुःखानि च सुखानि च !' प्रजावृन्दके सुख सूर्योदय की संभावना दिखाई पड़ रही है। दासी से सन्तान को दूध पिलाना अवैध समझ कर दयाशीला प्रजा-जननी महारानी विक्टोरिया प्रजा को अपनी गोद में लेकर दूध पिला रही हैं। सुधीर सुविज्ञ साहसी उदारचरित्र कैनिंग महोदय गवर्नर जेनरल बने हैं। प्रजा के दुःख में दुःखी, प्रजा के सुख में सुखी, दुष्टों के दमनकर्ता, शिष्टों के पालक, न्यायपरायण ग्रांट महामति लेफ्टिनैंट गवर्नर हुए हैं और क्रमशः सत्यपरायण, विचक्षण, निरपेक्ष, इडेन, हर्सेल आदि राजकार्य परिचालकगण शतदल स्वरूप सिविल सर्विस सरोवर में विकसित हो रहे हैं। अतएव इससे स्पष्ट प्रतीत होता है कि, नीलकर दुष्टराहुग्रस्त प्रजावृन्द के असहनीय कष्ट के निवारण के लिए उपर्युक्त महानुभावगण अचिरात् सद्‌विचार रूपी सुदर्शनचक्र धारण करेंगे; इसका प्रारंभ हो गया है।

कस्यचित् पथिकस्य !

नाट्योल्लिखित व्यक्ति

पुरुष

गोलोकचन्द्र वसु	
नवीनमाधव विन्दुमाधव	गोलोकचन्द्र वसु के पुत्रद्वय
साधुचरण	पड़ोसी रैयत
राईचरण	साधुचरण का भाई
गोपीनाथ दास	दीवान
आई. आई. उड पी. पी. रोग	निलहे
असीन	
खलासी	
ताईदगीर	

मैजिस्ट्रेट, अमला, मुख्तार, डिप्टी इन्सपेक्टर, पंडित, जेल का दारोगा, डाक्टर, गोप, कविराज, चार बच्चे, लठैत, चरवाहे ।

कामिनी

सावित्री	गोलोक की स्त्री
सैरिन्ध्री	नवीन की स्त्री
सरलता	विन्धुमाधव की स्त्री
रेवती	साधुचरण की स्त्री
क्षेत्रमणि	साधु की कन्या
आदुरी	गोलोक वसु की महरी
पदी	हलवाइन

नीलदर्पण
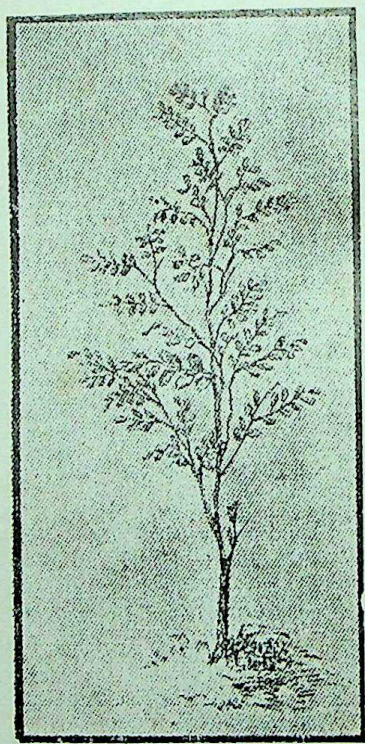
नील का पौदा

प्रथम अंक

प्रथम गर्भाङ्क

गोलकचन्द्र वसु की खत्तियों का चबूतरा
(गोलकचन्द्र वसु और साधुचरण बैठे हैं)

साधु—मैंने तभी कहा था मालिक, अब इस देश में नहीं रहा जा सकता, मगर आपने नहीं सुना। गरीब की सुने कब, बासी हो जाय तब!

गोलक—भाई, देश छोड़कर जाना क्या मुंहका कौर है? मैं यहाँ सात पुश्त से रह रहा हूँ। पिछले मालिक लोग जो ज़मीन जायदाद बना गए हैं, उससे कभी भी दूसरे की चाकरी नहीं करनी पड़ी। जितना धान पैदा होता है उससे साल भर का खर्च चल जाता है, अतिथि सेवा भी हो जाती है, और पूजा का खर्च भी निकल आता है; जितनी सरसों पाता हूँ उससे तेल का खर्च निकाल कर साठ सत्तर रुपए की बिक जाती है। यह क्या कहते हो? मेरा स्वरपुर सोने का है, किसी बात का कष्ट नहीं है। खेत का चावल, खेत की दाल, खेत का तेल, खेत का गुड़, बगीचे की तरकारी, तालाब की मछली; ऐसे सुख की जगह छोड़ने में किसका हृदय विदीर्ण नहीं हो जाएगा? ौर कौन इस काम को असानी से कर सकता है?

साधु—अब तो यह सुख की जगह नहीं है। आपका बगीचा चला गया,

जो थोड़ी सी ज़मीन है उसका भी अब तब लगा हुआ है। ओफ़ ! साहब को पट्टा लिए तीन साल भी नहीं हुए, इसी बीच गाँव का सत्यानाश कर डाला। चौधरी के मकान की ओर तो देखा भी नहीं जाता—ओफ़ ! क्या था, क्या हो गया ! तीन साल पहले दोनों जून साठ पत्तलें बिछती थीं, दस हल थे, बैल भी चालीस-पचास होंगे। कैसा आँगन था, मानो घुड़दौड़ का मैदान—ओफ़ ! जब बरसात में होने वाले धान के बोझ की छल्लियाँ सजाता तो लगता कि चन्दन ताल में कमल के फूल खिले हुए हैं। बथान मानों पहाड़ सा था। पिछले साल बथान की मरम्मत न करा सकने के कारण वह गिर पड़ा है। धान के खेत में नील न बोने के कारण मझले-सझले दोनों भाइयों को पकड़ कर साहब बेटे ने पिछले साल कितनी बुरी तरह पीटा था ! उन्हें छुड़ा लाने में कितनी परेशानी हुई; हल-बैल बिक गए, उसी धक्के में दो चौधरियों को गाँव छोड़ देना पड़ा।

गोलक—बड़ा चौधरी अपने भाइयों को बुलाने गया था न ?

साधु—उन्होंने कहा है कि झोली लेकर भीख माँग कर खाएँगे, मगर अब गाँव में नहीं रहेंगे। बड़ा चौधरी अब अकेला पड़ गया है। दो हल रखे हैं जो नील की ज़मीन में ही जुते रहते हैं। वह भी भागने की तैयारी में है। मालिक, आप भी देश की माया छोड़िए। पिछली बार आपका धान गया है, इस बार मान जाएगा।

गोलक—मान जाने में अब बाक़ी ही क्या रह गया है ? पोखरे के चारों ओर जोत दिया है, उसमें इस बार नील बोएगा, तब औरतों का पोखरे पर जाना बन्द हुआ ! और साहब बेटे ने कहा है कि अगर पूरब वाले खेतों में नील नहीं बोता हूँ तो वह नवीन माधव को सात कोठियों का पानी पिलाएगा।

साधु—बड़े बाबू कोठी पर गए हैं न ?

गोलक—शौक़ से गए हैं, प्यादा ले गया है।

साधु—बड़े बाबूजी की कैसी हिम्मत है। उस दिन साहब ने कहा, 'अगर

तुम अमीन खलासी की बात नहीं सुनते, और निशान लगाई ज़मीन में नील नहीं बोते, तो तुम्हारा घर खोद कर वेत्रावती के पानी में फेंकवा दूँगा, और तुम्हें कोठी के गोदाम में धान चबवाऊँगा।' इस पर बड़े बाबू ने कहा, "हमारे पिछले साल के पचास बीघे नील का दाम चुकता नहीं हुआ। इस साल एक बीघा भी नील नहीं बोऊँगा, इसके लिए प्राणों की बाज़ी लगा दूँगा, घर की क्या बिसात!'

गोलक—यह कहने के सिवा चारा ही क्या है। देखो, पचास बीघे धान होता तो मुझे गृहस्थी की क्या कोई फ़िक्र रहती। इसलिए नील का दाम चुकता कर देता तो अनेक कष्टों से छुटकारा मिलता।

(नवीन माधव का प्रवेश)

क्यों भैया, क्या कर आए?

नवीन—जी, माँ के कष्ट की बात सोचकर कालसर्प गोद के बच्चे को काटने में कहीं सकुचाता है? मैंने अनेक स्तुति गाई, लेकिन उन्होंने कुछ भी नहीं सुना। साहब की वही बातें; वे कहते हैं पचास रुपए लेकर साठ बीघे नील की लिखा-पढ़ी कर दो, बाद में दोनों सालों का हिसाब चुकता कर दिया जाएगा।

गोलक—साठ बीघे नील बोया जाय तो दूसरी फ़सल में हाथ लगाने की फ़ुरसत नहीं मिलेगी। अन्न के बिना ही मर जाना पड़ेगा।

नवीन—मैंने कहा, साहब, हमारे आदमी, हल, बैल, सभी को अपनी नील की जमीन में लगा रखिए, हमें सिर्फ़ साल भर का खाना दें, हम तनख्वाह नहीं माँगते। इस पर मजाक करते हुए बोले, 'तुम लोग तो यवन का भात नहीं खाता!'

साधु—जो लोग पेट पर चाकरी करते हैं वे भी हम लोगों से सुखी हैं।

गोलक—हल एक तरह से छोड़ दिया है, फिर भी तो नील से पिण्ड नहीं छूटता। इस तरह पीछे पड़ने से लाभ ही क्या है? साहब से झगड़ा करना तो सम्भव नहीं है, बाँध कर मारे सो भी अच्छा, इसलिए बोना ही पड़ेगा।

(आदुरी का प्रवेश)

आदुरी—मालकिन बक रही हैं, दिन कितना चढ़ आया है, आप लोग नहाएँगे-खाएँगे नहीं ? भात सूख कर चावल बना जा रहा है ।

साधु--(खड़ा होकर) मालिक, इसकी कोई व्यवस्था कीजिए, नहीं तो मैं मारा जाऊँगा । डेढ़ हल से नौ बीघे नील देना पड़ा तो हाँड़ी छींके पर चली जाएगी, मैं चलूँ, मालिक प्रणाम, बड़े बाबू, नमस्कार !

(साधुचरण का प्रस्थान)

गोलक—भगवान इस घर में रहने और भोजन करने देगा, ऐसा नहीं लगता । जाओ बेटा, नहाओ ।

(सब का प्रस्थान)

अंक १

द्वितीय गर्भाङ्क

साधुचरण का घर

(हल लेकर राईचरण का प्रवेश)

राई--(हल रख कर) अमीन साला मानों शेर है। बाप रे! मेरी ओर किस तरह लपका था! मैंने समझा कि मुझे खा जाएगा। साले ने किसी भी तरह नहीं सुना, ज़बर्दस्ती निशान लगा ही गया। साँपोलतला की पाँच बीघा ज़मीन अगर नील के लिए ही चली गई तो मैं बीबी-बच्चों को क्या खिलाऊँगा? रो-धोकर देखूंगा; अगर छुट्टी नहीं मिली तो हम देश छोड़कर चले जाएँगे।

(क्षेत्रमणि का प्रवेश)

बड़े भैया घर लौटे हैं क्या?

क्षेत्र--पिता जी बाबुओं के घर गए हैं, बस आते ही होंगे, अब देर नहीं है। चाची को बुलाने नहीं जाओगे? तुम बक क्या रहे हो?

राई—बक रहा हूँ अपना सिर। थोड़ा पानी लाओ तो पीऊँ, प्यास से छाती फटी जाती है।...साले से इतना कहा, कुछ भी नहीं सुना।

(साधुचरण का प्रवेश और क्षेत्रमणि का प्रस्थान)

साधु--राईचरण, तू इतने सबेरे घर कैसे आ गया?

राई—बड़े भैया, अमीन साले ने साँपोलतला की ज़मीन में निशान लगा दिया है। क्या खाऊँगा, साल कैसे कटेगा? अहा, ज़मीन नहीं है, सोना है। एक कोने की फ़सल से महाजन का देना-पावना चुका देता था। क्या खाऊँगा, बच्चों को क्या खिलाऊँगा? इतना बड़ा परिवार भूखों मर जाएगा। सबेरा होते ही दो बिस्वा की उपज के बराबर चावल का खर्च है; बिना खाए मर जाऊँगा,

मेरी फूटी तक़दीर; गोरों की नील ने क्या कर डाला ?

साधु--इन्हीं कुछ बीघे ज़मीन के बल पर रहना था, अगर वही चली गई तो यहाँ रह कर क्या करूँगा और जिस दो-एक बीघे ज़मीन में नोना लग गया है उसमें कुछ भी नहीं पैदा होता। और नील की ज़मीन में हल लेकर पड़ा रहूँगा तो उस ज़मीन को साफ़ कैसे करूँगा ? तू रो मत, कल हल-बैल बेच गाँव-घर को लात मार कर वसन्त बाबू की जमींदारी में भाग जाऊँगा ।

(क्षेत्रमणि और रेवती का जल लेकर प्रवेश)

पानी पी, पानी पी, डर किस बात का ? जिसने प्राण दिया है वही आहार देगा। तो तू अमीन को क्या कह आया ?

राई--मैं क्या कहूँगा, ज़मीन में निशान लगाने लगा। मेरी छाती में मानो हँसुए से काट कर आग लगाने लगा। मैंने पैर पकड़े, रुपए देने चाहे, लेकिन एक न सुनी। बोला, 'जा अपने बड़े बाबू के पास जा।' मैं फ़ौजदारी करूँगा कह कर धमका आया हूँ। (अमीन को दूर ही देखकर) वह देखो सला आ रहा है, प्यादे संग लाया है, गर्दन पकड़ कर ले जाएगा।

(अमीन और दो प्यादों का प्रवेश)

अमीन--बाँध, राई साले को बाँध !

(प्यादों का राईचरण को बाँधना)

रेवती--हाय मेरी माँ, यह क्या, अजी, बाँधते क्यों हो ? सत्यानाश हो गया ! सत्यानाश हो गया ! (साधु के प्रति) तुम खड़े देख क्या रहे हो ? बाबुओं के घर जाओ, बड़े बाबू को बुला लाओ।

अमीन--(साधु के प्रति) तू कहाँ जाएगा ? तुझे भी जाना होगा। पेशगी लेना राई का काम नहीं है। तू लिखना पढ़ना जानता है, तुझे बही में दस्तख़त बना आना होगा।

साधु--अमीन महाशय, क्या इसी को नील की पेशगी कहते हो ? इसे नील की मार कहना क्या अच्छा नहीं होगा ? हाय मेरी क़िस्मत, तू मेरे साथ है, जिसके डर से भाग आया फिर उसी के पल्ले पड़ा,

पट्टे के पहले यह तो रामराज्य था...!

अमीन—(**क्षेत्रमणि की ओर देखकर, स्वगत**) यह छोकरी तो बुरी नहीं है। छोटा साहब ऐसा माल औंधे मुँह लेगा—अपनी बहन दे कर जो बड़ी पेशकारी नहीं मिली वह इसे देकर लूंगा; माल अच्छा है, देखा जाय।

रेवती—क्षेत्र, बेटी तू घर के अन्दर जा।

(**क्षेत्रमणि का प्रस्थान**)

अमीन—चलो साधु, इसी वक्त मान-इज्ज़त बचाकर कोठी चलो।

(**जाने के लिए आगे बढ़ना**)

रेवती—उसने जो ज़रा पीने के लिए पानी माँगा, अरे अमीन जी, तुम लोगों के क्या बीवी-बच्चे नहीं हैं; सिर्फ़ हल और यही मारपीट ही है! अरे दैया, यह तो चढ़ती उम्र का लड़का है, वह तो इस बीच दो बार खाता है, बिना खाए साहब की कोठी पर कैसे जायगा, बहुत दूर है। दोहाई साहब की, उसे चार कौर खिला कर ले जाओ। —ओफ़, बीवी-बच्चे के लिए बेहाल है, अभी भी आँखों से आँसू बह रहा है, मुँह सूख गया है—क्या करूँ; कैसे सत्यानाशी देश में आया, धन जन से मारा गया, हाय, हाय, धन जन से मारा गया!

(**रोना**)

अमीन—अरी छिनाल, अपना नकियाना अभी रहने दे, पानी देना हो तो दे, नहीं तो ऐसे ही ले जाऊँ।

(**राईचरण का पानी पीना और सभी का जाना**)

१

तृतीय गर्भाङ्क

बेगूनबेड़े की कोठी—बड़े बंगले का बरामदा

(आई. आई. उड साहब और गोपीनाथ दास दीवान का प्रवेश)

गोपी—हुजूर, मैं कौन सा कसूर कर रहा हूँ, आप अपनी आँखों से ही देख रहे हैं। तड़के ही गश्त लगाना शुरू करता हूँ तो तीसरे पहर घर लौटता हूँ और भोजन के बाद ही दादनी के कागज़ात लेकर बैठता हूँ, इसमें किसी दिन दोपहर रात बीत जाती है, किसी दिन एक भी बज जाता है।

उड—तुम शाला बड़ा नालायक है। स्वरपुर, श्यामनगर, शान्तिघारा—इन तीनों गाँवों में कुछ भी दादनी नहीं हुई। श्यामचंद का बगैर तोम दुरुस्त नहीं होगा।

गोपी—धर्मावतार, अधीन हुजूर का नौकर है, आपने कृपा करके पेशकारी से दीवानी दी है। हुजूर मालिक हैं, मारना चाहें तो मार भी सकते हैं, काट डालना चाहें तो काट भी सकते हैं। इस कोठी के कई प्रबल शत्रु बन गए हैं, उनको दुरुस्त किए बग़ैर नील का मंगल होना कठिन है।

उड—मुझको मालूम नहीं होने से कैसे दुरुस्त कर सकता है? रुपया, घोड़ा, लठैत, बल्लमवाला हमारा बहुत है, इससे दुरुस्त नहीं हो सकता? पहले वाला दीवान मुझको दुश्मन का बात बताता था।—तुम देखा नहीं, हम बज्जात लोगों को कोड़ा लगाया है, गाय छीन लाया है, जोरू क़ैद किया है, जोरू क़ैद करने से शाला लोग बहुत दुरुस्त होता है। बज्जाती का बात हम कुछ सुना नहीं—तुम बेटा नालायक हमको कुछ बोला नहीं; तुम शाला बड़ा नालायक है। देवानी

काम कायेटका है नहीं बाबा—तुम को जूता मार के निकाल देंगे, हम एक केवट आदमी को ये काम देगा।

गोपी—धर्मावतार, यद्यपि बन्दा जात में कायस्थ है, मगर काम में केवट है, केवट की तरह ही काम कर दिखा रहा है। मुल्लों के धान की ज़मीन तोड़ कर नील बोने के लिए और गोलक बोस की सात पुश्त के लखराज बगीचे और राजा के ज़माने की ज़मीन निकाल लेने के लिए मैंने जो काम किए हैं, उन्हें केवट क्या, चमार भी नहीं कर सकता; मेरी तक़दीर खोटी है, इसीलिए इतना करने पर भी यश नहीं पाता हूँ।

उड—नवीन माधव सब रुपया चुकता माँगता है—उसको हम एक कौड़ी नहीं देगा, उसको हिसाब दुरुस्त करके रखो!—वह...बड़ा मामलाबाज है, हम देखेगा शाला किस तरह रुपया लेता है।

गोपी—धर्मावतार, वही कोठी का एक प्रधान शत्रु है। पलाशपुर का आग लगाना किसी भी तरह साबित न होता, अगर नवीन बोस उसके अन्दर नहीं होता। बेटा खुद दरखास्त का मसविदा बना लेता है, वकील-मुखतारों को ऐसी सलाह दी थी कि उसी के बल पर हाकिम की राय उलट गई। इसी बेटे के तिकड़म से पुराने दीवान को दो साल की सज़ा हो गई। मैंने मना किया था, 'नवीन बाबू, साहब के ख़िलाफ़ मत जाओ। और जब साहब ने तो तुम्हारा घर नहीं जलाया है।' इस पर बेटे ने जवाब दिया, 'ग़रीब प्रजा की रक्षा में दीक्षित हुआ हूँ, निठुर नीलहों के ज़ुल्म से अगर एक प्रजा को भी बचा सकूँ तो अपने को धन्य समझूंगा, और दीवान जी को जेल भिजवा कर बगीचे का बदला लूंगा।' बेटा जैसे पादरी बन बैठा हो। बेटा अब क्या साज़िश कर रहा है, उसका कुछ भी समझ में नहीं आता।

उड—तुम बहुत डर गया है, हम बोला कि नहीं, तुम बड़ा नालायक है, तुम से काम होगा नहीं।

गोपी—हुज़ूर ने डर जाने के लायक़ कौन सी बात देखी, जब इस पदवी में

पदार्पण किया है, तो डर, लज्जा, शर्म, मान, मर्यादा को धता बता दी है। गोहत्या, ब्रह्म हत्या, स्त्री हत्या, घर जलाना अंग का आभूषण बन गया है, और जेलखाने को सिरहाने रख कर बैठा हूँ।

उड—हम बात नहीं माँगता, काम माँगता है।

(साधुचरण, राईचरण, अमीन और प्यादों का सलाम करते हुए प्रवेश).

इस बज्जात के हाथ में रस्सी क्यों बँधी है?

गोपी—धर्मावतार, यह साधुचरण एक मातबर रैयत है, लेकिन नवीन बोस के परामर्श से नील का सत्यानाश करने पर तुला हुआ है।

साधु—धर्मावतार, नील का विरोध नहीं किया है, नहीं कर रहा हूँ और करने की ताक़त भी नहीं है। इच्छा से करूँ या अनिच्छा से करूँ, इस बार भी मैं नील बोने के लिए तैयार हूँ। लेकिन सभी बातों में संभव और असंभव बातें होती हैं; आधे अंगुल के चोंगे में आठ अंगुल बारूद ठूँसने से वह फटती ही है। मैं बहुत अदना प्रजा हूँ, डेढ़ हल हैं, जोत बीस बीघे की है, जिसमें नौ बीघे नील ने हड़प लिए हैं, इसलिए गुस्सा होना ही पड़ता है। सो अपने गुस्से से मैं खुद ही मरूँगा, हुजूर का क्या होगा?

गोपी—साहब को डर है कि कहीं तुम साहब को अपने बड़े बाबू की गोदाम में क़ैद न कर रखो।

साधु—दीवान जी महाशय, मरे पर अब चोट क्यों करते हैं। मैं अदना से भी अदना हूँ। साहब को क़ैद करूँ ऐसा प्रबल प्रतापशाली...

गोपी—साधु, अपनी टकसाली भाषा रहने दो, किसान के मुँह अच्छी नहीं लगती; बदन पर मानो कोड़े लगाती हैं...

उड—बहन......बड़ा पंडित बन रहा है!

अमीन—बेटा रैयतों को क़ानून परवाना सब समझा कर गड़बड़ी मचा रहा है। बेटे का भाई हल जोतता फिरता है, आप बोलते हैं 'प्रतापशाली'।

गोपी—कंडे बटोरने वाली का बेटा बना है सदर नायब!....धर्मावतार,

गावों में मदरसे खुलने से किसानों की खुराफ़ात बढ़ गई है।

उड—इस मामला में सरकार को दरखास्त लिखने को सभी को लिखना होगा, मदरसे वन्द कराने के वास्ते लड़ना होगा।

अमीन—बेटा मुक़दमा करना चाहता है—

उड—(साधुचरण के प्रति)—तुम शाला बड़ा बदमाश है। तुमको अगर बीस बीघा में नौ बीघा नील करने को बोला है तो तुम नया नौ बीघा में धान क्यों नहीं बोता ?

गोपी—धर्मावतार, जो नुकसान बाक़ी पड़ा हुआ है, उससे नौ बीघे क्यों बीस बीघे पट्टा कर दे सकता हूँ।

साधु—(स्वगत) हे भगवान्! कलवार का गवाह शराबी। (ज़ाहिरा) हुज़ूर जो नौ बीघे नील के लिए निशान लगा दिए गए हैं, उसे अगर कोठी के हल, बैल, और हलवाहों से जोता-बोया जाय तो नए नौ बीघे धान के लिए ले सकता हूँ। धान की ज़मीन में जितना निराना पड़ता है उसका चौगुना निराना पड़ता है नील की ज़मीन में; इसलिए अगर मुझे नौ बीघे नील बोनी पड़े तो बाक़ी ग्यारह बीघे परती रह जाएँगे। तो फिर नई ज़मीन कैसे जोतूंगा ?

उड—शाला, हरामजादा, दादनीका रुपया लेगा तुम, खेती करेगा हम; शाला बड़ा बदमाश है (जूते से ठोकर मारना)। श्यामचान्द का साथ मुलाकात होने से हरामजदगी सब भाग जाएगा।

(दीवान से श्यामचन्द लेना)

साधु—हुज़ूर, मक्खी मार कर हाथ काला कर रहे हैं, हम...!

राई—(सक्रोध) बड़े भैया, तुम चुप रहो, जो लेना चाह रहा है, लेने दो। भूख से अँतड़ियाँ हजम हो रही हैं, दिन बीत चला, नहा भी नहीं पाया, खा भी नहीं पाया।

अमीन—क्यों साले, फ़ौजदारी नहीं करोगे ?

(कान उमेठना)

राई—(हाँफते हुए) मरा, अरे मेरी माँ ! अरे मेरी माँ !

उड—ब्लडी निगर, मारो...... । (श्यामचन्द से मारना)

(नवीनमाधव का प्रवेश)

राई—बड़े बाबू, मरा । पानी पीऊँगा ! मार डाला रे ।

नवीन—धर्मावतार, इन लोगों ने अभी तक नहाया भी नहीं है, खाया भी नहीं है । इनके घर वालों ने अभी तक मुँह में पानी तक नहीं डाला है । अगर श्यामचन्द से मार-मार कर रैयतों को बरबाद कर देंगे तो आपका नील कौन बोएगा ? इसी साधुचरण ने पिछले साल कितने कष्ट से चार बीघे नील बोया था । अगर उसे इस बुरी तरह पीट कर और ज्यादा दादनी देकर फ़रार करते हैं तो आप ही का नुकसान होगा । आज इन्हें छोड़ दीजिए । मैं कल सबेरे इन्हें साथ लाकर आप जैसी आज्ञा करेंगे वैसा ही कर जाऊँगा ।

उड—दूसरा का मामला में बात करने का क्या जरूरत है ? साधु घोष, तुम्हारा राय क्या है—बोलो ? हमारा खाना का टाइम हो गया है ।

साधु—हुजूर, मेरी राय की क्या कोई ज़रूरत है ? आप खुद जाकर अच्छे-अच्छे चार बीघों में निशान लगा आए हैं, आज अमीन साहब जो बचे-खुचे अच्छे खेत थे उनमें भी निशान लगा आए हैं । मेरी राय लिए बग़ैर ज़मीन में निशान लगाया गया है, नील भी वैसा ही होगा । मैं इकरार करता हूँ कि बिना दादनी के नील तैयार कर दूंगा ।

उड—मेरा दादनी सब झूठा है—हरामजादा, बज्जात्, बेईमान...!

(श्यामचन्द कोड़ा से मारना)

नवीन—(साधुचरण की पीठ को हाथ से ढँकते हुए) हुजूर, गरीब गृहस्थ को एक दम मार डाला । ओफ् ! इसके घरों में बहुत खाने वाले हैं । इस मार से इसे महीने भर चारपाई पर पड़े रहना होगा । ओफ़ ! इसके घरवालों को कितनी तकलीफ़ हो रही है ! साहब,

आपके भी बालबच्चे हैं, अगर आपको खाने के समय कोई पकड़ ले जाए तो मेमसाहब के मन में कैसी तकलीफ़ होगी ?

उड—चुप रहो शाला, . . .पाजी, गोरूखाने वाला। यह कोई अमर नगर का मजिस्ट्रेट नहीं है कि बात बात में नालिश करेगा और कोठी का आदमी को पकड़ कर सजा देगा। इन्द्राबाद का मजिस्ट्रेट तुम मर गया है। रैस्कल—इसी दिन तुम साठ बीघा का दादनी लिख देगा तब तुमको छोड़ेगा, नहीं तो श्यामचन्द तेरा सिर पर तोड़ेगा ! इतनी गुस्ताखी ! तेरा दादनी का वास्ते दस गाँव का दादनी बन्द है।

नवीन—(लम्बी साँस छोड़ते हुए) हे, धरतीमाता ! तुम फटो, मैं उसमें प्रवेश करूँगा। ज़िन्दगी में मेरा ऐसा अपमान कभी नहीं हुआ। —हे विधाता !

गोपी—नवीन बाबू, आगे बढ़ने की ज़रूरत नहीं, आप घर जाँय।

नवीन—साधु, परमेश्वर को पुकारो, वही दीनों के रक्षक हैं।

(नवीन माधव का जाना)

उड—गुलाम का बच्चा—दीवान, दफ़्तर में ले जाओ, दस्तूर मुताबिक़ दादनी दो।

(उड का जाना)

गोपी—चलो साधु, दफ़्तर में चलो। साहब कहीं बातों में भूलता है !

बाड़ा भाते छाइ तब बाड़ा भाते छाइ।
धरेछे नीलेर यमे आर रक्षा नाइ॥

(तुम्हारी परोसी थाली में राख पड़ गई है—यानी भोजन नष्ट हो गया है—नीलहे यम ने पकड़ा है, अब बचने की सूरत नहीं।)

अंक १

चतुर्थ गर्भाङ्क

गोलक वसु का दालान

(सैरिन्ध्री बालों की रस्सी बना रही है)

सैरिन्ध्री--मैंने बालों की ऐसी रस्सी एक भी नहीं बनाई थी। छोटी बहू बड़ी भाग्यवान् है। छोटी बहू का नाम लेकर जो कुछ भी करती हूँ सभी अच्छा होता है। बालों की रस्सी मैंने काफ़ी महीन बनाई है। जैसा बाल था वैसी ही रस्सी बनी है। अहा! यह तो बाल नहीं है मानो श्यामा ठकुराइन का केश है। मुँह मानो कमल का फूल है, सदा हँसता रहता है। लोग कहते हैं, 'जिसे जो देख नहीं सकता!' मैं तो उसका कुछ भी नहीं देखती हूँ। छोटी बहू का मुँह देखते ही मेरा कलेजा जुड़ा जाता है। मेरा विपिन भी वैसा ही है जैसी कि छोटी बहू। छोटी बहू मुझे माँ की तरह प्यार करती है।

(छींका लेकर सरला का प्रवेश)

सरला--दीदी, देखो तो, मैं छींके का निचला हिस्सा बुन पाई हूँ या नहीं?
--नहीं बना है?

सैरिन्ध्री--**(अवलोकन करके)** हाँ, अब खूब बना है! अरी बहन, यहाँ तो तुमने सब डुबा दिया है, लाल के बाद ज़र्द नहीं खुलता।

सरला--मैंने तुम्हारा छींका देख कर बुना था--

सैरिन्ध्री--उसमें क्या लाल के बाद ज़र्द है?

सरला--नहीं, उसमें लाल के बाद सब्ज़ है। लेकिन मेरा सब्ज़ सूत खत्म हो गया है, इसलिए मैंने वहाँ ज़र्द लगा दिया है।

सैरिन्ध्री--तुम से बाज़ार के दिन तक सब्र नहीं किया जा सका ! तुम बहन सभी बातों में जल्दबाज़ी करती हो--कहते हैं......!

वृन्दावने आछेन हरि
इच्छा होले रइते नारि !

(हरि वृन्दावन में हैं। दर्शन की अभिलाषा होने पर विलम्ब नहीं किया जा सकता)

सरला--वाह, वाह ! मेरा क्या दोष है, बाजार में क्या मिलता है। जेठानी जी, मैंने पिछले बाज़ार के दिन महाशय से लाने के लिए कहा था, उन्हें नहीं मिला ।

सैरिन्ध्री--मगर जब वे देवर को चिट्ठी लिखेंगे, तब पाँच रंग के सूत की बात लिख देने के लिए कहूँगी ।

सरला--दीदी, इस महीने में अब कितने दिन रह गए हैं ?

सैरिन्ध्री--(हँसते हुए) जिसके जहाँ दर्द होता है उसका हाथ वहीं होता है। कालिज बन्द होने पर देवर के घर आने की बात है--इसी लिए तुम दिन गिन रही हो ! और बहन, मनकी बात खुल गई है।

सरला--सौगन्ध खाकर कहती हूँ दीदी, मैंने इसे सोचकर नहीं पूछा था !

सैरिन्ध्री--हमारा देवर कैसा चरित्रवान् है ! उसकी बातें मानों मधु से सनी हुई हैं ! वे लोग जब देवर की चिट्ठियाँ पढ़ते हैं तो मानो अमृत बरसता रहता है। बड़े भाई के प्रति ऐसी भक्ति कभी नहीं देखी थी। बड़े भाई का स्नेह भी कैसा है, बिन्दुमाधव के नाम पर मुँह से लार टपकती है, और छाती गज़ भर हो जाती है। जैसा मेरा देवर है वैसी ही मेरी छोटी देवरानी।--(सरलता का गाल दबाते हुए) सरलता तो सरलता है।--मैं क्या तम्बाकू की जट्ठी की डिबिया नहीं लाई हूँ, जट्ठी न मिलने से मानो मेरा क्षण भर भी नहीं चलता, डिबिया मानो पहले ही भूल गई हूँ।

(आदुरी का प्रवेश)

अरी आदर, तम्बाकू की जट्ठीवाली डिबिया ला तो दीदी।

आदुरी--मैं इस वक्त कहाँ ढूंढती फिरूँ ?

सैरिन्ध्री—अरे रसोईं की किवाड़ की दाहिनी ओर छान में रक्खा हुआ है ।

आदुरी—तो खत्तियों के पास से सीढ़ी ले आऊँ, नहीं तो छान तक कैसे पहुँचूंगी ?

सरला—खूब समझा !

सैरिन्ध्री—क्यों, वह तो जेठानी की बातें अच्छी तरह समझती है । तू दरवाजा किसे कहते हैं नहीं जानती, दाहिना नहीं समझती ?

आदुरी—मैं डाइन क्यों बनने गई । मेरे भाग्य का दोष है, गरीब की बेटी अगर बूढ़ी हुई और दाँत गिर पड़े तो वह डाइन बन गई । मैं सासजी से कहूँगी कि क्या मैं डाइन होने लायक बूढ़ी हो गई हूँ ।

सैरिन्ध्री—अरी मरी कहीं की ! **(उठते हुए)** छोटी बहू बैठना, मैं आ रही हूँ, विद्यासागर का बैताल सुनूंगी ।

(सैरिन्ध्री का जाना)

आदुरी—उस सागर नाड़ी में कोई ब्याह करता है, छीः !—सुना है दो दल हो गए हैं, मैं आजाद के दल में हूँ ।

सरला—क्यों आदुरी, तेरा आदमी मुझे प्यार करता था ?

आदुरी—छोटी हालदारिनी, उस खेद की बात को न उठा । उसके चेहरे की याद आते ही मेरा प्राण फफक कर रो उठता है । मुझे बहुत प्यार करता था । वह मुझे एक जोड़ा कड़ा देना चाहता था ।

'अरे मेरे प्राण ! कड़े सचमुच कितने भारी हैं ! ये मुझे अच्छे लगते हैं, मैं इन्हें पहनूंगी !'

'देखो, तो ठीक होती है कि नहीं।'—मुझे सोने नहीं देता था, झपकी आने पर कहता, 'अरी रानी, सो गई ?'

सरला—तू आदमी का नाम लेकर पुकारती थी ?

आदुरी—छी ! छी ! छी ! आदमी गुरु होता है, कहीं उसका नाम लिया जाता है ?

सरला—तो तू क्या कह कर पुकारती थी ?

आदुरी—मैं कहती थी, अजी, ओ, सुनते हो—

(सैरिन्ध्री का पुनः प्रवेश)

सैरिन्ध्री—फिर पगली को किसने चिढ़ा दिया ?

आदुरी—मेरे आदमी की सुधि दिला रही हैं, इसीलिए मैं कह रही हूँ।

सैरिन्ध्री—(हँसते हुए) छोटी बहू जैसा पागल दूसरा नहीं, इतनी बातों के रहते आदुरी के भतार की बातें खोद-खोद कर सुनी जा रही हैं।

(रेवती और क्षेत्रमणि का प्रवेश)

आ, घोष दीदी आ, तुझे आज कई दिनों से बुलवा रही हूँ लेकिन तू निकलती ही नहीं।—छोटी बहू, यह लो, तुम्हारी क्षेत्रमणि आ गई है, आज कई दिनों से मुझे पागल बना डाला है, कहती है—दीदी, घोष की क्षेत्र ससुराल से आई है, लेकिन हमारे यहाँ नहीं आई ?

रेवती—तो हम लोगों के प्रति ऐसी कृपा ! क्षेत्र, अपनी चाचियों को परनाम कर।

(क्षेत्रमणि का प्रणाम करना)

सैरिन्ध्री—अहिवाती बनो, पके बालों में सिन्दूर पहनो, हाथ का लोहा घिस जाय, बेटा खिलाती ससुराल जाओ।

आदुरी—मुझे लगता है कि छोटी हालदारिनी के मुँह से फूल झड़ते हैं, लड़की ने परनाम किया, तो मरो या ज़िन्दा रहो बोली भी नहीं।

सैरिन्ध्री—इससे क्या हुआ ? आदुरी, जा सास को बुला ला।

(आदुरी का जाना)

मुँहजली कुछ कहते कुछ कह डालती है, कुछ समझती नहीं।—कै महीने हुए ?

रेवती—इस बात को क्या दीदी ने आज भी परगट किया है ? मेरी तगदीर फूटी है, सच या झूठ कैसे जानूँ ? तुम अपनी हो इसीलिए कहती हूँ, इस महीने के और कई दिन बीत जाने पर चौथा

महीना लगेगा।

सरला—आज भी पेट नहीं निकला।

सैरिन्ध्री—यह एक और पागल है, आज अभी तीन महीने पूरे नहीं हुए, वह अभी से देख रही है कि पेट निकला या नहीं।

सरला—क्षेत्र, तुमने अपनी अलकें काट क्यों डालीं?

क्षेत्र—मेरी अलकें देख कर मेरा जेठ खफ़ा होता है। सास ने कहा, अलकें रखना कसवियों और वड़े आदमियों की लड़कियों को शोभा देता है। मैं सुन कर लाज के मारे मर गई। उसी दिन अलकें काट डालीं।

सैरिन्ध्री—छोटी बहू, जाओ दीदी, कपड़ों को उठा लाओ, साँझ हो गई।

(आदुरी का पुनः प्रवेश)

सरला—**(खड़ी होकर)** आ आदुरी, छत पर जाकर कपड़े उठा लें।

आदुरी—छोटा हालदार पहले घर तो आए, हा, हा, हा।

(सरलता का जीभ काट कर प्रस्थान)

सैरिन्ध्री—(सरोष और हँसते हुए) भाग अभागिन, सभी बातों में तमाशा।—बड़ी बहू कहाँ हैं री?

(सावित्री का प्रवेश)

यह लो आ गईं।

सावित्री—घोष की बहू आ गई है, अपनी बेटी को लाई है, अच्छा किया। —विपिन अदरा रहा था, उसे शान्त करके बाहर दे आई।

रेवती—माई जी, प्रणाम करती हूँ। क्षेत्र, अपनी नानी को प्रणाम कर।

(क्षेत्रमणि का प्रणाम करना)

सावित्री—सुखी होओ, सात बेटों की मा बनो—

(नैपथ्य में खाँसी)—बड़ी पतोहू घर में जाओ, पिता की नींद शायद टूट गई है।—अहा! भैया को क्या समय पर नहाना, समय पर खाना होता है, सोच के मारे मेरा नवीन सूख कर काँटा हो

गया है—

(नेपथ्य में आदुरी)—माँ जाओ, शायद पानी माँग रहे हैं।

सैरिन्ध्री—**(स्वगत आदुरी के प्रति)** आदुरी, देख तुझे बुला रहे हैं।

आदुरी—बुला रहे हैं मुझे लेकिन ज़रूरत है तुम्हारी।

सैरिन्ध्री—मुँह जली।—घोष दीदी, फिर किसी दिन आना।

(सैरिन्ध्री का प्रस्थान)

रेवती—माई जी, यहाँ और तो कोई नहीं है—मैं तो बड़ी मुसीबत में पड़ गई हूँ, पदी हलवाइन हमारे घर आई थी—

सावित्री—राम ! राम ! उस लुच्चिन को कोई घर में पैर रखने देता है ?—उसके लिए अब बाकी ही क्या है ? नाम लिखाने की देर है।

रेवती—माई, तो मैं करूँ क्या ? मेरा घर तो चहारदीवारी वाला नहीं है, मर्दों के खेत-खलिहान में चले जाने पर उसे चाहे घर कहो चाहे हाट कहो—नीच औरत ने कहा कि—माँ मेरे बदन में मानो कोई काँटे चुभा रहा हो—वह कहती है, घोड़े पर चढ़ कर जाते समय क्षेत्र को देख कर छोटा साहब पागल हो गया है, उसने उसे कोठी के कमरे में जाने के लिए कहा है।

आदुरी—थू ! थू ! थू ! गन्ध ! प्याज की गन्ध ! हम क्या साहब के पास जा सकती हैं ! गन्ध, गन्ध, थू ! थू ! प्याज़ की गन्ध !—मैं तो अब अकेली नहीं निकलूँगी, मैं सब कुछ सह सकती हूँ, प्याज़ की गन्ध नहीं सह सकती हूँ—थू ! थू ! गन्ध ! प्याज़ की गन्ध !

रेवती—माँ, तो क्या गरीबों का धर्म धर्म नहीं है ? बेहया कहती है, रुपया देगा, धान की ज़मीन छोड़ देगा, और दामाद को काम देगा—आग लगे रुपए में ! धरम क्या बेचने की चीज़ है, या इसकी कोई क़ीमत भी होती है ? क्या कहूँ, बेहया साहब की कुटनी है, नहीं तो लात मार कर मुँह तोड़ देती। मेरी बेटी अवाक् हो गई है, कल से चौंक चौंक उठती है।

आदुरी—माँ, ऐसी दाढ़ी है ! बात करता है तो मानो बकरा चिल्लाता है। दाढ़ी प्याज को छोड़े बगैर मैं कभी नहीं जा सकूँगी। थू ! थू ! थू ! गन्ध ! प्याज़ की गन्ध !

रेवती—माँ, सत्यानाशी कहती है, अगर मेरे साथ नहीं भेजती है तो लठैतों से पकड़वा मँगवाएगा।

सावित्री—मानो अन्धेर नगरी है !—अँगरेजों के राज में क्या कोई घर उजाड़ कर लड़की छीन ले जा सकता है ?

रेवती—माँ, किसान के घर में सब कुछ कर सकता है। मर्दों को मुसीबत में डाल कर औरतों को पकड़ते हैं, नील दादनी यह कर सकता है। निगाह पड़ी तो क्या नहीं पकड़ सकता है ? माँ, जानती नहीं हो, नयदा दादा ने राज़ीनामा नहीं देना चाहा, इसलिए उनकी मझली बहू को घर तोड़कर पकड़ ले गए।

सावित्री—कैसी अराजकता है ! साधु को यह बतलाया है ?

रेवती—नहीं, माँ, एक तो वह नील की चोट से पागल है, तिस पर इस बात को सुनने से फिर चारा नहीं रहेगा। गुस्से में आकर अपने सिर पर आप ही कुल्हाड़ी चला देगा।

सावित्री—अच्छा, मैं मालिक से यह बात साधु को कहला दूंगी, तुम्हें कुछ कहने की ज़रूरत नहीं।—कैसी सत्यानाशी बात है ! निलहे साहब सब कुछ कर सकते हैं, तो क्यों कहते हैं कि साहब बहुत न्याय करते हैं, हमारा बिन्दु साहबों को बहुत अच्छा कहता है; तो क्या ये साहब हैं, नहीं,नहीं, ये साहबों में चण्डाल हैं।

रेवती—बेहया हलवाइन एक बात और कह गई है, उसे बड़े बाबू ने शायद नहीं सुना है;—कौन-सा एक नया हुकुम जारी हुआ है, कहते हैं उससे निलहे साहब मजिस्टर साहब से मिल कर जिसको तिसको छै महीने की सज़ा दे सकेंगे। कहते हैं मालिक को इसी फन्दे में फँसाने का रास्ता तैयार कर रहे हैं।

सावित्री—(**लम्बी साँस छोड़ते हुए**)—भगौती जी की इच्छा है तो यही होगा।

रेवती—माँ, न जाने कितनी बातें कह गई, सब क्या मेरी समझ में आती हैं, इस सज़ा में अपील नहीं होगी—

आदुरी—मैं समझती हूँ कि उस दाढ़ीजार ने सज़ा बढ़ाने में शह दी है।

सावित्री—आदुरी, तुम बेटी ज़रा चुप रहो।

रेवती—कोठी की बीवी ने इस मुकदमें को खड़ा करनेके लिए मजिस्टर साहब को चिट्ठी लिखी है। कहते हैं बीबी की बात हाकिम बहुत सुनता है।

आदुरी—बीबी को मैंने देखा है, लाज-शरम छू तक नहीं गया है। मजिस्टर जिले का हाकिम है—उसके इर्द-गिर्द सिपाही—फकड़े चक्कर काटते रहते हैं। बाप रे, नाम लेने पर हाथ-पैर मानो पेट में घुस जाना चाहते हैं—इसी साहब के साथ घोड़े पर चढ़ कर घूमने आई। औरत ज़ात है, घोड़े पर चढ़ती है—केश की चाची ने घर के जेठ के साथ हँस-हँस कर बातें कीं, इसीलिए लोगों ने कितना धिक्कारा, यह तो जिले का हाकिम है।

सावित्री—तू अभागी किसी दिन डुबोएगी, देखती हूँ;—तो साँझ हो गई, घोष की बहू तुम लोग घर जाओ, दुर्गा हैं।

रेवती—जाती हूँ मां, अभी तेली के घर होकर तेल ले जाना है, तब दीया जलेगा।

(रेवती और क्षेत्रमणि का प्रस्थान)

सावित्री—सभी बातों में टाँग न अड़ाने से क्या तेरा काम नहीं चलता ?

(सरलता का सिर पर कपड़े लेकर प्रवेश)

आदुरी—यह लो धोबी की बहू कपड़े ले आई।

(सरलता का जीभ काट कर कपड़े उतार रखना)

सावित्री—धोबी की बहू क्यों होने जायगी री, मेरी सोने की बहू है, मेरी राजलक्ष्मी है। **(पीठ पर हाथ रख कर)** क्यों बेटी, तुम्हारे अलावा मेरे कपड़े लाने के लिए क्या आदमी नहीं है, तुम क्या किसी जगह क्षण भर चुप नहीं बैठ सकती हो; ऐसी पागल के गर्भ में भी तुम्हारा जन्म हुआ था।—कैसे कपड़े को फाड़

दिया ? तो लगता है तुम्हारा बदन भी छिल गया है।—
अहा ! मेरी बेटी का लाल कमल जैसा रंग है, ज़रा-सा छिल
गया है मानो खून निकल रहा है। तुम बिटिया, अंधेरे जीने से
अब इस तरह से न आना-जाना।

(सैरिन्ध्री का प्रवेश)

सैरिन्ध्री—आ, छोटी बहू घाट पर चलें।

सावित्री—जाओ बिटिया, तुम देवरानी-जेठानी अभी बेला रहते-रहते
नहा आओ।

(सब का जाना)

द्वितीय अंक

प्रथम गर्भाङ्क

बेगुनबेड़े की कोठी का गोदामघर

(तोरप तथा चार और रैयत बैठे हुए हैं)

तोराप—मार क्यों न डाले, मैं नमकहरामी नहीं कर सकूँगा—जिस बड़े बाबू के कारण जान बची, जिसके हिल्ले बचने की जगह मिली, जिस बड़े बाबू ने बैलों को बचाया, झूठी गवाही देकर उन्हीं बड़े बाबू के बापको कैद करा दूंगा? मुझसे यह कभी नहीं होगा,—जान भले ही जाए।

पहला रैयत—कुन्दे के सामने टेढ़ापन नहीं रह जाएगा। श्यामचन्द को सँभालना हँसी-मजाक नहीं है। हमारी आँखों में क्या शर्म नहीं है, या हम लोगों ने क्या बड़े बाबू का नमक नहीं खाया है?—करूँ क्या, गवाही नहीं देने से ज़िन्दा न छोड़ता। उड साहब मेरी छाती पर खड़ा हो गया था—देखो तो तभी से खून टपक रहा है,—गोरे का पैर मानो बैलों के खुर जैसा है।

दूसरा—कील जड़ा है,—साहब लोग कील जड़े जूते पहनते हैं, तू नहीं जानता।

तोराप—(दाँत किटकिटाते हुए) धत् तेरी कील की ऐसी-तैसी, लहू देखकर मेरे बदन का खून खौल रहा है। ओफ़! क्या बताऊँ, साले को अगर एक बार भतारसारी के मैदान में पा जाऊँ, थप्पड़ों से ऐसा मारूँगा, कि साले के जबड़ों को आसमान में उड़ा दूंगा, उसका गिटपिट करना निकाल दूँगा।

तीसरा—मैं बगैर खेत का किसान हूँ—दूसरे की मजूरी करके खाता हूँ। मैंने मालिक की सलाह से नील नहीं बोया, तो कहने से तो

काम नहीं चलेगा, तो मुझे गोदाम में क्यों बन्द किया।—उसके सीमन्तोन्नयन के दिन करीब आ रहे हैं, सोचा था इसी धूम में खटकर कुछ पैसे जमा करूँगा, जमा करके सीमन्तोन्नयन के समय पाँच सम्बन्धियों को बुलाऊँगा, इधर तो पाँच दिनों तक गोदाम में सड़ता रहा, फिर आन्दारबाद ठेलेगा।

दूसरा—आन्दारबाद मैं एक बार गया था—वह जो भावनापुर की कोठी है, जिस कोठी के साहब को सभी अच्छा कहते हैं—उसी साले ने मुझे एक बार फौजदारी में फँसा दिया था। उस बार मैंने कचहरी के अन्दर बहुत सारे तमाशे देखे। वाह! दुम के पास बैठे मजिस्टर साहब ने जैसे ही आवाज़ दी वैसे ही दो मुख्तार साले आ पहुँचे, इस तरह लड़ने लगे, मुझे लगा जैसे मयना के मैदान में तेली का धौला और जमादार का बुधुवा इन दोनों साँड़ों में मुठभेड़ हो गई।

तोराप—तेरा दोष क्या था? भवानीपुर का साहब तो झूठ-मूठ हंगामा नहीं मचाता है। सच्ची बात कहूँगा—घोड़े पर चढ़ूँगा। सब साले अगर उस साले की तरह होते तो सालों की इतनी बदनामी नहीं होती।

दूसरा—अब तो मारे खुशी के रहा नहीं जाता।

भाल भाल करे ग्यालाम केलोर मार काछे।
केलोर मा बले आमार जामाई संगे आछे॥

(मैंने समझा कलुआ की मां अच्छी है। पहुँचने पर उसने कहा कि मैं अपने दामाद के संग हूँ।)

अब साले को जुल्म करने का मज़ा मिलेगा। साले की गोदाम से सात रैयत निकले हैं। एक निरा बच्चा है। साले ने गाय-बछड़ों को गोदाम में भर दिया। साला इस तरह हमले करने लगा है, अरे बाप रे!

तोराप—साला भले आदमी को पाने पर खाने को दौड़ता है, मजिस्टर साहब को खदेड़ने के लिए कमेटी कर रहा है।

दूसरा—इस जिले का मजिस्टर या उस जिले का, मजिस्टर में क्या दोष पाया यह भी तो समझ में नहीं आ रहा है।

तोराप—कोठी पर खाने नहीं गया। हाकिम को मुट्ठी में करने के लिए खाना पकवाया था। हाकिम छिपता फिरा, खाने नहीं गया। वह बड़े आदमी का लड़का है, निलहे शैतानों के यहाँ क्यों जाएगा? मुझे उसकी बातें मालूम हुई हैं, ये साले विलायत की छोटी जात के हैं।

पहला—तो पहले वाला कुँवारा गवर्नर साहब कोठियों में कैसा भात खाता फिरता था? देखा नहीं, साले इकट्ठा होकर उसे दूल्हा बना कर हमारी कोठी में आए थे?

दूसरा—उसका क्या हिस्सा था?

तोराप—अरे नहीं, लाट साहब क्या नील का हिस्सा ले सकता है? वह नाम कमाने आए थे। हाल के गवर्नर साहब को खुदा बचा रखेंगे तो हम लोगों को पेट भर खाना मिलेगा और साले निलहे शैतान गर्दन पर सवार नहीं हो सकेंगे।

तीसरा—(डरते हुए) तब तो मैं मरा। इस भूत के चढ़ने पर कहते हैं जल्दी नहीं छोड़ता? बीबी यही कहती है।

तोराप—इस साले को क्यों लाए हो? यह साला सीधी बात नहीं समझ सकता है। साहबों के डर से सारे लोग गाँव छोड़ कर जाने लगे। इस पर बचोरद्दी नाना ने बनाया था—

व्याराल चोको हाँदा हेमदो।
नील कुठीर नील मेम्दो।

(बिल्ली जैसी आँखों वाला आदमी अहमक होता है। नील कोठी का नीला साहब नीला शैतान है!)

बचोरद्दी नाना अच्छी कविता बनाते थे।

दूसरा—निताई आताइ ने एक और कविता बनाई है, सुना नहीं?

जात माल्ले पादरी धरे।
भात माल्ले नील बाँदरे।।

(पादरियों ने धर्म बिगाड़ दिया है। नीलहे बन्दरों ने रोटी छीन ली है।)

तोराप—(ऊपर की बात दोहराता है)!
'जात माल्ले' यह क्या है? इससे क्या होना है?

दूसरा—जात माल्ले पादरी धरे।
भात माल्ले नील बाँदरे॥

चौथा—हाय! मेरा घर कैसा होता जा रहा है इसका कुछ भी पता नहीं चलता। मैं दूसरे गाँव की रैयत हूँ। मैं कब का स्वरपुर आया, सो बोस महाशय की सलाह में आकर दादनी को ठुकरा दी। मेरे दुधमुँहे बच्चे को बुखार हो गया, इसीलिए बोस महाशय से मिसरी लेने आया।—अहा! कैसे दयावान् थे, चेहरे पर कैसी दमक थी, कैसा अपरूप रूप देखा, मानो गजेन्द्रगामिनी जैसे बैठे हुए हैं।

तोराप—इस बार कितने बीघे पर हाथ मारा है।

चौथा—पिछली बार दस बीघा बोया था, उसका दाम देने में आधा-तीहा किया, इस बार पन्द्रह बीघे की दादनी लाद दी है; जैसा कह रहा है वैसा ही कर रहा हूँ, फिर भी बेइज्जत करने से बाज़ नहीं आता।

पहला—मैंने तो दो साल जोतकर एक बन्द जमीन में बोया, इस बार काम बना था, सरसों के लिए ही ज़मीन रख छोड़ी थी, उस दिन छोटा साहब घोड़े पर चढ़ कर आया और खड़े रहकर ज़मीन का सत्यानाश कर दिया। किसान की कहीं जान बचती है?

तोराप—यह सब अमीन साले की कारसाज़ी है। साहब को क्या सारी ज़मीन की बात मालूम है? वह साला सारी ज़मीनों को ढूंढ़ निकालता है। साला मानों पागल कुत्ते की तरह चक्कर काटता है, अच्छी ज़मीन देखी नहीं कि साहब ने सत्यानाश कर दिया। साहब को तो रुपए की कमी नहीं है। उसे तो महाजन से रुपया

नहीं काढ़ना पड़ता है। तब साला ऐसा क्यों करता है, नील बोएगा तो बो, बैल खरीद, हल बनवा, खुद नहीं जोत सकता है तो हलवाहा रख, तुझे ज़मीन की कमी क्या है, गाँव के गाँव क्यों न जोत डाल, हम लोग मुफ़्त खटने के लिए ग़ैर राज़ी नहीं हैं, ऐसा हो तो दो साल में नील की ढेर लग जाएगी; साला यह नहीं करेगा, साले को रैयतों का टेंगा बहुत अच्छा लगता है, इसीलिए उसे चूस रहा है—उसी को चूस रहा है।

(**नैपथ्य में**—हा, हा, हा, माँ, माँ, माँ)

गाजी साहब, गाजी साहब, दरगाह, तुम लोग राम का नाम लो। इसमें भूत है, चुप रह, चुप रह—

(**नैपथ्य में**—हा नील—तू हमारे सर्वनाश के लिए ही इस देश में आया था!—ओफ! यह दुर्गति तो अब नहीं सही जाती, इस 'कन्सर्न' की न जाने कितनी कोठियाँ हैं, डेढ़ महीने में चौदह कोटियों का पानी पिया, अब किस कोठी में हूँ यह भी तो नहीं जान सका; जानूँ भी तो कैसे, रात में आँख बाँध कर एक कोठी से दूसरी कोठी में ले जाते हैं; ओफ! माँ तुम कहाँ हो!)

तीसरा—राम, राम, राम, काली, काली, दुर्गा, गणेश, असुर!—

तोराप—चुप, चुप।

(**नैपथ्य में**—हाय! पाँच बीघे के हिसाब से दादनी ले लूँ तो इस नरक से छुटकारा मिले। हे मातुल, दादनी लेना ही उचित है। खबर भेजने की तो कोई सूरत नहीं देखता, कलेजा मुँह को आ गया, बोलने की शक्ति नहीं है; माँ तुम्हारा चरण डेढ़ महीने से नहीं देखा है।)

तीसरा—बीबी से जाकर कहूँगा—सुना न, सुना न, मर कर भूत हो गया फिर भी दादनी से पिण्ड नहीं छूटा।

पहला—तू ऐसा घोंघा बसन्त है—

तोराप—तुम भले आदमियों के लड़के हो। मुझे बातों से मालूम हुआ

है—परान काका मुझे कंधे पर ले सकता है, मैं झरोखे से उससे पूछूँ उसका घर कहाँ है।

पहला—तू तो मुसल्ला है।

तोराप—तब तू मेरे कन्धे पर चढ़ कर देख। **(बैठ कर)** चढ़—**(कंधे पर चढ़ना)** दीवाल पकड़ना, झरोखे के पास मुँह ले जा—**(गोपीनाथ को दूर देख कर)** चाचा उतर, चाचा उतर, गोपिया साला आ रहा है।

(पहले रैयत का जमीन पर गिरना)

(गोपीनाथ और रमाकान्त को पकड़े रोग साहब का प्रवेश)

तीसरा—दीवान साहब, इस घर में भूत है। इतनी देर तक रो रहा था।

गोपी—तुझे जैसा सिखाए दे रहा हूँ वैसा अगर नहीं बोलेगा तो तू भी उसी तरह भूत होगा। **(स्वगत रोग के प्रति)** मजूमदार के बारे में इन्हें मालूम हो गया है, इस कोठी में अब नहीं रखेंगे। उस घर में रखना ही गैरकानूनी हो गया था।

रोग—वह बात बाद में सुनी जाएगी। गैर राजी कौन है ? कौन बज्ज़ात, बदमाश है ? **(पैर की आवाज)**।

गोपी—ये सब दुरुस्त हो गए हैं। यह मुसल्ला बेटा बड़ा हरामज़ादा है, कहता है नमकहरामी नहीं कर सकूँगा।

तोराप—**(स्वगत)** बाप रे! जैसा ज़बर्दस्त लट्ठ है! फ़िलहाल तो राज़ी हो जाऊँ, बाद में जैसा जानता हूँ वैसा करूँगा। **(जाहिरा तौर से)** दुहाई साहब की, दुहाई साहब की, मैं भी सीधा हो गया हूँ।

रोग—चुप रह, सूअर का बच्चा। रामकान्त बड़ा मीठा होता है!

(रामकान्त से मारना और पैर से ठोकर लगाना।)

तोराप—अल्ला! अरी मेरी माँ, मरा! अरी मेरी माँ, मरा! परान चाचा, जरा पानी दे, बाप, बाप, बाप!

रोग—तेरे मुँह में पेशाब नहीं कर देगा ?

(जूते की ठोकर)

तोराप—मुझे जो कहोगे वही करूँगा। —दोहाई साहब की, दोहाई साहब की, खुदा की क़सम !

रोग—बहन...की हरामज़दगी दूर हो गई है। आज रात में सब को चलान दूँगा। मुख़्तार को लिखो, गवाह नहीं मिलने से कोई बाहर न जाने पावे। पेशकार साथ जाएगा—(तीसरे रैयत के प्रति) तुम रोता है काहे? **(ठोकर लगाना)**।

तीसरा—बहू तू कहाँ है, मुझे मार डाला, माँ री, बहू री, मार डाला रे, मार डाला रे, **(जमीन पर चित गिरना)**।

रोग—बहन...पगला है।

(रोग का प्रस्थान)

गोपी—क्यों तोराप बेइज्जती से पेट भर गया न—दोनों ही तो हुए।

तोराप—दीवान साहब, मुझे जरा पानी देकर बचाओ, मैं मरा, मैं मरा !

गोपी—बाप रे, नील का गोदाम क्या इन्जन का घर है, पसीना भी छूटता है, पानी भी पिलाता है, आओ, तुम सभी आओ, तुम लोगों को पानी पिला लाऊँ।

(सब का जाना)

अंक २

द्वितीय गर्भाङ्क

बिन्दुमाधव का सोने का कमरा

(हाथ में चिट्ठी लिए सरलता बैठी हैं)

सर—सरला – ललना – जीवन एल ना।
कमल – –हृदय – द्विरद – दलना।।
बड़ी आशा में निराशा हुई। प्रियतम की आगमन प्रतीक्षा में नवसलिल-शीकराकांक्षिणी चातकी की अपेक्षा भी व्याकुल हुई थी। दिन गिन रही थी, दीदी ने जो कहा था, वह तो झूठ नहीं है, मेरे एक-एक दिन एक-एक साल की तरह बीते हैं। —(**लम्बी साँस**) नाथ के आने की आशा तो निराधार हुई; अब जिस महान् कार्य में प्रवृत्त हुए हैं उसमें सफल होने पर ही उनका जीवन सार्थक है।—प्रियतम, हमारा नारी-वंश में जन्म हुआ है, हम पाँच एक उम्र की एक साथ बगीचे में नहीं जा सकती, हम नगर-भ्रमण में अक्षम हैं, हमारे लिए मंगल–सूचक–सभा–स्थापन करना संभव नहीं है, हमारे लिए कॉलेज नहीं है, कचहरी नहीं है, ब्राह्म समाज नहीं है—रमणी का मन कातर होता है, तो मन बहलाव के लिए कोई उपाय नहीं है; मन समझाए न समझे तो उसे दोष नहीं दे सकती। प्राणनाथ हमारे एकमात्र अवलम्बन हैं;—पति ही ध्यान, पति ही ज्ञान, पति ही अध्ययन, पति ही उपार्जन, पति ही सभा, पति ही समाज, पतिरत्न ही सती का सर्वस्व है। हे लिपि! तुम मेरे हृदय-वल्लभ के हाथ से आई हो, तुम्हें चूमती हूँ—(**लिपि-चुम्बन**)। तुम पर मेरे प्राण-कान्त का नाम लिखा है, तुम्हें तापित वक्ष पर धारण करती हूँ—(वक्ष

पर धारण)। अहा! प्राणनाथ के वचन अमृत-सम हैं, पत्र को जितना ही पढ़ती हूँ उतना ही मन मोहित होता है। एक बार फिर पढ़ूँ---(पढ़ना)

"प्राणों की सरला,

तुम्हारा मुखारविन्द देखने के लिए मेरा हृदय कितना व्याकुल हुआ है इसे पत्र में व्यक्त नहीं किया जा सकता। तुम्हारे चन्द्रमुख को वक्ष में धारण करके मुझे कैसा अनिर्वचनीय सुख प्राप्त होता है। सोचा था उस सुख का समय आ गया है लेकिन हर्ष में विषाद हुआ; कॉलेज बन्द हो गया है लेकिन बड़ी विपत्ति में पड़ गया हूँ; यदि परमेश्वरी की कृपा से उत्तीर्ण न हो सका तो फर मुँह नहीं दिखा सकूँगा। निलहे गोरों ने छिप-छिप कर पिता के नाम एक झूठा मुकदमा दायर किया है; उनकी विशेष चेष्टा है कि वे किसी तरह जेल भेजे जांय। दादा को यह बात विस्तारपूर्वक लिख कर मैं यहाँ पैरवी कर रहा हूँ। तुम किसी बात की चिन्ता न करना। करुणानिधान की कृपा से अवश्य ही सफल होऊँगा। प्रेयसि, मैं तुम्हारी वंग-भाषा के शेक्सपियर की बात नहीं भूला हूँ। आजकल बाज़ार में नहीं मिलती है लेकिन प्रियवयस्य बंकिम ने अपनी दी है, घर जाते वक्त ले जाऊँगा। —विधु-मुखि! लिखाई-पढ़ाई की उत्पत्ति कैसा सुख का आकर है, इतनी दूर रहकर भी तुमसे बातचीत कर रहा हूँ। अहा! माता जी अगर तुम्हारे लिखने में आपत्ति न करतीं तो तुम्हारी लिपि-सुधा का पान करके मेरा चित्त-चकोर चरितार्थ होता; इति।

तुम्हारा ही विन्दुमाधव।'

मेरा ही---इसमें मेरा पूर्ण विश्वास है। प्रियतम, तुम्हारे चरित्र को अगर दोष स्पर्श करता है तो सुचरित्र का आदर्श कौन होगा? —मैं स्वभावतः चंचल हूँ, एक जगह क्षण भर चुप नहीं बैठ पाती हूँ, इसलिए सास जी मुझे पगली की बेटी कहती हैं। अब मेरा वह चांचल्य कहाँ है? जिस जगह बैठ कर प्राणपति का पत्र खोला

है, उसी जगह एक पहर से बैठी हूँ। भात उफना कर जब फेन से ढँक जाता है तब ऊपर का हिस्सा थिरा जाता है लेकिन भीतर उबला करता है; मैं अब उसी तरह हो गई हूँ। अब मेरा वह हँसमुख चेहरा नहीं है। हास्य सुख की रमणी है, सुख के नाश होने पर हँसी का सहमरण होता है। —प्राणनाथ, तुम्हारे सफल होने पर ही सब की रक्षा होगी, तुम्हारे मुख के म्लान होने पर मुझे दसों दिशाओं में अन्धेरा दिखाई पड़ता है।—हे अबोध मन, तुम प्रबोध नहीं मानोगे? तुम्हारे अबोध होने पर पार पाया जा सकता है, तुम्हारा क्रन्दन कोई नहीं देख पाता, कोई सुन नहीं पाता; लेकिन नयन, तुम्हीं हमें लजाओगे,—(आँखें पोंछ कर) —तुम शान्त नहीं होते तो मैं घर से बाहर नहीं जा सकती—

(आदुरी का प्रवेश)

आदुरी—तुम कर क्या रही हो? बड़ी हालदारिनी घाट पर नहीं जा पा रही है; कहती है, जिसकी ओर देखती हूँ उसी का मुँह फूल कर कुप्पा हो जाता है।

सर—(लम्बी साँस छोड़ते हुए) चलो, चलें।

आदुरी—तेल में देखती हूँ अभी तक हाथ नहीं लगाया है। बाल मिट्टी में मिल रहे हैं; चिट्ठी अभी तक छोड़ी नहीं? —छोटा हालदार सारी चिट्ठियों में मेरा नाम लिख देता है।

सर—बड़े जेठ ने नहाया है?

आदुरी—बड़े हालदार तो गाँव गए, जिले में मुकदमा जो शुरू हो गया है; तुम्हारी चिट्ठी में लिखा नहीं है? मालिक जो रोने लगे।

सर—(स्वगत) प्राणनाथ, सफल न होने पर सचमुच ही मुँह नहीं दिखा पाओगे। (खुलेआम) चलो रसोई घर में जा कर तेल लगाएँ।

(दोनों का प्रस्थान)

———————

अंक २

तृतीय गर्भाङ्क

स्वरपुर--निरास्ता

(पदी हलवाइन का प्रवेश)

पदी—अमीन दाढ़ीजार ही तो देश को रसातल में ले जा रहा है। मेरी क्या यही साध है कि कच्ची उम्र की लड़कियों को साहब से पकड़वा कर अपने पैरों पर खुद ही कुल्हाड़ी मारूँ? राय ने जो इन्तज़ाम किया था उसे अगर साधु भैया मिट्टी में न मिलाते तो ज़िन्दगी भर रोटी-कपड़ा देता। ओफ़! क्षेत्रमणि का मुँह देखने से कलेजा फट जाता है! यार रक्खा है तो क्या शरीर में दया-मया नहीं रह गई है; मुझे देख कर हलवाइन बुआ कह कर पास आती है। ऐसे सोने के हिरण को माँ क्या कहीं शेर के मुँह में डाल सकती है!—छोटे साहब अब आगे नहीं बढ़ते हैं, मैं हूँ, कलीबन है; —बाप रे, कैसी घिनौनी बात है! रुपए के लिए जात-पाँत गई, जंगली का बिस्तर छूना पड़ा। लुच्चा बड़ा साहब जब मुझे पाता है पीटता है, कहता है नाक-कान काट देगा। बुड्ढा हो गया है फिर भी भतार खानेवाली का भतार औरतों को पकड़ कर गोदाम में रख सकता है, औरतों के चूतड़ पर लात मार सकता है, ऐसा पाजी आदमी तो कभी नहीं देखा। चलूँ, अमीन कलमुँहे को कह दूँ मुझसे यह नहीं होगा। मेरे लिए क्या गाँव में निकलने की सूरत है, टोले के लौण्डे, दाढ़ीजार के बेटे, मुझे देखते ही पीछे लग जाते हैं—(नैपथ्य में—गीत)

यखन ख्याते-ख्याते बसे धान काटि।
मोर मने जागे ओ तार लयान दुटि।।

(जब मैं खेत में धान काटने बैठता हूँ तो उसके दोनों नैन मेरी आँखों के सामने आ जाते हैं।)

(एक चरवाहे का प्रवेश)

चरवाहा--साहब, तुम्हारे नील के पौधे में कहते हैं कीड़े लग गए ?

पदी--तेरी माँ-बहनों के लगें, दाढ़ीजार का बेटा, माँ की गोद सूनी करो, यमलोक जाओ, कलमीघाटा जाओ--

चरवाहा--मैंने दो खुरपियाँ बनाने को दी हैं--

(एक लठैत का प्रवेश)

बाप रे! कोठी का लठैत है! (चरवाहे का तेजी से भागना)

लठैत--कमलमुखी, मिस्सी ने तो तुझे और भी खूबसूरत बना दिया है।

पदी--(लठैत की चाँदी की करधन को देख कर) तेरा चन्द्रहार बड़ा बहारदार है।

लठैत--जानती नहीं हो रानी, प्यादे की पोशाक, और नटी का भेष।

पदी--तुझसे एक काली कलोर गाय माँगी थी, तुने आज तक नहीं दी। अब तुझसे कभी कुछ नहीं माँगूँगी।

लठैत--पद्मसुखी, नाराज़ न हो। हम कल श्यामनगर लूटने जाएँगे, अगर कल काली कलोर मिल गई तो उसे अपने बथान में बँधी समझ। मैं मछली ले जाते समय तेरी दूकान पर हो कर जाऊँगा।

(लठैत का प्रस्थान)

पदी--साहबों को लूट के सिवा और कोई काम नहीं है। थोड़ा कम लें तो किसान भी ज़िन्दा रहें, और नील भी पैदा हो। श्यामनगर के मुन्शी को दस बीघा ज़मीन छोड़ने के लिए कितनी चिरौरी विनती की। 'चोर को धर्म की बातें नहीं रुचतीं।' दाढ़ीजार बड़े साहब ने कलमुँहें का मुँह जला दिया।

(मदरसे के चार बच्चों का प्रवेश)

चारों बच्चे--(बस्ता रख, ताली पीट कर)

हलवाइन! कहाँ है तेरा नील!

हलवाइन! कहाँ है तेरा नील!

हलवाइन ! कहाँ है तेरा नील !

पदी—छीः बेटा केशव, बुआ लगती हूँ, ऐसी बात नहीं कहते—

चारों बच्चे—(नाच कर)

हलवाइन ! कहाँ है तेरा नील !

पदी—छीः भैया अम्बिका, बड़ी बहन को वैसा नहीं कहते—

चारो बच्चे—(पदी हलवाइन को घेर कर नाचते हुए)

हलवाइन ! कहाँ है तेरा नील !
हलवाइन ! कहाँ है तेरा नील !
हलवाइन ! कहाँ है तेरा नील !

(नवीनमाधव का प्रवेश)

पदी—मैं तो लाज से मरी ! बड़े बाबू को मुँह दिखाया।

(घूंघट खींच कर पदी का प्रस्थान)

नवीन—दुराचारिणी, पापी। (बच्चों के प्रति) तुम लोग रास्तेपर खेल रहे हो, घर जाओ, काफ़ी देर हो गई है।

(चारो बच्चों का प्रस्थान)

अहा, नील का अत्याचार अगर बन्द हो जाय तो मैं पाँच दिनों के अन्दर इन बच्चों के पढ़ने के लिए स्कूल बनवा दूं। इस प्रदेश के इन्स्पेक्टर बाबू बड़े सज्जन हैं; विद्या होने पर आदमी कैसा सुशील होता है ! बाबूजी कम उम्र के हैं सही, लेकिन बातचीत में विलक्षण प्रवीण हैं। बाबू जी की बड़ी इच्छा है कि यहाँ एक स्कूल बन जाय। मैं भी इस मंगल कार्य में रुपए खर्च करने में कातर नहीं होऊँगा; मेरा बड़ा दालान सुन्दर विद्या मन्दिर बन सकता है; गाँव के बच्चे मेरे घर में बैठ कर विद्यार्जन करें इससे बढ़कर सुख और क्या हो सकता है ? अर्थ और परिश्रम की सार्थकता ही यही है। विन्दुमाधव इन्स्पेक्टर बाबू को साथ लाया था; विन्दुमाधव की इच्छा है कि गाँव के सभी लोग स्कूल के लिए तत्पर हों। लेकिन गाँव की दुर्दशा देखकर भैया के मन की बात मन ही में रह गई। मेरा विन्दु कैसा धीर, कैसा शान्त, कैसा

सुशील, कैसा विज्ञ है। कम उम्र की विज्ञता छोटे पौधे के फल की तरह मनोहर होती है। भैया ने चिट्ठी में जो खेद प्रकट किया है उसे पढ़ने से पत्थर का हृदय भी पिघल जाता है। निलहों का अन्तःकरण भी दहल जाता है।––घर जाने के लिए पैर नहीं उठते, कोई सूरत नहीं देखता; पाँच में से एक का भी पता नहीं लगा सका; उन्हें कहाँ ले गया है, कोई नहीं बता सकता। तोराप शायद कभी झूठ नहीं बोलेगा। बाकी चारों ने गवाही दी तो सत्यानाश हो जाएगा; विशेष करके मैं अभी तक कोई तैयारी नहीं कर पाया हूँ, तिस पर मजिस्ट्रेट साहब उड साहब के परम मित्र हैं।

(एक रैयत, फौजदारी के दो प्यादे और कोठी के ताईदगीरों का प्रवेश)

रैयत—बड़े बाबू, मेरे दोनों लड़कों को देखिए, उन्हें खिलानेवाला और कोई नहीं है। पिछले साल आठ गाड़ी नील दिया, उसका एक पैसा भी नहीं दिया, और तिस पर बाक़ी है कह कर रस्से से बाँधा है, फिर अन्दाराबाद ले जाएगा—

ताईद—नील की दादनी धोबी का निशानी है, एक बार लगने पर फिर नहीं छूटती।—तू चल, दीवान साहब के यहाँ से होकर जाना होगा। तेरे बड़े बाबू का भी ऐसा ही होगा।

रैयत—चलो चलूंगा, डरता नहीं, जेल में सड़ मरूँगा फिर भी गोरे का नील नहीं बोऊँगा। —हा विधाता, हा विधाता, कंगाल को कोई नहीं देखता––(रोना)। बड़े बाबू, मेरे दोनों लड़कों को खाने को देना, मुझे खेत से पकड़ लाए, उन्हें एक बार देख भी नहीं सका।

(नवीनमाधव के अलावा सभी का प्रस्थान)

नवीन––कैसा अन्याय है! नवप्रसूति साही को जब किरात पकड़ लेता है तो उसके बच्चे बिना खाए मर जाते हैं। उसी तरह इस रैयत के बच्चे बिना अन्न के मर जाएँगे!

(राईचरण का प्रवेश)

राईचरण—बड़े भैया नहीं पकड़ते तो गोरे को मार ही डालता; मार तो डालता, इसके बाद न हो छः महीने की फाँसी हो जाती।—साली—।

नवीन—अरे राईचरण, कहाँ जाता है?

राईचरण—माई जी ने ऊटू महाराज को बुला लाने के लिए कहा है। पदी ...ने कहा कि कल प्यादे पकड़ने आएँगे।

(राईचरण का प्रस्थान)

नवीन—हा विधाता! इस वंश में पहले जो नहीं हुआ था वही हुआ। मेरे पिता अति निरीह, अति सरल, अति निष्कपट हैं, झगड़ा-फ़साद किसे कहते हैं नहीं जानते, कभी गाँव से बाहर नहीं निकलते, फौजदारी के नाम से काँपते हैं; पत्र पढ़कर आँसू बहाया है; इन्द्राबाद जाना पड़ा तो पागल हो जाएँगे; क़ैद किए गए तो पानी में कूद पड़ेंगे। हाय! मेरे जीवित रहते पिता की यह दुर्गति होगी! मेरी माता पिता की तरह नहीं डरती। उसमें साहस है, वह कभी निराश नहीं होती, वह एकाग्र चित्त होकर भगवती को बुला रही है। मेरी कुरंगनयना दावाग्नि की कुरंगिनी हो गई है, डर और चिन्ता से पागल-सी हो रही है; नील कोठी की गोदाम में उनके पिता की मृत्यु हुई, उनकी निरन्तर यही चिन्ता है कि कहीं पति की भी वही दशा न हो। मैं किसको सान्त्वना दूं? सपरिवार भागना क्या उचित होगा?—नहीं, परोपकार परम धर्म है, सहसा विमुख नहीं होऊँगा।—श्यामनगर का कोई उपकार नहीं कर सका। चेष्टा से क्या कोई काम असाध्य है? देखूँ, क्या कर सकता हूँ—

(दो अध्यापकों का प्रवेश)

पहला—क्यों भाई गोलकचन्द्र वसु का मकान इसी गाँव में है न? पितृव्य के प्रमुखात् सुना है वसुज बड़े साधु व्यक्ति हैं, कायस्थकुलतिलक हैं।

नवीन--(**प्रणिपात होकर**) महाराज मैं उनका ज्येष्ठ पुत्र हूँ ।

पहला--अच्छा, अच्छा, अहा, साधु, साधु, एवंविध सुसंतान साधारण पुण्य का फल नहीं है; जैसा वंश--

अस्मिंस्तु निर्गुणं गोत्रे नापत्यमुपजायते ।
आकरे पद्मरागाणां जन्म काचमणेः कुतः ॥

शास्त्र का वचन व्यर्थ नहीं होता ।--तर्कालंकार भाई, श्लोक को प्रणिधान नहीं किया --हा, हा, हा, (**सुंघनी सूँघना**) ।

दूसरा--हमें सौगन्ध्या के अरविन्द बाबू ने बुलाया है, आज गोलकचन्द्र के आलय में अवस्थान करेंगे, तुम लोगों को चरितार्थ करेंगे ।

नवीन--परम सौभाग्य की बात है; इधर से चलिए ।

(**सब का प्रस्थान**)

तृतीय अंक

प्रथम गर्भाङ्क

बेगुनबेड़े की कोठी के दफ़्तरखाने का सम्मुख भाग

(गोपीनाथ और एक खलासी का प्रवेश)

गोपी—तुम लोगों के हिस्से में कम नहीं पड़ता तो तुम लोग कोई बात मुझसे नहीं कहते।

खलासी—उस ि ष्टा को क्या अकेला खा कर हज़म किया जा सकता है ? मैंने कहा 'अगर खाओगे तो दीवान जी को देकर खाओ', तो कहा, 'बड़ा बना है तेरा दीवान, यह तो वह केवट का बेटा नहीं है कि साहब का बन्दर खिलाता फिरेगा।'

गोपी—अच्छा, तू अभी जा, कायथ का बच्चा कैसा होता है उसे मैं दिखाऊँगा।

(खलासी का प्रस्थान)

छोटे साहब के बल पर बेटा इतना कूदता है। बहनोई अगर मालिक हो तो काम करने में बड़ा सुख मिलता है, इस बात को भी कहूँगा; बड़ा साहब इस बात को सुनकर आग बबूला होता है। लेकिन बेटा मुझ पर बहुत गुस्सा है, बात-बात पर श्यामचन्द दिखाता है; उस दिन मोजा पहने लात मारी। कई दिनों से इरादा अच्छा नहीं देखता। गोलक बोस के तलब किए जाने के बाद से मुझ पर दया दृष्टि पड़ी है। लोगों का सत्यानाश करने पर साहब की शाबासी मिलती है। 'शतमारी भवेत वैद्यः।' (उड को देखकर) लो यह आ रहे हैं, बोसों की बातें करके पहले ठण्डा करूँ।

(उड का प्रवेश)

धर्मावतार, नवीन बोस की आँखों से अब आँसू निकला है। बेटे इतने सीधे नहीं हुए थे, बेटे का बगीचा निकाल लिया गया है, साझीदार गदाई पोद को पट्टा लिख दिया गया है, खेती एक तरह से बन्द हो गई है, बेटे की खत्तियाँ सब खाली पड़ी हुई हैं; बेटे को दो-दो बार फ़ौजदारी सुपुर्द किया गया है, इतने कष्ट में भी बेटा खड़ा था, अब पतन हुआ है।

उड--साला श्यामनगर में कुछ नहीं कर सका।

गोपी--हुजूर मुंशी उसके पास आया था तो बेटे ने कहा, 'मेरा मन स्थिर नहीं है, पिता के रोने से अंग शिथिल हो गए हैं, मैं भी बोल गया हूँ।' नवीन बोस की दुर्गति देख कर श्यामनगर की प्रजा के सात-आठ घर फरार हो गए और बाकी सब हुजूर जैसा कह रहे हैं वैसा ही करते हैं।

उड--तुम अच्छे दीवान हो। अच्छी सूरत निकाली है।

गोपी--मैं जानता था कि गोलक बोस बड़ा डरपोक आदमी है, फ़ौजदारी में जाना पड़ा तो पागल हो जाएगा, नवीन बोस जैसा पितृभक्त है उससे आसानी से हाथ में आ जाएगा; इसीलिए बुड्ढे को आसामी बनाने के लिए कहा, हुजूर ने जो तरीक़ा निकाला है वह भी बुरा नहीं है, बेटे के पोखरे के किनारे नील बोया गया है, उसके कलेजे में साँप ने अण्डे दिए हैं।

उड--एक ढेले में दो चिड़ियां मारीं, दस बीघे में नील हुआ, बहन... को दुख पहुँचा। साला बहुत रोया-धोया था, कहता है पोखरे पर नील बोने से मैं उजड़ जाऊँगा। मैंने जवाब दिया है, बस्ती की ज़मीन में नील बहुत अच्छा होता है।

गोपी--यह जवाब पाकर बेटे ने नालिश की है।

उड--मुकदमा कुछ नहीं होगा, यह मजिस्ट्रेट साहब बहुत अच्छा आदमी है। दीवानी करने पर भी पाँच साल में भी मुकदमा खतम नहीं होगा। मजिस्ट्रेट मेरा बड़ा दोस्त है। देखो, तुम्हारा गवाह

मातवरी करके नये कानून में चार बदमाश को हवालात में दिया है, यह कानून श्यामचन्द का दादा बना है।

गोपी—धर्मावतार, इन चार रैयतों की फ़सल बर्बाद होगी, इसलिए नवीन वोस अपना हल-बैल हलवाहा देकर उनकी ज़मीन जोते दे रहा है और उनके परिवारवालों को जिसमें तकलीफ़ न हो इसकी कोशिश कर रहा है।

उड—साला दादनी की ज़मीन जोतना पड़ता है तो बोलता है हल-बैल कम हो गया है; वहन...बड़ा बज्जात है, अच्छा सज़ा मिला है। दीवान, तुम अच्छा काम किया है, तुमसे काम अच्छा चलेगा।

गोपी—धर्मावतार की कृपा! मेरी इच्छा है कि हर साल दादनी बढ़ाऊँ; यह काम अकेले नहीं हो सकता; इसके लिए विश्वासी अमीन-खलासी की ज़रूरत है; जो आदमी दो रुपए के लिए हुजूर का तीन बीघे का नील खराब करता है इससे काम की कभी तरक्की होती है?

उड—मैं समझ गया, अमीन शाला ने गोलमाल किया है।

गोपी—हुजूर, चन्द्र महाजन यहाँ नया बसा है, दादनी कुछ नहीं लेता है; अमीन ने उसके आँगन में बाकायदा एक रुपए की दादनी फेंक दी। रुपया लौटाने के लिए वह बहुत रोया-धोया और बिनती करते-करते रथ-थान तक अमीन के साथ आया। रथ थान में नीलकण्ठ वाबू से उसकी मुलाकात हुई जो कालेज से एकदम वकील होकर निकले हैं।

उड—मैं उसको जानता हूँ, वह वहन...मेरा बात अखबार में लिख देता है।

गोपी—आपके अखबार के सामने उसका अखबार नहीं टिक सकता है। दोनों का मुकाबला नहीं होता, राजा भोज के सामने गंगू तेली। लेकिन अखबार को मुट्ठी में करने के लिए हुजूर लोगों को बहुत खर्च करना पड़ा है, जैसा समय है—

समय गुणे आप्त पर।
खोंडा गाधा घोड़ार दर।।

(समय का फेर है। दोस्त दुश्मन बन जाता है। लँगड़ा गधा घोड़े के भाव बिकता है।)

उड—नीलकण्ठ ने क्या किया?

गोपी—नीलकण्ठ बाबू ने अमीन को बहुत जद्द-बद्द कहा; इससे शर्मा कर महाजन के घर जाकर अमीन दो रुपए के साथ दादनी का रुपया भी वापस लाया है। चन्द्र महाजन मालदार है, तीन-चार बीघे नील आसानी से बो सकता था और यह क्या नौकर का काम है? मैं दीवान और अमीन दोनों का काम कर सकता हूँ, तभी यह नमकहरामी खत्म होगी।

उड—बड़ा बज्जाती है, साफ नमकहरामी है।

गोपी—धर्मावतार, बेअदबी माफ़ हो—अमीन आपकी बहन को छोटे साहब के कमरे में लाया था।

उड—हाँ, हाँ, मैं जानता हूँ, उस बहन...और पदी हलवाइन ने छोटा साहब को खराब किया है। बदजात को हम जरूर सबक देगा; बहन...को हमारा बैठने का घर में भेज दो।

(उड का प्रस्थान)

गोपी—देखो तो भई, बन्दर किसके हाथों में अच्छा नाचता है, कायथ धूर्त होता है और कौआ धूर्त होता है;

ठेकियाछे एइबार कायतेर छाय।
बोनाइ बाबार बाबा हार मेने जाय।।

(अब तुम कायस्थ के पल्ले पड़े हो, जहाँ बहनोई का दादा भी मात खाये बिना नहीं रह सकता)

अंक ३

द्वितीय गर्भाङ्क

नवीनमाधव का शयन गृह

(नवीनमाधव और सैरिन्ध्री बैठे हैं)

सैरिन्ध्री—प्राणनाथ, गहना पहले या ससुर पहले; तुम जिस लिए दिन-रात घूमते फिर रहे हो, जिसके लिए आहार-निद्रा छोड़ दिया है, जिसके लिए तुम्हारी आँखों से निन्तर आँसू झर रहे हैं, जिसके लिए तुम्हारा खिला हुआ चेहरा मुर्झा गया है, जिसके लिए तुम्हारे सिर में दर्द है, हे नाथ, मैं उसके लिए क्या इन मामूली आभूषणों को नहीं दे सकती ?

नवीन—प्रेयसि, तुम अनायास दे सकती हो, लेकिन मैं लूं किस मुँह से ! कामिनी को अलंकारहीन करने में पति को कितना कष्ट होता है; बेगवती नदी में तैरने, भीषण समुद्र में डूबने, युद्ध में कूदने, पर्वत पर चढ़ने, जंगल में रहने, शेर के मुँह में जाने—पति इतने कष्टों को सह कर पत्नी को भूषित करता है; मैं क्या ऐसा मूर्ख हूँ कि उसी पत्नी के गहनों का हरण करूँगा। कमलनयने, प्रतीक्षा करो। आज देखूँ अगर रुपए का इन्तजाम न कर सकूँ तो कल तुम्हारे गहने लूँगा।

सैरिन्ध्री—हृदयवल्लभ, हमारे लिए बड़ा ही दुःसमय है, इस समय विश्वास करके कौन तुम्हें पाँच सौ रुपए उधार देगा ? मैं फिर विनती करती हूँ कि मेरे और छोटी बहू के गहने महाजन के यहाँ बन्धक रखकर रुपए लाओ। तुम्हारा कष्ट देख कर सोने के कमल जैसी हमारी छोटी बहू कुम्हला गई है।

नवीन—हा, हा, चन्द्रमुखी, कैसी दारुण बातें कहीं, मेरे अन्तःकरण

में मानो अग्निबाण ने प्रवेश किया। हमारी छोटी बहू बालिका है, उत्तम वसन, उत्तम भूषण ही उसके लिए सुख हैं; वह क्या समझती है, वह संसार का क्या जानती हैं; हँसी में विपिन के गले का हार छीन लेने से जैसे रोता है, बहू के गहने लेने से वह उसी तरह रोएगी। हे ईश्वर! मुझे ऐसा कायर बना दिया! मैं ऐसा कठोर डाकू बन गया। मैं बालिका को वंचित करूँगा? प्राण रहते यह नहीं होगा—नराधम, निर्दयी निलहा भी यह काम नहीं कर सकता। प्रणयिनी, ऐसी बात अब ज़बान पर न लाना।

सैरिन्ध्री—प्राणनाथ, मैंने जिस कष्ट में यह दारुण बात कही है उसे मैं जानती हूँ और अन्तर्यामी परमेश्वर जानते हैं; इसमें सन्देह नहीं कि इस अग्निबाण ने मेरा अन्तःकरण विदीर्ण किया है, जिह्वा को जला दिया है, बाद में ओठ चीर कर तुम्हारे अन्तःकरण में प्रवेश किया है।—प्राणनाथ, बड़े कष्ट में ही छोटी बहू का गहना लेने के लिए ही कहा है। तुम्हारा पागलों की तरह घूमना, ससुर का रोना, सास का आह भरना, छोटी बहू का म्लान चेहरा, नाते-रिश्तेदारों का लटका हुआ मुँह, रैयतों का हाहाकार,—इन सब को देख कर क्या आमोद-प्रमोद की बात याद पड़ती है? किसी तरह बच निकलें तो सभी को छुटकारा मिले। हे नाथ, विपिन का गहना देने में मुझे जो कष्ट होता है छोटी बहू का गहना देने में भी मुझे वही कष्ट होता है। लेकिन छोटी बहू के गहने देने के पहले विपिन का गहना देने से छोटी बहू के प्रति मेरा निष्ठुर आचरण प्रकट होगा, छोटी बहू सोच सकती है दीदी ने मुझे शायद पराया समझा। क्या ऐसा काम करके मैं उसके सरल हृदय को चोट पहुँचा सकती हूँ? यह क्या मातृ तुल्य जेठानी का काम है?

नवीन—प्रणयिनी, तुम्हारा अन्तःकरण, तुम्हारे जैसी सरल नारी नारी कुल में दूसरी नहीं।—अहा! मेरा ऐसा परिवार हो गया। मैं क्या था क्या हो गया! मेरी सात सौ रुपए बीघे मुनाफ़े की ज़मीन,

मेरे पन्द्रह खत्ती धान, सोलह बीघे का बगीचा, मेरे बीस हल, पचास हलवाहे—पूजा में कैसा समारोह होता था, घर लोगों से भर जाता था, ह्मण भोजन, भिखमंगों को अन्न बाँटना, आत्मीय जनों को भोजन कराना, वैष्णवों का गान, प्रबोधजनक यात्राएँ—मैंने कितना धन व्यय किया है, किसी-किसी को सौ रुपए तक दान दिया है; अहा! ऐसा ऐश्वर्यशाली होकर मैं इस समय स्त्री, भ्रातृ-वधू के गहने हरण करने पर उतारू हो गया हूँ! कैसी विडम्बना है! परमेश्वर तुम्हीं ने दिया था तुम्हीं ने लिया––क्षोभ क्यों हो?

सैरिन्ध्री—प्राणनाथ, तुम्हें कातर देख कर मेरा हृदय भी रोने लगता है।––**(सजल नेत्रों से)** मेरे भाग्य में इतना कष्ट लिखा था, प्राणनाथ की इतनी दुर्गति देखनी पड़ी!––अब बाधा न दो—**(गहने खोलना)**।

नवीन––तुम्हारी आँखों में आँसू देख कर मेरा कलेजा फट जाता है। **(आँसू पोंछ कर)** चुप रहो, चन्द्रमुखी, चुप रहो,—**(हाथ पकड़ कर)** रक्खो, एक दिन और देखूँ।

सैरिन्ध्री—प्राणनाथ, चारा ही क्या है? मैं जो कहती हूँ वही करो, भाग्य में लिखा होगा तो बहुत गहने होंगे। **(नैपथ्य में—छींक।)** —सचमुच ही आदुरी आ रही है।

(दो चिट्ठियाँ लिए आदुरी का प्रवेश)

आदुरी—ये दोनों चिट्ठियाँ कहाँ से आई हैं मैं नहीं कह सकती, माई जी ने तुम्हारे हाथों में देने को कहा।

(चिट्ठी देकर आदुरी का प्रस्थान)

नवीन—तुम्हारे गहने लेने पड़ेंगे या नहीं लेने पड़ेंगे—**(पहली चिट्ठी खोलना)**

सैरिन्ध्री––ज़ोर से पढ़ो।

नवीन—**(चिट्ठी पढ़ना)**।

"......

आपको रुपए देना प्रत्युपकार करना मात्र है, लेकिन मेरी माता को कल गंगालाभ हो गया है, उनके श्राद्ध का दिन निकट है, यह समाचार महाशय को कल ही लिखा है।--तम्बाकू अभी तक नहीं बिकी है। इति।

श्री घनश्याम मुखोपाध्याय।"

कैसा दुर्भाग्य है! मुखोपाध्याय महाशय की माता के श्राद्ध में मेरा क्या यही उपकार है! --देखूँ, तुम कौन-सा अस्त्र धारण करके आई हो--(**दूसरी चिट्ठी खोलना।**)।

सैरिन्ध्री--प्राणनाथ, आशा करके निराश होने में बड़ा कष्ट होता है; वह चिट्ठी वैसी ही रहने दो।

नवीन--(**चिट्ठी पढ़ना**)

"प्रतिपाल्य श्री गोकुलकृष्ण पालित का विनयपूर्वक निवेदन विशेष। महाशय के मंगल से अपना मंगलयुक्त लिपि पाकर समाचार अवगत हुआ। मैंने तीन सौ रुपया इकट्ठा किया है, कल उसे लेकर पहुँचूंगा। बाकी एक सौ रुपया अगले महीने में चुकता करूँगा। महाशय ने जो उपकार किया है, मैं थोड़ा-सा सूद देना चाहता हूँ। इति।"

सैरिन्ध्री--परमेश्वर हमारे ऊपर सदय हुए हैं।--जाऊँ मैं छोटी बहू को कह आऊँ।

(**सैरिन्ध्री का प्रस्थान**)

नवीन--(**स्वगत**) मेरी प्राणाधिका सरलता की मूरत है।--यह तो भीषणधार में तृणमात्र हैं; इसी का सहारा लेकर पिता को इन्द्राबाद ले जाऊँ, आगे को भाग्य में है सो होगा। डेढ़ सौ रुपए पास हैं--तम्बाकू को एक महीने और रखूँ तो पाँच सौ रुपए में बिक सकती है। लेकिन क्या करूँ साढ़े तीन सौ रुपए में ही बेचना पड़ा, अमलों का खर्च बहुत लगेगा, जाने आने में भी बहुत व्यय होगा। ऐसे झूठे मुक़दमे में अगर सज़ा हो गई तो समझूंगा कि इस

देश में प्रलय समुपस्थित है। कैसा कठोर कानून जारी हुआ है। क़ानून का क्या दोष है, क़ानून बनाने वालों का भी क्या दोष है? जिनके हाथों में क़ानून अर्पित हुआ है वे अगर तटस्थ होते, तो क्या देश का सत्यानाश हो जाता? अहा! इस क़ानून से कितने ही व्यक्ति विना अपराध के जेलों में आँसू वहा रहे हैं। उनके स्त्री-पुत्रों का दुख देखने से छाती फटती है; चूल्हे पर की हाँड़ी चूल्हे पर ही है, आँगन का धान आँगन में ही सूख रहा है, वथान के पशु वथान में ही हैं; सारे खेत जोते-बोए नहीं गए, खेत की घास निराई नहीं गई; वर्ष भर क्या होगा?—'कहाँ नाथ! कहाँ तात!' धरती पर पड़े रो रहे हैं। कोई-कोई मजिस्ट्रेट सुविचार कर रहे हैं, उनके हाथों में यह क़ानून यमदण्ड नहीं बना है। अगर सभी अमरनगर के मजिस्ट्रेट की तरह न्यायवान होते तो क्या रैयतों की खड़ी फसल वर्बाद होती, लहलहाते हुए खेतों में आग लगती? तो क्या मुझे इस दुस्तर विपत्ति में गिरना पड़ता? हे लेफ़्टिनेण्ट गवर्नर, जैसा कानून बनाया था, अगर उसी तरह के सज्जन नियुक्त करते तो ऐसा अमंगल नहीं होता। हे देशपालक, अगर ऐसी एक भी दफ़ा बनाते कि मुक़दमा झूठा साबित होने पर फ़रियादी को सज़ा मिलेगी; तो अमरनगर की जेल निलहों से भर जाती और वे इतने प्रबल न हो पाते।—हमारे मजिस्ट्रेट का तवादला हो गया है, लेकिन यह मुकदमा अन्त तक यहाँ रहा तो हम मिट जाएँगे।

(सावित्री का प्रवेश)

सावित्री—नवीन, सारे हलों को अगर छोड़ देते हो तो क्या तब भी दादनी लेना होगा? हल-बैल सब बेच कर व्यापार करो, उससे जो आमदनी होगी उसे सुख से भोगेंगे; यह जुल्म तो अब नहीं सहा जाता।

नवीन—माँ, मेरी भी यही इच्छा है। केवल विन्दु के काम मिलने की प्रतीक्षा कर रहा हूँ। फ़िलहाल खेती छोड़ देने से गृहस्थी का

पलना मुश्किल है, इसीलिए इतने कष्टों के बीच भी कुछ हलों को रखा है।

सावित्री--यह सिर दर्द लेकर कैसे जाओगे, बतलाओ ?--हे परमेश्वर ऐसा नील यहाँ पैदा हुआ था।

(नवीन के सिर पर हाथ फेरना)

(रेवती का प्रवेश)

रेवती--माई जी, मैं कहाँ जाऊँ, क्या करूँ, क्यों मरने आई। दूसरे की जात को घर लाकर सँभाल नहीं सकी। बड़े बाबू, मुझे बचाओ, मेरा कलेजा फटा जाता है; मेरी क्षेत्रमणि ला दो, मेरी सोने की गुड़िया ला दो।

सावित्री--क्या हुआ, हुआ क्या ?

रेवती--मेरी क्षेत्र शाम को पाँचू की माँ के साथ दास पोखरे से पानी लाने गई थी। बगीचे के अन्दर से आते समय चार लठैत बिटिया को पकड़ ले गए हैं। सत्यानाशी पदी दिखाकर भाग गई।

सावित्री--कैसी सत्यानाशी बात है ! ये सत्यानाशी सब कुछ कर सकते हैं'--लोगों की ज़मीन छीन रहे हैं, धान छीन रहे हैं, गाय-बच्चे छीन रहे हैं, लाठी के हूरे से नील बोआ रहे हैं, रोकर हो चाहे धोकर हो लोग नील बो रहे हैं;--यह क्या ! भले आदमियों की जान लेना !

रेवती--माँ, आधा पेट खाकर नील बो रही हूँ, जितनी ज़मीन में निशान लगाया उन सब में बो रही हूँ। राय लौण्डा जमीन जोतता है और फफक-फफक कर रो उठता है; खेत से लौट इस बात को सुनकर वह पागल हो जाएगा।

नवीन--साधु कहाँ है ?

रेवती--बाहर बैठ कर रो रहा है।

नवीन--गृहस्थ महिला के लिए सतीत्व आयस्कान्त मणि के बराबर है। सतीत्व मणि से विभूषित रमणी कैसी रमणीय होती है। पिता के स्वरपुर वृकोदर के जीवित रहते कुल कामिनी का अपहरण !

इसी क्षण जाऊँगा, कैसा दु:शासन है देखूंगा; सतीत्व-श्वेत-कमल पर नील मण्डूक कभी नहीं बैठने पावेगा।

(नवीन का प्रस्थान)

सावित्री—सतीत्व सोनार निधि विधिदत्त धना,
कांगालिनी पेले रानी एमन रतना।

(सतीत्व विधिप्रदत्त सोने का भाण्डार है। यह इतना बहुमूल्य है कि कंगालिन को भी रानी बना देता है।)

अगर नील बन्दर के हाथ से पवित्र मणि को अपवित्र होने के पहले ही ला सको तभी समझूंगी कि तुम्हें गर्भ में धारण करना सार्थक हुआ है। ऐसा अत्याचार बाप-दादों के जमाने में नहीं सुना था। चलो घोष बहू, बाहर की ओर चलें।

(दोनों का प्रस्थान)

अंक ३

तृतीय गर्भाङ्क

रोग साहब का कमरा

(रोग आसीन है---पदी हलवाइन और क्षेत्रमणि का प्रवेश)

क्षेत्र—हलवाइन बुआ मुझसे ऐसी बाते न कहो, मैं प्राण दे सकूँगी, धर्म नहीं दे सकती; मुझे काट कर टुकड़े-टुकड़े कर दो, जला दो, बहा दो, गाड़ दो, मैं पराए पुरुष को नहीं छू सकती; मेरा पति क्या सोचेगा ?

पदी—तेरा भतार कहाँ है, तू कहाँ है ? इस बात को कोई जान नहीं पाएगा; इसी रात को ही मैं साथ ले जाकर तेरी माँ के पास पहुँचा आऊँगी।

क्षेत्र—माना पति नहीं जान सका, ऊपर का देवता तो जानेगा, देवता की आँख में तो धूल नहीं झोंक सकूँगी ? मेरे कलेजे में तो पजावे की आग जलेगी। सती समझकर मेरा पति जितना ही प्यार करेगा मेरे कलेजे में उतनी ही आग लगेगी। जाने हो या बिना जाने हो, मैं कभी भी यार न कर सकूँगी।

रोग—पद्म, पलँग के ऊपर ला न।

पदी—आ बिटिया, तू साहब के पास आ, तुझे जो कुछ कहना है, उसी को कह, मुझसे कहना जंगल में रोने के बराबर है।

रोग—मुझसे कहना सूअर के सामने मोती बिखेरना है, हा, हा, हा। हम निलहे हैं, हम यम के मौसेरे भाई हैं, खड़े रह कर कितने गाँव जला दिए हैं, बेटे को दूध पिलाते-पिलाते कितनी ही माताएँ जल मरीं, यह देखकर क्या हम स्नेह करते हैं, स्नेह करने से क्या

हमारी कोठी क़ायम रहती ? स्वभावतः हम बुरे नहीं हैं, नील के काम में हमारा मिज़ाज विगड़ गया है। एक आदमी को मार डालने में दुख होता था, अब दस औरतों को रामकान्त से पीट सकता हूँ, तभी हँसते हुए खाना खाता हूँ। मैं औरतों को अधिक प्यार करता हूँ, कोठी के काम से इस काम में बड़ी सुविधा हो सकती है; समुद्र में सब कुछ मिला जा रहा है।—तेरे शरीर में बल नहीं है; पद्म खींच ला।

पदी—क्षेत्रमणि, मेरी भोली बिटिया, बिस्तर पर आओ, साहब तुझे एक बीबी का पोशाक देगा, कह रहा है।

क्षेत्र—भाड़ में जाय बीबी का पोशाक, टाट पहन कर रहूँगी वह भी भला, फिर भी बीबी का पोशाक मुझे न पहनना पड़े। हलवाइन बुआ, मुझे बड़ी प्यास लगी है, मुझे घर पहुँचा आ, मैं पानी पीकर ठण्डी होऊँ। आह, आह! मेरी माँ ने अब तक फाँसी लगा ली होगी; मेरे बाप ने सिर पर कुदाल मार ली होगी, मेरा काका जंगली भैंसे की तरह इधर-उधर दौड़ रहा होगा। मेरी माँ के और कोई लड़का नहीं है। बाप-काका दोनों के बीच मैं अकेली संतान हूँ; मुझे छोड़ दे, मुझे घर पहुँचा आ, तेरे पैर पड़ूँ; पदी बुआ, तेरा विष्टा खाऊँ।—माँ री मरी! प्यास से मरी!

रोग—सुराही में पानी है, पीने को दो।

क्षेत्र—हिन्दू की बेटी होकर मैं क्या साहब का पानी पी सकती हूँ? मुझे लठैतों ने छुआ है, मैं घर लौट कर बिना नहाए घर में नहीं जा सकूँगी।

पदी—(स्वगत) मेरा धर्म भी गया, जात भी गई। **(जाहिरा तौर पर)** तो मैं बेटी, क्या करूँ, साहब के चंगुल में पड़ने पर छुटकारा पाना दूभर है।—छोटे साहब, क्षेत्रमणि आज घर जाए, तब फिर किसी दिन आएगी।

रोग—तब तुम मेरे साथ रह कर मौज करो। तू बाहर जा, मुझमें ताकत होगी तो मैं इसे नरम करूँगा, नहीं तो तेरे साथ घर भेज दूंगा—डैम

होर; मुझे लग रहा है, तूने बाधा दी थी, इसीलिए तो भले आदमी की बेटी को लठैत से बुलाना पड़ा; मैंने नील के लठैतों को ऐसे काम में कब आसानी से दिया है?—हरामजादी पदी हलवाइन।

पदी—अपनी कली को बुलाओ, वही तुम्हारी लाड़ली है, मैं समझ गई हूँ।

क्षेत्र—हलवाइन बुआ, मत जा! हलवाइन बुआ, मत जा।

(पदी हलवाइन का प्रस्थान)

मुझे काले साँप की बाँबी में अकेली छोड़ गई, मुझे तो डर लगता है, मैं तो काँपने लग गई हूँ, मेरा तो डर के मारे सिर चकरा रहा है, प्यास के मारे तो कलेजा फटा जाता है।

रोग—डियर, डियर—**(दोनों हाथों से क्षेत्रमणि के दोनों हाथों को पकड़ कर खींचता है)** आओ, आओ—

क्षेत्र—हे साहब! तुम मेरे बाप हो, हे साहब, तुम मेरे बाप हो, हे साहब, तुम मेरे बाप हो; मुझे छोड़ दो, पदी बुआ के साथ मुझे घर भेज दो; अँधेरी रात है, मैं अकेली नहीं जा सकूँगी।—**(हाथ पकड़ कर खींचता है)** हे साहब, तुम मेरे बाप हो, हे साहब, तुम मेरे बाप हो; हाथ पकड़ने से जात जाती है, छोड़ दो, तुम मेरे बाप हो।

रोग—तेरे लड़के का बाप होने की मेरी इच्छा है; मैं किसी भी बात में नहीं आ सकता, बिस्तर पर आओ, नहीं तो लात मार कर पेट फाड़ दूँगा।

क्षेत्र—मेरा लड़का मर जाएगा—दुहाई साहब—दुहाई साहब, मेरा लड़का मर जाएगा—मैं हमल से हूँ!

रोग—तुझे नंगा नहीं करूँगा तो तेरी शर्म नहीं जाएगी।

(कपड़े पकड़ कर खींचना)

क्षेत्र—हे साहब, मैं तुम्हारी माँ हूँ, मुझे नंगा मत करो, तुम मेरे बेटे हो, मेरा कपड़ा छोड़ दो! **(रोग के हाथ में नख से खरोचना)**

रोग—इनफ़र्नल बिच ! (बेंत लेकर) अब तुम्हारा छिनालपन दूर होगा।

क्षेत्र—मुझे बिलकुल मार डालो, मैं कुछ नहीं कहूँगी; मेरे कलेजे में एक तलवार भोंक दे, मैं स्वर्ग सिधार जाऊँ—अरे विष्टा खानेवाले का बेटा, दाढ़ीजार का बेटा, तेरे घर में जोड़ा मौत हो; मेरे बदन पर फिर हाथ दिया, तो मैं तेरे हाथों को खरोंच और काट कर टुकड़े-टकड़े कर दूँगी; तेरे माँ-बहन नहीं हैं, जाकर उनके कपड़े क्यों नहीं छीन लेता ? खड़ा क्यों है, अरे अपनी बहन के साथ घाट करने वाला, मार, मेरी जान निकाल दे न, अब मुझसे तो सहा नहीं जाता।

रोग—चुप रह हरामज़ादी—छोटे मुँह बड़ी बात !

(पेट में घूसे मारना और बाल पकड़ कर खींचना)

क्षेत्र—बाप कहाँ हो ! माँ कहाँ हो ! देखो, तुम्हारी क्षेत्र मरी !—**(काँपना)**।

(खिड़की तोड़ कर नवीनमाधव और तोराप का प्रवेश)

नवीन—(रोग के हाथों से क्षेत्रमणि के बाल छुड़ा कर) अरे नराधम, नीच, निलहे ! क्या यही तेरे ईसाई धर्म की जितेन्द्रियता है ? क्या यही तेरे ईसाई धर्म की दया, विनयशीलता है ? ओफ़, ओफ़ ! बालिका, अबला, गर्भवती कामिनी के प्रति ऐसा निठुर व्यवहार !

तोराप—साला मानों कठपुतली की तरह खड़ा है; गोरे की बोलती बन्द हो गई है।—बड़े बाबू, साले में क्या ईमान है कि धरम की बात सुनेगा; वह जैसा है मैं भी वैसा ही हूँ; साले के जैसे जबड़े हैं वैसे ही मेरे हाथ के पहुँचे भी हैं;—(गर्दन पकड़ कर गाल पर थप्पड़ लगाना)—चिल्लाएगा तो यमलोक जाएगा—(गला दबोच कर) पाँच दिन चोर का तो एक दिन साह का, पाँच दिन मारा तो एक दिन मार खा—**(कान उमेठता है)**।

नवीन—डर किस बात का? अच्छी तरह कपड़े पहन।

(क्षेत्रमणि का कपड़े पहनना)

तोराप, तू ससुरे का गला दबाए रह, मैं क्षेत्र को गोद में लेकर भागूँ, मैं जब बुनोपाड़ा पार कर जाऊँ तो तू भी छोड़ कर भागना। नदी के किनारे-किनारे जाने में बड़ी तकलीफ होती है, काँटों से मेरा शरीर छिद गया है—अब तक शायद बुनो लोग सो गए हैं, खासकर इस बात को सुनकर कुछ नहीं कहेंगे। इसके बाद तू हमारे घर आना, तू कैसे इन्द्राबाद से भाग आया, और अब कहाँ रह रहा है, इसे मैं सुनना चाहता हूँ।

तोराप—मैं इसी रात को नदी तैरकर घर जाऊँगा।—मेरे नसीब की बात अब क्या सुनोगे; मैं मुख्तार साले के अस्तबल का झरोखा तोड़कर सीधे बसन्त बाबू की ज़मींदारी में भाग गया, फिर रात करके बीबी-बच्चे को घर में घुसाया। इसी साले ने तो उजाड़ा, खेती करके अब क्या गुजर-बसर किया जा सकता है, नील की मार कैसी है; तिस पर फिर नमकहरामी करने को कहता है।—क्यों साले, गिटपिट करके जूते की ठोकर क्यों नहीं मारता?

(घुटने से मारना)

नवीन—तोराप, मारने की क्या ज़रूरत है, ये निर्दयी हैं तो हमें भी निर्दयी नहीं होना चाहिए; मैं चला।

(क्षेत्र को लेकर नवीनमाधव का प्रस्थान)

तोराप—ऐसे वसु लोगों को भी बेघरबार का करना चाहता है; अपने बड़े बाप से कहकर मना-वना कर काम बना ले; ज़ोर-ज़बर्दस्ती कै दिन चलती है; भाग जाने पर तो कुछ नहीं कर सकेगा। मरने से बढ़ कर तो गाली नहीं है; अरे साले, रैयत फ़रार हुई तो कोठी जहन्नुम चली जाएगी।—बड़े बाबू के पिछले साल के रुपए चुकता कर दे, और इस साल जितना बोना चाहते हैं उतना

ही ले, तेरे ही लिए वे लोग मुसीबत में पड़े हैं; दादनी मढ़ने से ही तो नहीं होता, खेती भी तो होनी चाहिए।--छोटे साहब, सलाम मैं चला।

(चित्त करके फेंक कर भागना)

रोग--बाइ जोव! बीटेन ट जेली।

(प्रस्थान)

अंक ३

चतुर्थ गर्भाङ्क

गोलकचन्द्र वसु के भवन का दालान

(सावित्री का प्रवेश)

सावित्री—(लम्बी साँस छोड़ते हुए) रे दारुण हाकिम, तूने मुझे क्यों नहीं तलब किया, मैं भी पति पुत्र के साथ जिले में जाती; इस श्मशान में रहने की अपेक्षा मेरे लिए वह अच्छा था। हाय! मालिक मेरे घरघुसवा आदमी हैं, कभी भी दूसरे गाँव में न्योता खाने नहीं जाते, उनके भाग्य में इतना दुख, फौजदारी में पकड़ ले गए, उन्हें जेल जाना होगा।—भगवती! तुम्हारे मन में यही था माँ? हाय! वे कहते हैं कि लम्बे-चौड़े घर में नहीं सोने से नींद नहीं आती, वह अरवा चावल का भात खाते हैं, वह बड़ी बहू के सिवाय किसी के हाथ का नहीं खाते; हाय! छाती पीट कर लहू-लुहान हुए हैं, रो-रोकर आँखें सुजा ली हैं; जाते समय कहा, 'मालकिन! यह यात्रा मेरे लिए गंगा यात्रा बनी।' —(रोना) नवीन कहते हैं, 'माँ! अपनी भगवती को पुकारो, मैं ज़रूर जीतूँगा और उन्हें लेकर घर लाऊँगा।' —मेरे बेटे का सोने जैसा दमकता हुआ चेहरा स्याह हो गया है; रुपए इकट्ठा करने में कितनी परेशानी होती है, दर-दर भटकते सिर में चक्कर आता है; कहीं मैं बहुओं का गहना न दे डालूँ इसलिए हमें हिम्मत बँधाता है,—माँ, रुपए की क्या कमी है, मुकदमे में कितना खर्च होगा? साझेदार के मुकदमे में मेरे गहने गिरवी चले जाने पर उसे कितना खेद हुआ,—कहता है, कुछ रुपए हाथ में आते

ही पहले गहनों को छुड़ा लाऊँगा। मेरे बेटे के हृदय में साहस, आँखों में आँसू हैं; मेरा बेटा रोता-रोता चला गया--मेरा नवीन इसी धूप में इन्द्राबाद गया, मैं घर में बैठी रही—महापापिनी ! यही क्या तेरा माँ का हृदय है !

(सैरिन्ध्री का प्रवेश)

सैरिन्ध्री--माई जी, बहुत दिन चढ़ आया, नहाओ ! हमारा भाग्य खोटा है, नहीं तो ऐसी घटना क्यों होती ?

सावित्री—**(रोते-रोते)** नहीं बिटिया, मेरा नवीन जब तक घर नहीं लौटता तब तक अन्न-जल नहीं छूऊँगी; मेरे लाल को कौन खिलाएगा ?

सैरिन्ध्री--वहाँ देवर जी के टिकने की जगह है, रसोइया है, कष्ट नहीं होगा, तुम चलो, नहाओ।

(तेल का बर्तन लेकर सरलता का प्रवेश)

छोटी बहू, तुम माई जी को तेल लगा नहला कर रसोईघर में ले आओ, मैं थाली परोसूँ।

(सैरिन्ध्री का प्रस्थान, सरलता का तेल लगाना)

सावित्री—मेरा तोता मौन हो गया है, बिटिया के मुँह से अब बात नहीं निकलती, बिटिया मेरी बासी फूल की तरह मुरझा गई है।—हाय ! बिन्दुमाधव को कितने दिनों से नहीं देखा, भैया का कालेज बन्द होगा, घर आएँगे, राह देख रही हूँ, इसी बीच यह विपत्ति आई।—**(सरलता की ठुड्डी पकड़ कर)** बिटिया का मुँह सूख गया है, शायद अभी तक कुछ खाया नहीं ? घोर विपत्ति में पड़ी हूँ, लालों ने खाया कि नहीं इसे देखूँ कब ? मैं आप ही नहा रही हूँ, तुम बिटिया कुछ खाओ, चलो मैं भी चलूँ।

(दोनों का प्रस्थान)

चतुर्थ अंक

प्रथम गर्भाङ्क

इन्द्राबाद की फ़ौजदारी कचहरी

(उड, रोग, मजिस्ट्रेट, अमले बैठे हैं---गोलकचन्द्र, नवीनमाधव, विन्दुमाधव, मुद्दई मुद्दालेह के मुख्तार, नाज़िर, चपरासी, अर्दली, रैयत वग़ैरह खड़े हैं)

पहला मुख्तार---अधीन की इस दरख़ास्त की प्रार्थना मंजूर की जाय।

(सिरिश्तेदार के हाथ में दरखास्त देना)

मजिस्ट्रेट---अच्छा पढ़ो (**उड साहब से सलाह करना और हँसना**)

सिरिश्तेदार---(**पहले मुख्तार के प्रति**) यह तो महाभारत लिख डाला है, दरखास्त का सार न हो तो क्या पूरी पढ़ी जाती है?

(दरखास्त के पन्ने उलटना)

मजिस्ट्रेट---(**उड साहब से बातचीत के बाद हँसी रोक कर**) खुलासा पढ़ो।

सिरिश्तेदार---आसामी और आसामी के मुख्तार की ग़ैरहाज़िरी में फ़रियादी के गवाहों की गवाही ली गई है---अर्ज़ है कि फ़रियादी के गवाहों को फिर हाजिर किया जाय।

मुदई का मुख्तार---धर्मावतार, मुख्तार लोग झूठी शठता, प्रवंचना में लगे हुए हैं सही में, अनायास हलफ़ उठाकर झूठ बोलते हैं; मुख्तार लोग निरन्तर नीच कामों में लगे रहते हैं, विवाहिता स्त्री को छोड़ कर वे अपने अमरालय बार महिलालय में समय बिताते हैं, फल-स्वरूप ज़मींदार लोग मुख्तारों से विशेष घृणा करते हैं, लेकिन अपना काम साधने के लिए उन्हें बुलाते हैं और बिस्तर पर बैठाते हैं। धर्मावतार, मुख्तारों का पेशा ही है ठगना; लेकिन निलहोंके

मुख्तारों से किसी प्रकार की कोई प्रवंचना नहीं हो सकती। निलहे साहब ईसाई हैं और ईसाई धर्म में झूठ को महापाप माना गया है; दूसरे का धन चुराना, परनारीगमन, नरहत्या आदि नीच कार्य ईसाई धर्म में अत्यन्त घृणित हैं। ईसाई धर्म में नीच काम करना तो दूर रहा, हृदय में नीच विचार को स्थान देने से नरकाग्नि में जलना पड़ता है; करुणा, क्षमा, विनय, परोपकार—ईसाई धर्म के प्रधान उद्देश्य हैं; ऐसे सच्चे सनातन धर्म परायण निलहों द्वारा झूठी गवाही दिलाना कदापि सम्भव नहीं है। धर्मावतार, हम लोग इस निलहे के तलब पानेवाले मुख्तार हैं; हम लोगों ने इसके चरित्र के अनुसार चरित्र-संशोधित किया है; हमारी इच्छा होने पर भी गवाहों को सिखाने-पढ़ाने की हिम्मत नहीं होती; क्योंकि सत्यपरायण साहबों को अगर नौकर की चालाकी की बात रंच मात्र भी मालूम हुई तो वे उसे यथोचित दण्ड देते हैं। मुद्दालेह का माना हुआ गवाह कोठी का अमीन मजकूर इस बात का एक दृष्टान्त है। रैयत की दादनी के रुपए से रैयत को वंचित किया था इसलिए दयावान् साहब ने उसे निकाल दिया है; और गरीब बाल-बच्चे वाले रैयतों के रोने-धोने से रुष्ट होकर उसे पीटा भी है।

उड—(**मजिस्ट्रेट के प्रति**) एक्स्ट्रीम प्रोवोकेशन, एक्स्ट्रीम प्रोवोकेशन !

मुद्दई का मुख्तार—हुज़ूर की तरफ़ से हमारे गवाहों से बहुतेरे सवाल किए गए थे, अगर वे सिखाए-पढ़ाए गवाह होते तो उन्हीं सवालों में पकड़ में आ जाते। कानूनदानों ने कहा है—'हाकिम आसामी का एडवोकेट स्वरूप है।' अतएव आसामी की ओर से जो सवाल हैं वे हुज़ूर की तरफ़ से ही हुए हैं। अतएव गवाहों को फिर ले जाने से आसामी को कुछ भी फ़ायदा पहुँचने की संभावना नहीं है, लेकिन गवाहों को तकलीफ़ हो सकती है। धर्मावतार, गवाह लोग खेती-बारी से जीने वाले गरीब रैयत हैं, वे अपने हाथों से हल पकड़कर स्त्री-पुत्रों का प्रतिपालन करते हैं; उनके दिन भर

खेतों में न रहने से खेती चौपट हो जाती है; खाने के लिए घर आने से खेती को नुकसान पहुँचता है इसलिए उनकी औरतें अँगौछे में खाना बाँध कर उन्हें खेत पर ही खिला आती हैं; किसान एक दिन के लिए भी खेत छोड़ते हैं तो उनका सत्यानाश होता है; इस समय इतने दूर के ज़िले में रैयतों को तलब करने से उनकी साल भर की मेहनत बर्बाद हो जाएगी; धर्मावतार ! जैसी आपकी मर्ज़ी।

मजिस्ट्रेट—कोई कारण तो नहीं देखता हूँ। **(उड से परामर्श करके)** ज़रूरत नहीं पड़ रही है।

मुद्दालेह का मुख्तार—हुज़ूर, निलहों की दादनी किसी भी गाँव का कोई रैयत स्वेच्छा से नहीं लेता है; अमीन खलासी के साथ निलहे साहब अथवा उनके दीवान घोड़े पर चढ़कर खेतों में जाकर अच्छी-अच्छी ज़मीन में कोठी का निशान लगाकर रैयतों को नील बोने का हुक्म दे आते हैं; बाद में ज़मीन के मालिकान को कोठी में पकड़ मँगवाकर ब्यौरेवार करके दादनी लिख लेते हैं। दादनी लेकर रैयत रोते-रोते घर जाते हैं; जिस दिन जो रैयत दादनी ले आता है उस दिन उस रैयत के घर में किसी के मरने जैसा रोना-धोना मच जाता है। नील बोकर दादनी पटा कर फ़ाज़िल रुपया निकलने पर भी रैयतों के नाम दादनी का बकाया है—खाते में ऐसा लिख दिया जाता है। एक बार दादनी लेने से रैयत सात पुश्त तक मुसीबत झेलते हैं। रैयतों को नील बोने में कितनी तकलीफ़ होती है इसे वे ही जानते हैं और दीनों के रक्षक परमेश्वर जानते हैं। पाँच रैयत जब मिल बैठते हैं तो एक दूसरे की दादनी का परिचय देते हैं और छुटकारा पाने का उपाय निकालते हैं; उन्हें दूसरे के सलाह-मशविरे की ज़रूरत नहीं पड़ती, वे अपनी झंझट से ही परेशान रहते हैं। ऐसे रैयत गवाही दे गए कि उन्हें नील बोने की इच्छा थी, सिर्फ़ मेरे मवक्किल ने उन्हें सलाह देकर और डर दिखाकर नील नहीं बोने दिया—यह अत्यन्त आश्चर्यजनक

और प्रत्यक्ष प्रतारण है। धर्मावतार, उन्हें हुजूर के सामने लाया जाय, अधीन दो सवालों में उनकी गवाही झूठी साबित कर देगा। मेरे मवक्किल का पुत्र नवीनमाधव वसु कराल नील-निशाचर के करों से लाचार किसानों की रक्षा करने के लिए प्राणप्रण चेष्टा किया करते हैं, इस बात को स्वीकार करता हूँ; और वे उड साहब का ज़ुल्म बन्द करने में कई बार सफल भी हुए हैं, यह बात पलाशपुर में आग लगाने के मुक़दमे के कागजा में देखी जा सकती है। लेकिन मेरा मवक्किल गोलकचन्द्र वसु बड़ा ही भोला आदमी है; निलहे साहबों से शेर से भी ज़्यादा डरता है, किसी झंझट में नहीं रहता, कभी किसी की बुराई नहीं करता, किसी को बुराई से बचाने के लिए भी साहस नहीं करता। गोलकचन्द्र वसु चरित्रवान् आदमी है इस बात को ज़िले के सभी आदमी जानते हैं। अमलों से पूछकर यह बात मालूम की जा सकती है।

गोलक—विचारपति! मेरा पिछले साल का नील का रुपया चुकता नहीं किया गया, फिर भी मैंने फ़ौजदारी के डर से साठ बीघे नील की दादनी लेनी चाही थी। बड़े बाबू ने कहा, 'पिता, हम लोगों की दूसरी आमदनीहै, एक या दो वर्ष नील के नुकसान से क्रिया-कलाप ही बन्द होगा, हमें खाने के लिए अन्न की बिलकुल कमी नहीं होगी; लेकिन जो लोग खेती पर ही सोलहों आने निर्भर करते हैं उनका क्या होगा? हम लोग इस हिसाब से नील बोएँगे तो सभी को ऐसा ही करना होगा।' बड़े बाबू ने ये बातें विज्ञ व्यक्ति की तरह कहीं। इसलिए मैंने कहा, तो साहब के हाथ-पैर जोड़ कर पचास बीघे पर राजी कराऊँ। साहब ने हाँ-ना कुछ भी नहीं कहा, गुप्त रूप से इस बुढ़ापे में मुझे जेल भेजने की तैयारी की। मैं जानता हूँ, साहबों से मिल-जुल कर रहने में ही कल्याण है, साहबों का देश है, हाकिम भाई ब्रादर हैं, साहबों से बिगाड़ करके

क्या चलना चाहिए ? मुझे छोड़ दीजिए, मैं प्रतिज्ञा करता हूँ कि अगर हल-बैल की कमी के कारण नील न बो सकूँ तो हर साल नील के बदले साहब को सौ रुपए दूँगा। मैं क्या रैयतों को सिखाने वाला आदमी हूँ ? मुझसे क्या उनकी मुलाक़ात होती है !

मुद्दालेह का मुख्तार—धर्मावतार, जिन चार रैयतों ने गवाही दी है उनमें एक के पास बहुत मामूली ज़मीन है—उसके पास किसी ज़माने में भी हल नहीं था, ज़मीन नहीं है, जोत नहीं है, बैल नहीं है, बथान नहीं है, सरज़मीन पर तहक़ीकात करने से यह बात साबित हो जाएगी। कन्हाई तरफ़दार दूसरे गाँव की रैयत है, उससे मेरे मवक्किल की मुलाकात नहीं, वह व्यक्ति शिनाख्त करने में असमर्थ है। इन्हीं कारणों से मैं उन्हें फिर से अदालत के सामने हाज़िर करने की प्रार्थना करता हूँ। व्यवस्था करने वालों ने लिखा है, 'समझौते के पहले आसामी को सभी प्रकार का उपाय करने देना चाहिए या उपाय करने की सुविधा देनी चाहिए।' धर्मावतार, मेरी इस प्रार्थना को मंजूर कर लेंगे तो मेरे मन में कोई मलाल नहीं रह जाएगा।

मुद्दई का मुख्तार—हुजूर. . . !

मजिस्ट्रेट—**(चिट्ठी लिखना)** बोलो, बोलो, मैं कानों से नहीं लिख रहा हूँ।

मुद्दई का मुख्तार—हुजूर, इस वक्त रैयतों को तकलीफ देकर जिले में बुलाने से उन्हें गहरा नुकसान पहुँचेगा, नहीं तो मैं भी प्रार्थना करता हूँ कि गवाहों को बुलाया जाय क्यों कि सवाल के कौशल से आसामी का साबित शुदा कसूर और भी साबित हो सकता है। धर्मावतार, गोलक बसु के दुश्चरित्र होने की बात चारों ओर फैली हुई है; उसका जो उपकार करता है वह उसी का अपकार करता है। अपार समुद्र लाँघ कर निलहे इस देश में आकर गुप्तनिधि निकाल कर देश का मंगल कर रहे हैं, राजकोष की धन-दौलत बढ़ा रहे हैं और आप लोग उपकृत हो रहे हैं। ऐसे महापुरुषों के

महान कार्य का जो व्यक्ति विरोध करता है उसकी जगह कारागार के सिवा और कहाँ हो सकती है?

मजिस्ट्रेट—(चिट्ठी का सिरनामा लिखना) चपरासी चपरासी—

चपरासी—ख़ुदाबन्द।

(साहब के पास जाना)

मजिस्ट्रेट—(उड से परामर्श करके) बीबी, उड के पास ले जाओ। —ख़ानसामा को बोलो, बाहर का साहब लोग आज नहीं जाएगा।

सिरिश्तेदार—हुजूर, क्या हुक्म लिखा जाय?

मजिस्ट्रेट—नत्थी में शामिल कर लो।

(मजिस्ट्रेट का दस्तखत)

सिरिश्तेदार—धर्मावतार, आसामी के जवाब के हुक्मनामे पर हुजूर का दस्तखत नहीं हुआ है।

मजिस्ट्रेट—पढ़ो।

सिरिश्तेदार—हुक्म होता है कि आसामी से दो सौ रुपए फी आदमी के हिसाब से दो आदमियों की जमानतें ली जांय और सफ़ाई के गवाहों के नाम बाक़ायदा सफ़ीना जारी किया जाय।

(मजिस्ट्रेट का दस्तखत)

मजिस्ट्रेट—मीर गाँव की डकैती का मुकदमा कल पेश करो।

(मजिस्ट्रेट, उड, रोग, चपरासी और अर्दली का प्रस्थान)

सिरिश्तेदार—नाज़िर महाशय, बाक़ायदा ज़मानतनामा लिखा पढ़ा लो।

(सिरिश्तेदार, पेशकार, मुद्दई के मुख्तार और रैयतों का प्रस्थान)

नाज़िर—(मुद्दालेह के मुख्तार के प्रति) आज शाम को ज़मानतनामा कैसे लिखा-पढ़ा जा सकता है, और तब जब कि मैं कुछ व्यस्त हूँ?

मुद्दालेह का मुख्तार—नाम बहुत बड़ा है सही, लेकिन कुछ भी नहीं

है—(**नाज़िर से परामर्श करके**) गहने बेच कर ये रुपए देने होंगे।

नाज़िर—मेरे तालुक भी नहीं है, व्यापार भी नहीं है, ज़मीन भी नहीं है; यही उपजीविका है। केवल तुम्हारी खातिरदारी के लिए सौ रुपए पर राज़ी हुआ। चलो, मेरे घर चलना होगा। कहीं दीवान जी भाई सुन न लें—उनकी पूजा अलग हुई है न?

(**सब का प्रस्थान**)

अंक ४

द्वितीय गर्भाङ्क

इन्द्राबाद—बिन्दुमाधव का मकान

(नवीनमाधव, विन्दुमाधव और साधुचरण बैठे हैं)

नवीन—मुझे अतएव घर जाना पड़ा। इस खबर को सुनते ही माता प्राण त्याग करेंगी। तुमसे क्या कहूँ, देखो, पिता को किसी तरह क्लेश न पहुँचने पाए। घर छोड़ना तय किया है, सर्वस्व बेचकर मैं रुपए भेज दूंगा; जो जितने रुपए माँगे उसे उतना ही देना।

विन्दु—जेल दारोगा रुपए नहीं चाहता, मजिस्ट्रेट साहब के डर से रसोई बनाने वाला ब्राह्मण नहीं ले जाने दे रहा है।

नवीन—रुपए भी दो, विनती भी करो!—ओफ़! जीर्ण शरीर है! तीन दिनों का अनाहार! इतना समझाया, इतनी विनती की, —कहते हैं, "नवीन, तीन दिन बीतने पर भोजन करूँ या न करूँ विचार करूँगा, तीन दिनों के अन्दर इस पापी मुँह में कुछ नहीं डालूंगा।"

विन्दु—पिता के मुँह में थोड़ा-सा अन्न कैसे दूं इसका कोई उपाय नहीं सूझ रहा है। निलहों के कृतदास मूढ़ मति मजिस्ट्रेट के मुँह से निठुर कारावास का आदेश निकलने के बाद से पिता ने आँखों पर जो हाथ रक्खा है उसे अभी तक नहीं हटाया, पिता के आँसुओं से हाथ बहे जा रहे हैं; जहाँ पहले पहल बैठाया था वहीं बैठे हुए हैं; मौन क्षीण-कलेवर स्पन्दनहीन मृत कपोतवत कारागार के पिंजड़े में पड़े हुए हैं। आज चौथा दिन है, आज उन्हें अवश्य ही भोजन कराऊँगा; आप घर जांय, मैं रोज पत्र लिखूंगा।

नवीन--विधाता ! पिता को न जाने कितना कष्ट दे रहे हो।--विन्दु, तुम्हें रात-दिन जेल में रहने दे तभी मैं निश्चिन्त हो कर घर जा सकता हूँ।

साधु—मैं चोरी करूँ, आप लोग मुझे चोर कह कर पकड़वा दें। मैं एक बार करूँगा तो मुझे जेल भेज दिया जाएगा, मैं वहाँ मालिक का नौकर बनकर रहूँगा।

नवीन--साधु, तुम ऐसे ही साधु हो। ओफ़ ! क्षेत्रमणि की घोर पीड़ा के समाचार से तुम जिस तरह व्याकुल हो, तुम्हें जितना जल्दी घर ले जा सकूँ उतना ही अच्छा।

साधु—(**लम्बी साँस**) बड़े बाबू, जाकर बेटी को क्या देख पाऊँगा ? मेरी और कोई संतान नहीं है।

विन्दु--तुम्हे जो अर्क दिया है उसे पिलाने से अवश्य ही व्याधि दूर होगी, डाक्टर बाबू ने आद्योपान्त सुनकर वह दवा दी है।

(**डेपुटी इन्स्पेक्टर का प्रवेश**)

डिप्टी—विन्दु बाबू, आप के पिता की रिहाई के लिए कमिश्नर साहब ने विशेष करके लिखा है।

विन्दु--लेफ़्टिनेण्ट गवर्नर रिहा कर देंगे, इसमें सन्देह नहीं।

नवीन—रिहाई का समाचार कितने दिनों में आ सकता है ?

विन्दु—पन्द्रह दिन से अधिक नहीं लगेंगे।

डिप्टी—अमरनगर के असिस्टेण्ट मजिस्ट्रेट ने एक मुख्तार को इस क़ानून में छः महीने की सजा दी थी। उसे सोलह दिन जेल में रहना पड़ा।

नवीन—ऐसे दिन क्या आएँगे ? गवर्नर साहब अनुकूल होकर प्रतिकूल मजिस्ट्रेट के घिनौने फ़ैसले का क्या खण्डन करेंगे ?

विन्दु—परमेश्वर हैं, अवश्य ही करेंगे। आप रवाना होइए, बहुत दूर जाना होगा।

(**नवीनमाधव, विन्दुमाधव और साधुचरण का प्रस्थान**)

डिप्टी—अहा ! दोनों भाई दुख के मारे जीवन्मृत हो गए हैं। लेफ़्टिनेण्ट गवर्नर की रिहाई की अनुमति दोनों सहोदरों की मृतदेह को पुनर्जीवित करेगी। नवीन बाबू अति वीर पुरुष, परोपकारी, दानी, विद्योतसाही, देशहितैषी हैं; लेकिन निर्दयी निलहों के तूफ़ान से नवीन बाबू के सद्‌गुण समूह के मुकुल म्रियमाण हो गए।

(कालेज के पण्डित का प्रवेश)

आइये, विराजिये।

पण्डित—स्वभावतः मेरा शरीर किंचित उष्ण है, धूप नहीं सहा जाता। चैत-बैसाख महीने के आतपताप से पागल हो जाता हूँ। कई दिनों से शिरः पीड़ा से अतिशय कातर हूँ; विन्दुमाधव की भीषण विपत्ति के समय एक बार भी नहीं आ सका।

डिप्टी—विष्णुतैल से आपको उपकार पहुँच सकता है। विष्णु बाबू के लिए विष्णुतैल प्रस्तुत किया गया है, आपके घर पर मैं कल थोड़ा-सा भेज दूँगा।

पण्डित—बड़ा बाधित हुआ। लड़कों को पढ़ाने से आदमी सहज ही पागल हो जाता है, तिस पर मेरा ऐसा शरीर है।

डिप्टी—बड़े पण्डित महाशय को आजकल नहीं देखता।

पण्डित—वे अपनी वृत्ति छोड़ने की राह तैयार कर रहे हैं; हीरे जैसा लड़का उपार्जन कर रहा है, उनकी गृहस्थी का निर्वाह राजा की तरह हो जाएगा। विशेष करके वृषकाष्ठ गले में बाँध कर कालेज जाना-आना अच्छा नहीं दीखता, अवस्था तो कम नहीं हुई।

(विन्दुमाधव का पुनः प्रवेश)

विन्दु—पण्डित महाशय आए हैं ?

पण्डित—गोपी ने ऐसा अविचार किया है ! तुम लोगों ने सुना नहीं है, बड़े दिनों में उस कोठी में लगातार दस दिन बिता आया है। उस से प्रजा के विचार की आशा ! काज़ी के सामने हिन्दू का पर्व !

विन्दु—विधाता की जैसी इच्छा !

पण्डित—मुख्तार किसे किया था ?

विन्दु—प्राणधन मल्लिक को !

पण्डित—उसे कहीं मुख्तारनामा देते हैं ? दूसरे किसी व्यक्ति को देने से फ़ायदा होता; सभी देवता समान हैं !

विन्दु—कमिश्नर साहब ने पिता की रिहाई के लिए सरकार के पास रिपोर्ट भेजी है।

पण्डित—जैसे नागनाथ वैसे साँपनाथ। जैसे मजिस्ट्रेट वैसा ही कमिश्नर !

विन्दु—महाशय, कमिश्नर को विशेष रूप से नहीं जानते इसीलिए ऐसा कह रहे हैं। कमिश्नर साहब अत्यन्त तटस्थ हैं, नेटिव लोगों की उन्नति की आकांक्षा रखते हैं।

पण्डित—जो भी हो, अब भगवान् की कृपा से तुम्हारे पिता मुक्त हो जांय तो सब मंगल है।—जेल में कैसे हैं ?

विन्दु—निरन्तर रो रहे हैं और पिछले तीन दिनों से कुछ भी नहीं खाया है। अब मैं जेल जाऊँगा, और यह शुभ समाचार सुना कर उनको प्रसन्न करूँगा।

(एक चपरासी का प्रवेश)

तुम जेल के चपरासी हो न ?

चपरासी—महाशय, ज़रा जल्दी जेल चलिए, दारोग़ा ने बुलाया है।

विन्दु—मेरे पिता को तुमने आज देखा है ?

चपरासी—आप चलिए, मैं कुछ नहीं कह सकता।

विन्दु—चलो भाई। (पण्डित के प्रति) अच्छा नहीं मालूम हो रहा है; मैं चला।

(चपरासी और विन्दुमाधव का प्रस्थान)

पण्डित—चलो, हम लोग भी जेल चलें, शायद कोई बुरी घटना हो गई होगी।

(दोनों का प्रस्थान)

———

अंक ४

तृतीय गर्भाङ्क

इन्द्राबाद का जेलखाना

(गोलक की मृत देह चादर की रस्सी से लटक रही है, जेल दारोग़ा और जमादार बैठे हैं)

दारोगा—विन्दुमाधव बाबू को कौन बुलाने गया है ?

जमादार—मुनीरुद्दीन गया है। डाक्टर साहब जब तक न आ जाँय तब तक तो उठाया नहीं जा सकता।

दारोगा—मजिस्ट्रेट साहब के आ जाने की बात है न ?

जमादार—जी नहीं, उनके आने में और चार दिनों की देर होगी। शनिवार को सच्चीगंज की कोठी में साहबों की शैम्पेन पार्टी है, बीबियों का नाच होगा। उड साहब की बीबी हमारे साहब के साथ नहीं नाच पाती; मैं जब अर्दली था, देखा है। उड साहब की बीबी बड़ी दयावान है, एक चिट्ठी में इस ग़रीब को जेल का जमादार बनवा दिया है।

दारोगा—हाय ! विन्दु बाबू, पिता ने भोजन नहीं किया है इसके लिए न जाने कितना विलाप किया था; यह दशा देख कर प्राण त्याग करेंगे।

(विन्दुमाधव का प्रवेश)

सभी परमेश्वर की इच्छा है।

विन्दु—यह क्या, यह क्या, हाय-हाय ! पिता ने फाँसी लगाकर आत्म-हत्या की है। मैं तो पिता की रिहाई की संभावना व्यक्त करने आ रहा हूँ, कैसा मनस्ताप है ! —**(अपना सिर गोलक की छाती**

में रख कर मृत देह का आलिंगन कर रोना) पिता, हमारी माया बिल्कुल छोड़ दी ? विन्दुमाधव के अँगरेजी ज्ञान का गौरव अब लोगों के सामने नहीं करेंगे ? नवीनमाधव को 'स्वरपुर-वृकोदर कहना समाप्त हुआ ? बड़ी बहू को 'मेरी मा, मेरी मा' कह कर विपिन से जो आनन्द कलह था उसकी सन्धि की। हाय ! चोर की तलाश में घूमने वाले बक-दम्पति में बक के व्याध द्वारा मारे जाने पर बच्चों से घिरी बक-पत्नी जिस प्रकार संकट में पड़ जाती है, मेरी जननी तुम्हारे फाँसी लगा कर मरने का समाचार पाकर उसी तरह होंगी--

दारोगा--(हाथ पकड़ कर विन्दुमाधव को छाती से लगा कर) विन्दु बाबू, इस समय इतने अधीर न् हों। डाक्टर साहब की अनुमति लेकर शीघ्र अमृतघाट के घाट पर ले जाने की तैयारी कीजिए।

(डिप्टी इन्स्पेक्टर और पण्डित का प्रवेश)

विन्दु--दारोग़ा साहब मुझे कुछ न कहें, जो परामर्श उचित समझें पण्डित महाशय और डिप्टी बाबू से करें; शोक-विकार से मेरा गला रुँध गया है; मैं जन्म भर के लिए एक बार पिता के चरण वक्ष पर धारण करके बैठूँ।

(गोलक के चरण वक्ष में धारण करके बैठना)

पण्डित--(डिप्टी इन्स्पेक्टर के प्रति) मैं विन्दुमाधव को गोद में पकड़े रहूँ, तुम बन्धन को खोलो--यह देव शरीर है, इस नरक में क्षण भर भी रखना उचित नहीं है।

दारोगा--महाशय, थोड़ी देर इन्तज़ार करना होगा।

पण्डित--आप नरक के द्वारपाल हैं क्या ? नहीं तो स्वभाव ऐसा क्यों हुआ ?

दारोगा --आप विज्ञ हैं, मुझे बेजा फटकार रहे हैं—

(डाक्टर साहब का प्रवेश)

डाक्टर—हो, हो, विन्दुमाधव, गॉड्स विल् !—पण्डित महाशय आए हैं, विन्दु को कॉलेज नहीं छोड़ना चाहिए।

पण्डित—कॉलेज के सिवा विधि नहीं होती।

विन्दु—हमारी ज़मीन-जायदाद सब गई, अन्त में पिता हमें दर-दर का भिखारी बनाकर गोलोक सिंधारे—(**रोना**)—पढ़ाई अब कैसे सम्भव है?

पण्डित—निलहे साहबों ने विन्दुमाधव का सर्वस्व ले लिया है।

डाक्टर—पादरी साहबों की ज़बानी मैंने प्लैण्टर साहबों की बात सुनी है और मैंने भी देखा। मैं मातंगनगर की कोठी से आया, एक गाँव में बैठा; मेरी पालकी के नज़दीक से दो रैयत बाज़ार गया, एक के हाथ में दूध था; मैं दूध खरीदने माँगा, एक रैयत एक रैयत को कुछ बोला, 'निलहा भूत, निलहा भूत' —दूध रख कर दौड़ा। मैं दूसरा रैयत को पूछा; वह बोला, 'दोनों रैयत दादनी के डर से भागा है; मैं दादनी लिया है, मुझे गोदाम में जाने का क्या जरूरत है।' मैं समझा मुझको प्लैण्टर समझा है। रैयत लोगों का हाथ में दूध देकर मैं चला गया।

डिप्टी—वैली साहब के कन्सर्न के एक गाँव के अन्दर से पादरी साहब जा रहे थे। रैयत उन्हें देख कर 'निलहा भूत निकला है, निलहा भूत निकला है', कह रास्ता छोड़कर अपने-अपने घर भाग गए थे। लेकिन पादरी साहब का दान, विनय, और क्षमा देख कर रैयतों को अचरज हुआ और निलहों के अत्याचार से पीड़ित प्रजा-पुंज के दुख से पादरी साहब जितनी आन्तरिक संवेदना प्रकट करने लगे, वे उतनी ही उनके प्रति श्रद्धा करने लगे। अब रैयत परस्पर कहते हैं—एक ही बँसवाड़ी में तरह-तरह के बाँस होते हैं।

पण्डित—हम मृत शरीर को ले जाँय?

डाक्टर—ज़रा देखना होगा; आप लोग बाहर जा सकते हैं।

(विन्दुमाधव और डिप्टी इन्स्पेक्टर द्वारा बन्धन खोल कर ले जाना और सभी का प्रस्थान)

पंचम अंक

प्रथम गर्भाङ्क

बेगूनबेड़े की कोठी के दफ़्तरखाने का आगे का भाग

(गोपीनाथ दास और एक गोप का प्रवेश)

गोपी—तूने इतनी ख़बर पाई कैसे ?

गोप—हम गँवई के रहने वाले हैं, हमेशा चलते-फिरते रहते हैं, नमक नहीं है तो नमक माँग लाते हैं, तेल नहीं है तो तेल माँग लाते हैं, लड़का रोने लगा तो गुड़ माँग लिया—वसु के घर का सात पुश्त खाकर आदमी हुए हैं, हम लोग उनकी खबर नहीं रखते ?

गोपी—विन्दुमाधव का ब्याह कहाँ हुआ था ?

गोप—वह जो गाँव है क्या कहते हैं, कलकत्ते के पच्छिम, जिस में उन्होंने कायथों को जनेऊ पहनाना चाहा था—जो बाभन हैं उन्हीं से पार पाना मुश्किल है। बाभनों को बढ़ाने से फ़ायदा क्या ? छोटे बाबू के ससुर का बड़ा मान है, छोटे लाट साहब टोपी खोले बग़ैर नहीं आ सकते। गाँव में कहीं वह लड़की देते हैं ? छोटे बाबू की लिखाई-पढ़ाई देख कर देहात नहीं माना। लोग कहते हैं कि शहराती लड़कियाँ कुछ घमण्डी होती हैं, और घरू हैं या बाज़ारू नहीं पहचाना जा सकता; लेकिन वसुओं की बहू की तरह शान्त लड़की तो नहीं दिखाई पड़ती; गोमा की माँ रोज़ उनके घर जाती है, ब्याह के पाँच साल हो गए हैं, एक दिन मुँह तक नहीं देख सकी; जिस दिन ब्याह कर लाए, हम लोगों ने उसी दिन देखा, सोचा शहराती बाबू लोग अँगरेज़ों के भक्त हैं, इसीलिए बीबी की तरह लड़की पैदा की है।

गोपी—वहू हमेशा सास की सेवा में लगी रहती है ?

गोप—दीवान जी महाशय, क्या कहूँ ? हमारे गोमो की मा ने कहा—टोले में बात फैल गई थी, छोटी बहू न होती तो जिस दिन फाँसी लगाने की खबर सुनी उसी दिन मा मर जाती। सुना था, शहराती लड़कियाँ मर्दों को भेड़ा बनाए रखती हैं, और मा-बाप को भूखों मारती हैं; लेकिन इस बहू को देख कर जाना कि ये बातें सिर्फ़ अफ़वाह हैं।

गोपी—नवीन बोस की माँ भी शायद बहू को बहुत प्यार करती हैं।

गोप—माई जी संसार में किससे प्यार नहीं करती, यह भी तो जाना नहीं जा सकता। ओफ़, यह औरत मानो अन्नपूर्णा हैं; और तुम लोगों ने क्या अन्न रक्खा है कि वे पूर्ण होंगी; गोरे की नील ने बूढ़े को खा डाला, बूढ़ी को भी अब तब खाने वाला है—

गोपी—चुप रह, साहब सुनेगा तो जीना दूभर हो जाएगा।

गोप—मैं क्या करूँ तुम तो खोद-खोद कर विष निकाल रहे थे। मेरी क्या यह साध है कि कोठी में बैठ कर गोरे साले को गाली-गलौज करूँ !

गोपी—मेरे मन में कुछ दुःख हुआ है, झूठा मुकदमा करके मानी आदमी को बर्बाद किया, नवीन का सिर दर्द और नवीन की माँ की यह बुरी दशा सुन कर मुझे बड़ा क्लेश पहुँचा है।

गोप—मेंढ़की को जुकाम ! दीवान जी महाशय, खफ़ा न हों, मैं ज़रा पागल सा हूँ।—चिलम-चढ़ा लाऊँ ?

गोपी—यह तो बड़ा बेवकूफ़ मालूम होता है।

गोप—साहब लोग सब करने लगे हैं; वे खुद ही लोहार हैं और खुद ही कटार भी; जिसकी जहाँ लाश गिराना चाहते हैं गिरा देते हैं। जहाँ साहब उजड़ जाते हैं वहाँ के लोग गंगा नहाकर अपना पाप धोते हैं।

गोपी—तू बड़ा बक-बक करता है, मैं अब सुनना नहीं चाहता; तू जा अब साहब के आने का समय हो गया है।

गोप—मैं चला, मेरे दूध का हिसाब करके मुझे कल एक रुपया देना होगा, हम लोग गंगा नहाने जाएँगे।

(प्रस्थान)

गोपी—शायद उस सिरदर्द पर ही कल वज्र गिरेगा। साहब तुम्हारे पोखरे के किनारे नील बोएगा, उसे कोई रोक नहीं सकेगा। साहब की ज़्यादती है सही, पिछले साल रुपए न पाकर भी पचास बीघे नील बोने के लिए एक तरह से राज़ी हो गया है, उससे भी मन नहीं भरा। पूरब वाली ज़मीन के धान के खेतों के लिए ही इतना गोलमाल हो रहा है; नवीन बोस को देना ही उचित था; शीतला को प्रसन्न रखना ही अच्छा है। नवीन मरकर भी मारेगा।—(**साहब को दूर देखकर**) यह देखो शुभ्र-कान्ति नीलाम्बर आ रहे हैं। मुझे शायद पुराने दीवान के साथ कुछ दिनों तक रहना पड़गा।

(उड का प्रवेश)

उड—इस बात को कोई न जानने पाए कि मातंगनगर की कोठी का दंगा बड़ा होगा, लठैत सारे वहीं रहेंगे। यहाँ के लिए दस पोद शड़की वालों को इकट्ठा कर रखूँ। मैं जाएगा, छोटा साहब जाएगा, तुम जाएगा। साला गले में भगई बाँध कर गड़बड़ी नहीं मचा सकेगा, बीमारी है, दारोग़ा की मदद कैसे ला सकेगा ?

गोपी—ससुरे इतने कातर हो गए हैं कि शड़कीवालों की ज़रूरत नहीं पड़ेगी। हिन्दू के घर में फाँसी लगाकर खासतौर से जेल के अन्दर मरना बड़ा ही दोष का और धिक्कारास्पद है। इस घटना से ससुरों को अच्छा सबक मिला है।

उड—तुम समझता नहीं है। बाप के मरने से रास्कल खुश हुआ—बाप के डर से नील का दादनी लेता था, अब साले का वह डर चला गया, जैसा चाहेगा वैसा करेगा। साला ने हमारी कोठी को बदनाम कर दिया है। हरामज़ादा को कल हम गिरफ़्तार करेगा,

मजूमदार से दोस्ती कर देगा, अमरनगर का मजिस्ट्रेट जैसा हाकिम आने से बज्जात सब कर सकेगा।

गोपी—मजूमदार के मुकदमे में जो साज़िश की गई है, अगर नवीन बोस का यह विभ्राट न होता तो इतने दिनों में भयंकर हो उठती। अब भी कहा नहीं जा सकता कि क्या होगा, विशेष करके जो हाकिम आ रहे हैं सुना है कि वे रैयतों के पक्ष में हैं। मुफ़स्सिल में आने पर वे तम्बू लाते हैं, इससे कुछ घोटाला मालूम पड़ता है और डर भी लगता है।

उड—तुम डर-डर करके हमको दिक किया, निलहा साहब को किसी काम में डर है—गीदड़ का साला काम अच्छा नहीं लगता तो काम छोड़ दो।

गोपी—धर्मावतार, काम में ही डर लगता है, पहले का दीवान कैद हुआ तो उसका बेटा छै महीने की बाकी तलब लेने आया था; इस पर आपने दरखास्त देने को कहा; दरखास्त करने पर आपने हुक्म दिया कागज़ नहीं करने से तलब नहीं मिलेगी। धर्मावतार, नौकर के कैद होने पर क्या यही फ़ैसला है?

उड—मैं नहीं जानता!—अरे साला, पाजी, नमकहराम, बेईमान। तलब के रुपए से तुम्हारा क्या होता है? तुम लोग अगर नील का दाम का रुपया नहीं खाओ तब क्या बेडली कमीशन होता, तो क्या दुखी प्रजा लोग रोते-रोते पादरी साहब का पास जाता? तुम साला लोग ने सब बर्बाद किया है; माल कम हुआ तो तुम्हारा घर बेच कर लेगा—एरेन्ट, कावर्ड, हेलिश, नेव!

गोपी—हम लोग, हुजूर, कसाई के कुत्ते हैं, अँतड़ियों से ही पेट भरते हैं। धर्मावतार, आप लोग अगर, महाजन जैसे कर्ज़दार से धान वसूल करते हैं उसी तरह नील लेते तो नील कोठी की इतनी बदनामी न होती, अमीन खलासियों की भी ज़रूरत न होती, और मुझे 'गोपिया गू खोर, गोपिया गू खोर' कह कर सभी लोग गालियाँ न देते।

उड—तुम गू खाने वाला ब्लाइण्ड है, तुम्हारा आँख नहीं है—

(एक उम्मीदवार का प्रवेश)

मैंने इसी आँख से देखा है (अपनी आँखों में उँगली डालकर) महाजन लोग धान का खेत में जाता है और रैयतों से झगड़ा करता है। तुम इस आदमी को पूछो।

उम्मीदवार—धर्मावतार, मैं इस विषय के वहुतेरे दृष्टांत दे सकता हूँ। रैयत लोग कहते हैं, 'निलहे साहबों की वदौलत महाजनों के हाथों से छुटकारा पा रहे हैं।'

गोपी—(उम्मीदवार के प्रति स्वगत) अरे भाई, यह ख़ुशामद व्यर्थ है; कोई काम खाली नहीं है। (उड के प्रति) महाजन धान के खेतों में जाते हैं और अपने आसामियों से झगड़ा करते हैं यह बात सही है; लेकिन ऐसे जाने और झगड़ने के गूढ़ मर्म को समझने पर श्यामचन्द शक्ति वाण से भूखी प्रजा सुमित्रानन्दननिचय के निपतन, असामियों के शुभाभिलाषी महाजन के धान के खेत में घूमने से तुलना नहीं करते। हम लोगों और महाजनों में वड़ा फ़र्क़ है।

उड—अच्छा, मुझे समझाओ। कोई कारण हो सकता है। साला लोग हम लोग का सब तरह का बात कह रहा है, महाजन का बात कुछ नहीं कहता है।

गोपी—धर्मावतार, असामियों को साल भर में जितने रुपये चाहिए, सारा महाजन के घर से लाते हैं और खाने के लिए जितना धान चाहिए उसे महाजन के यहाँ से लेते हैं, वर्ष बीतने पर तम्बाकू, ईख, तिल, वगैरह बेचकर सूद समेत महाजन का रुपया अदा करते हैं, अथवा वाजार दर में महाजन को वे सारी चीजें देते हैं; और जो धान पैदा होता है, उससे महाजन का धान डेढ़ा या सवैया करके लौटा देते हैं, इसके वाद जितना बच रहता है उससे तीन-चार महीने का घर खर्च चलता है। अगर अकाल की वजह से या आसामी की फ़िज़ूलखर्ची की वजह से रुपया या धान बाकी रह

जाता है, बकाया नए खाते में बाक़ी लिख लिया जाता है; वह बाक़ी धीरे-धीरे वसूल होता रहता है; महाजन कभी भी आसामी के नाम नालिश नहीं करते; अतएव जो कुछ बाकी पड़ता है उसे महाजन लोग फिलहाल नुकसान समझते हैं; इसीलिए महाजन लोग कभी-कभी खेतों पर जाते हैं, धान की सफ़ाई ठीक से हो रही है या नहीं इसे देखते हैं, मालगुज़ारी देने के लिए आसामी ने जितने रुपए माँगे हैं उसके लायक ज़मीन में धान बोया गया है या नहीं उसके बारे में पूछताछ करते हैं। कोई-कोई अदूर-दर्शी आसामी धोखा देकर अधिक रुपए लेकर हमेशा कर्ज़ से परेशान रहकर महाजनों का नुकसान करते हैं और खुद भी कष्ट पाते हैं; इसी कष्ट का निवारण करने के लिए महाजन खेतों पर जाते हैं, 'निलहे भूत' होकर नहीं जाते हैं—(**जीभ काट कर**)—धर्मावतार, ये मुसल्ले हरामखोर बेटे कहते हैं।

उड—तुझे शनि ने पकड़ा है, नहीं तो तू इतनी छान-बीन क्यों कर रहा है, इसका कारण क्या है, नहीं तो तू इतना बेअदब क्यों हुआ है? बज्जात, Incestuous brute!

गोपी—धर्मावतार, गाली गलौज सुनने के लिए भी हम लोग, जेल जाने के लिए भी हम लोग; कोठी में डिस्पेंसरी-स्कूल बनने पर आप लोग; कत्ल होने पर हम लोग। हुज़ूर से सलाह करने जाने पर गुस्सा होते हैं, मजूमदार के मुकदमे में मेरे दिल को जो चोट पहुँची है उसे गुरुदेव ही जानते हैं।

उड—बहन...को एक साहसी काम करने के लिए कहा, वैसे ही साले ने मजूमदार की बात कही; मैं बार-बार कहता आ रहा हूँ कि तुम साला बड़ा नालायक है। नवीन बोस को शचीगंज गोदाम में भेजकर तुम क्यों नहीं शान्त होता?

गोपी—आप गरीब के माँ-बाप हैं, गरीब नौकर की रक्षाके लिए एक बार नवीन बोस से इस मुकदमे की बात पूछी जाय तो अच्छा होगा।

उड--चुप रहो, यू बैस्टर्ड ऑफ होर्स बिच, तेरा वास्ते हम कुत्ता से [मुलाकात करेगा--साला कॉवर्ड कायथ का वच्चा! **(पदाघात से गोपीनाथ का भूमि पर गिरना)** कमीशन में तुझे गवाही देने के लिए भेजने से तू हरामजादा सत्यानाश करता, डेविलिश निगर! **(फिर दो लात मारना)** इस मुँह से तुम केवट का माफिक काम देगा? साला कायथ, कालका काम देख के हम तुमको आपसे जेल भेज देगा।

(उड और उम्मीदवार का प्रस्थान)

गोपी--**(बदन झाड़ते-झाड़ते उठ कर)** सात सौ गिद्ध मार कर तब कहीं एक निलहे का दीवान होता है, नहीं तो अनगिनत मौजे हज़म कैसे हो जाते हैं? कितने ज़ोर से लात मारी, बाप रे! बेटा मानो हमारे कॉलेज-आउट बाबुओं की गाउन पहनी बीबी है।

(नैपथ्य में-दीवान, दीवान)

गोपी--बन्दा हाजिर। अब किसकी बारी है--

प्रेम सिन्धु नीरे बहे नाना तरंग!

(गोपीनाथ का प्रस्थान)

———

द्वितीय गर्भाङ्क

नवीनमाधव का शयनकक्ष

आदुरी--(**बिस्तर बिछाते हुए रोना**) हाय! हाय! हाय! कहाँ जाऊँ, छाती फटी जाती है, इस तरह मारा है केवल धक-धक कर रहा है, माई जी देखेंगी तो उनका कलेजा फट जाएगा। वह मर जाएँगी। पकड़ कर कोठी ले गए हैं, यह जानकर वे पछाड़ खा कर पेड़ के नीचे गिर कर रोने लगीं, गोद में उठाकर हमारे घर लाए इसे नहीं देख सकीं।

(**नैपथ्य में।** आदुरी, हम घर में ले जाएँगे?)

आदुरी--तुम लोग घर में ले आओ, उन लोगों में कोई यहाँ नहीं है।

(**मूर्छित नवीनमाधव को लेकर साधु और तोराप का प्रवेश**)

साधु--(**नवीनमाधव को बिस्तर पर सुला कर**) माई जी कहाँ हैं?

आदुरी--वे पेड़ के नीचे खड़ी देख रही हैं (**तोराप को दिखाकर**) ये जब भाग गए तो हम लोगों ने सोचा कि कोठी ले गए; वे पेड़ के नीचे पछाड़ खा-खा कर गिरने लगीं। हम भाग कर घर आयीं।--मरे लड़के को देखकर माई जी क्या ज़िन्दा रहेंगी? तुम लोग ज़रा ठहरो, मैं उन लोगों को बुला लाऊँ।

(**आदुरी का प्रस्थान--पुरोहित का प्रवेश**)

पुरोहित--हे विधाता! ऐसे आदमी को भी समाप्त किया! इतने आदमियों का अन्न मारा गया, बड़े बाबू फिर उठेंगे, ऐसा तो नहीं लगता।

साधु—परमेश्वर की इच्छा, वे मरे आदमी को भी जिला सकते हैं।

पुरोहित—शास्त्र के अनुसार त्रिरात्रि को विन्दुमाधव ने भागीरथी के तीर पर पिण्डदान किया है, केवल मालकिन जी के अनुरोध पर मासिक श्राद्ध के बाद यहाँ से डेरा डण्डा उखाड़ना तय हुआ था और मुझसे कहा था, अब फिर दुर्दान्त साहवों से मुलाकात भी नहीं करेंगे, तो आज क्यों चले गए?

साधु—बड़े बाबू का अपराध नहीं है, सोचने-विचारने की भी त्रुटि नहीं है। माई जी और बहू जी ने बहुत तरह से मना किया था। उन्होंने कहा, 'जो थोड़े से दिन यहाँ रहा जा सकता है, हम कुएँ से पानी भर कर नहाएँगी, अथवा आदुरी पोखरे से पानी ला देगी, हमें कोई क्लेश नहीं होगा।' बड़े बाबू ने कहा, 'मैं पचास रुपए नजर देकर साहब का पैर पकड़ कर कहूँगा कि पोखरे के किनारे नील मत बोओ, इस विपत्ति में झगड़े की कोई बात नहीं कहूँगा।' यह तय करके बड़े बाबू मुझे और तोराप को साथ ले कर नील खेत पर गए और रोते-रोते साहब को कहा, 'हुजूर! मैं आपको पचास रुपए सलामी दे रहा हूँ, इस साल यहाँ नील न बोएँ; और अगर यह भिक्षा नहीं देते हैं तो रुपए लेकर गरीब पितृहीन प्रजा के प्रति कृपा करके श्राद्ध के नियम भंग के दिन तक।' नराधम ने जो उत्तर दिया था उसे दोहराना भी पाप है; अभी शरीर रोमांचित हो रहा है। बेटे ने कहा, 'यवन की जेल में चोर-डाकुओं के साथ तेरे पिता ने फाँसी लगाई है, उसके श्राद्ध में बहुत से साँड़ काटना होगा, उसके लिए रुपए रख दे'; और पैर का जूता बड़े बाबू के घुटनों से लगाकर कहा, 'तेरे बाप के श्राद्ध में यही भिक्षा है।'

पुरोहित—नारायण! नारायण! **(कानों पर हाथ रखना)।**

साधु—उसी दम बड़े बाबू की आँखें लाल हो गईं, शरीर थर-थर काँपने लगा, दाँतों से ओठ काटने लगे; और क्षण भर चुप रह कर बड़े ज़ोर से साहब की छाती पर ऐसी लात मारी कि बेटा फूस के बोझ की तरह धप् से चित जा गिरा। कशिया ढाली, जो अब कोठी

का जमादार हुआ है, उस बेटे और दस शड़की वालों ने बड़े बाबू को घेर लिया; इन्हें बड़े बाबू ने एक बार डकैती के मुकदमे से बचाया था, शैतानों को बड़े बाबू के मारने में ज़रा शर्म आई। बड़े साहब ने उठ कर जमादार को एक घूसा मारकर उसके हाथ की लाठी बड़े बाबू के सिर पर मारी, बड़े बाबू का सिर फट गया और बेहोश होकर ज़मीन पर गिर पड़े; मैं बड़ी कोशिश करने पर भी गोल के भीतर नहीं जा सका; तोराप दूर खड़ा देख रहा था, बड़े बाबू के घिरते ही भैंसे की तरह दौड़कर गोल चीर कर बड़े बाबू को गोद में ले तेज़ी से भाग आया।

तोराप—मुझसे कहा, 'तू ज़रा दूर रह, क्या जानूं धर-पकड़ कर ले जाय।' मेरे ऊपर साले बहुत गुस्सा हैं; मार-पीट होगी यह जानने पर मैं क्या छिपा रहता? ज़रा पहले जाने पर बड़े बाबू को बचा ला सकता था और दो सालों को बरकत बीबी की दरगाह में ज़बह कर सकता था! बड़े बाबू का सिर देख कर मेरे हाथ-पैर ठण्डे हो गए तो सालों को मारता कब।—अल्ला! बड़े बाबू ने मुझे इतनी बार बचाया, मैं बड़े बाबू को एक बार नहीं बचा सका!

(सिर पीट कर रोना)

पुरोहित—छाती में किसी हथियार का घाव देख रहा हूँ?

साधु—तोराप के गोल में पहुँचते ही छोटे साहब ने गिरे हुए बड़े बाबू को तलवार से मारा, तोराप ने हाथ से रोका, तोराप का बायाँ हाथ कट गया, बड़े बाबू की छाती में जरा खरोच लगी।

पुरोहित—**(सोचकर)**

बन्धुस्त्रीभृत्यवर्गस्य बुद्धेः सत्वस्य चात्मनः।
आपन्निकषपाषाणे नरोजानाति सारताम्।

बड़े घर के किसी को नहीं देख रहा हूँ, लेकिन दूसरे गाँव का दूसरी जाति का तोराप बड़े बाबू के पास बैठा रो रहा है। ओफ़! ग़रीब खटकर खानेवाला आदमी है; हाथ बिल्कुल कट गया है।—इसका मुंह खून से कैसा लथपथ कैसे हो गया है!

साधु—छोटे साहब ने उसके हाथ पर तलवार चलाने पर दुम दबाने पर नेवला जिस तरह किचिर-मिचिर करता हुआ दाँत दबोच देता है, तोराप भी पीड़ा से व्याकुल हो कर बड़े साहब की नाक काट कर ले भागा था।

तोराप—नाक मैंने टेंट में रख छोड़ी है, बड़े बाबू जी गए तो दिखाऊँगा, यह देखो—(**कटी नाक दिखाना**), बड़े बाबू अगर आप भाग पाते तो मैं साले के दोनों कान उखाड़ लाता; खुदा का जीव है, जान नहीं मारता।

पुरोहित—पुस्तक में लिखा है, सुरपनखा की नाक काट लेने पर देवगणों को रावण के अत्याचार से छुटकारा मिला था; बड़े साहब की नाक काटने पर निलहों के उत्पात से क्या प्रजा को रिहाई नहीं मिलेगी?

तोराप—मैं अब धान की खत्ती में छिपा रहूँ, रात होने पर भाग जाऊँगा; साला नाक के लिए गाँव रसातल भेज देगा।

(नवीनमाधव के बिस्तर के पास जमीन पर दो बार सलाम करके तोराप का प्रस्थान)

साधु—मालिक के गंगालाभ की बात सुनकर माई जी सूख कर काँटा हो गई हैं। बड़े बाबू की यह दशा देखते ही प्राण त्याग करेंगी, इसमें संदेह नहीं।—इतना पानी दिया, छाती सहलाई, किसी भी तरह होश नहीं आया; आप ज़रा बुलाइए तो।

पुरोहित—बड़े बाबू, बड़े बाबू, नवीन माधव,—(**सजल नयनों से**)—प्रजापालक, अन्नदाता—आँखें हिला रहे हैं।—हाय! जननी इसी दम आत्म-हत्या करेंगी। फाँसी लगाने का समाचार सुनकर प्रतीज्ञा की है कि दस दिनों तक इस पापी संसार का अन्न नहीं ग्रहण करेंगी; आज पाँचवाँ दिन है; भिनसारे नवीनमाधव जननी का गला पकड़ कर बहुत रोए और बोले, 'माता! अगर आज आप भोजन नहीं करेंगी तो मातृ-आज्ञा-लंघन-जनित नरक को मस्तक रूप धारण करके मैं हविष्य नहीं करूँगा, बिना खाए रहूँगा।'

इस पर जननी ने नवीन का मुँह चूम कर कहा, 'बेटा, राजमहिषी थी, राजमाता बनी; मेरे मन में कोई खेद नहीं रह जाता यदि मरने के समय उनके चरणों को एक बार मस्तक पर धारण कर पाती; ऐसे पुण्यात्मा की अपमृत्यु हुई इसलिए मैं उपवास कर रही हूँ। दुखिया की आँखों की तुम लोग पुतली हो; तुम्हारा और विन्दु-माधव का मुँह देखकर मैं आज पुरोहित महाराज का प्रसाद ग्रहण करूँगी; तुम मेरे सामने आँसू न बहाओ।'—कह कर नवीन को पाँच साल के बच्चे की तरह गोद में ले लिया। **(नैपथ्य में विलाप सूचक ध्वनि।)**

(सावित्री, सैरिन्ध्री, सरलता, आदुरी, रेवती, नवीन की चाची, तथा दूसरी पड़ोसिनों का प्रवेश)

डर की बात नहीं, जीवित हैं,—

सावित्री—**(नवीन के मृतवत् शरीर को देख कर)** नवीनमाधव, भैया मेरे, बेटा मेरे, मेरे बेटे, कहाँ हो, कहाँ हो, कहाँ हो? हाय!

(मूर्छित होकर गिरना)

सैरिन्ध्री—**(रोते हुए)** छोटी बहू, तुम माई जी को पकड़ो, मैं प्राणकान्त को एक बार जी भर कर देखूँ। **(नवीनमाधव के मुँहके पास बैठ कर।)**

पुरोहित—**(सैरिन्ध्री के प्रति)** बेटी, तुम पतिव्रता, साध्वी, सती हो, तुम्हारा शरीर सुलक्षणों से मण्डित है; पतिरता सुलक्षणा भार्या के भाग्य से मृत पति भी जीवित हो जाता है; —आँखें हिला रहे हैं,—निश्चिन्त होकर सेवा करो।—साधु, मालकिन जी को जब तक होश नहीं आता तब तक तुम यहीं रहो।

(प्रस्थान)

साधु—माताजी की नाक पर हाथ रखकर देखो तो मृत, शरीर से भी उनका शरीर अधिक स्थिर देख रहा हूँ।

सरलता—**(नाक पर हाथ रखकर रेवती के प्रति धीरे से)** साँस अच्छी

चरह चल रही है, लेकिन मस्तक से ऐसी आग निकल रही है मानो मेरा गला जला जा रहा है।

साधु—गुमाश्ता महाशय कविराज बुलाने जाकर साहबों के हाथ में पड़ गए क्या? मैं कविराज के घर जाऊँ।

(प्रस्थान)

सैरिन्ध्री—हाय! हाय! प्राणनाथ! जिस जननी के उपवास के लिए इतना खेद कर रहे थे, जिस जननी की क्षीणता देख कर रात दिन चरणों की सेवा में लगे हुए थे, जो जननी कई दिनों से तुम्हें गोद में लिए बगैर सो नहीं पाती थीं, वही जननी तुम्हारे सामने मूर्छित होकर पड़ी हुई हैं, एक बार देखा भी नहीं?—**(सावित्री को देखकर)** हाय! हाय! वत्सहारा हम्मा रव करती घूमती हुई गाय सर्प के दंशन से पंचत्व प्राप्त होकर जिस तरह चारागाह में पड़ी रहती है, जीवनाधार-पुत्र-शोक में जननी उसी तरह धराशायी हुई हैं। प्राणनाथ! एक बार दृग खोलकर देखो, एक बार दासी को अमृत वयन से दासी कह पुकार कर श्रवण को तृप्त करो; मध्याह्न काल में मेरा सुखसूर्य अस्ताचल को गया; मेरे विपिन का क्या होगा! **(रुदन करते हुए नवीनमाधव की छाती पर गिरना)**

सरलता—अजी, तुम लोग बीबी को गोद में पकड़ो।

सैरिन्ध्री—**(उठकर)** मैं अत्यन्त शैशव में पितृहीन हुई थी। हाय! इस काल नील के लिए ही पिता को कोठी में पकड़ ले गए, पिता फिर नहीं लौटे। नील की कोठी उनके लिए यमलोक बन गई! मेरी कंगाल जननी मुझे लेकर ननिहाल गईं। पति-शोक में वहीं उनकी मृत्यु हुई; मामा ने नहीं मुझे पाल पोस कर बड़ा किया। मैं मालिनी के हाथ से अचानक गिरे पुष्प की तरह पथ पर गिरी थी। प्राणनाथ ने मुझे आदर के साथ उठाकर मेरा गौरव बढ़ाया था; मैं जनक-जननी का शोक भूल गई थी; प्राणकान्त के जीवन में मेरे पिता-माता पुनर्जीवित हुए थे—**(लम्बी साँस)** मेरे सारे

शोक नए बन रहे हैं। हाय ! सर्वाच्छादक पतिहीन होने पर मैं फिर माता-पिता-हीन होकर दर-दर की भिखारिन हो जाऊँगी।

(धरती पर गिरना)

चाची—**(हाथ पकड़कर उठाते हुए)** डर किस बात का? उतावली क्यों होती हो? बिटिया, विन्दुमाधव को डाक्टर लाने के लिए लिख दिया है। डाक्टर के आने पर ठीक हो जाएँगे।

सैरिन्ध्री—सझली दीदी, मैंने लड़कपन में व्रत किया था; ऐपन पर हाथ रख कर कहा था, राम की तरह पति मिले, कौशल्या की तरह सास मिलें, दशरथ की तरह ससुर मिलें, लक्ष्मण की तरह देवर मिलें। सझली दीदी, विधाता ने मुझे सब कुछ आशा से अधिक दिया था; तेज पुंज प्रजापालक रघुनाथ मेरे पति थे, अविरल अमृतमुखी वधुप्राणा कौशल्या मेरी सास हैं—स्नेहपूर्ण नयन प्रफुल्ल मुख बहूजी बहूजी कह कर चरितार्थ होती हैं; दसों दिशाओं को उद्भासित करने वाले मेरे ससुर हैं; शारद-कौमुदी-निन्दित विमल मेरे विन्दुमाधव सीताजी के देवर लक्ष्मण से भी प्रियतर हैं। माँ जी ! सभी मिले हैं, केवल एक बात में अनमेल देख रही हूँ—मैं अभी भी जीवित हूँ, राम बन जा रहे हैं, सीता के सहगमन का कोई आयोजन नहीं देख रही हूँ। हाय ! हाय ! अनाहार से पिता की मृत्यु की बात सुनकर अतिशय कातर थे, पिता के पारण के लिए ही दाग देने की हालत में स्वर्ग धाम सिधार रहे हैं। **(एकटक चेहरे को देखकर)** बलि जाऊँ, नाथ के होठ बिल्कुल सूख गए हैं। —अजी ! तुम लोग मेरे विपिन को पाठशाला से बुला दो, मैं एक बार—**(साश्रु नयनों से)**—विपिन के हाथों से पति के सूखे मुँह में जरा गंगाजल दिला दूँ।

(मुँह पर मुँह रखकर बैठना)

सभी—हाय ! हाय !

चाची—**(पकड़कर उठाते हुए)** बेटी, इस समय ऐसी बात ज़बान पर

न लाओ ! —(रोना) बेटी, अगर बड़ी दीदी को होश होता तो इस बात को सुनकर उनका कलेजा फट जाता।

सैरिन्ध्री—माँ, मेरे पति ने इस लोक में बड़ा क्लेश पाया, वे परलोक में परम सुखी हों, यही मेरी कामना है। प्राणनाथ ! तुम्हारी दासी आजीवन जगदीशवर को पुकारेगी। प्राणनाथ ! तुम परम धार्मिक, परोपकारी, दीनपालक थे; अनाथबन्धु विश्वेश्वर निश्चय ही तुम्हें स्थान देंगे। हाय ! हाय ! जीवनकान्त ! दासी को साथ ले चलो, तुम्हारे देवाराधना के लिए फूल चुन दिया करेगी।

आहा, आहा, मरि, मरि, ए कि सर्वनाश !
सीता छेड़े राम बुझि जाय वनवास ।।
कि करिब कोथा जाब किसे बाँचे प्राण।
विपद्-बान्धव करे विपदे विधान ।।
रक्ष-रक्ष रमानाथ ! रमणी विभव।
नीलानले हय नाश नवीनमाधव ।।
कोथा नाथ दीनानाथ ! प्राणनाथ जाय।
अभागिनी अनाथिनी करिये आमाय ।।

(ओह कितना घोर सर्वनाश हो गया ! लगता है सीता को त्याग कर राम वनवास जा रहे हैं। मैं क्या करूँ ? कहाँ जाऊँ ? कैसे प्राण बचाऊँ ? हे भगवान्, मेरी विपत्ति दूर करो ! ओ रमा नाथ ! इस नारी रत्न की रक्षा करो ! नवीनमाधव नील की अग्नि में जल रहा है ! हे दीनानाथ ! तुम कहाँ हो ! मेरा प्राण प्यारा जा रहा है मैं अनाथिनी, अभागिनी हुई जा रही हूँ।)

(नवीन का सीने पर हाथ रख कर लम्बी साँस लेना)

परिहरि परिजन परमेश पाय।
लय गति दिये पति विपदे विदाय ।।

दयार पयोधि तुमि पतितपावन।
परिणामे कर त्राण जीवन-जीवन॥

(वह बन्धु-वान्धवों को भगवान् के भरोसे छोड़ कर अपने पति को छोड़ कर वह जा रही है।

भगवान्, तुम दया सागर हो, पतितपावन हो, तुम जीवन के जीवन हो, तुम अन्त में मेरा त्राण करो।)

सरलता—दीदी, माँ जी ने आँखें खोली हैं, लेकिन मेरी ओर मुँह बना रही है। **(रोकर)** दीदी, माँ जी ने मेरी ओर इस तरह सकोप-नयनों से तो कभी नहीं देखा था।

सैरिन्ध्री—हाय! हाय! माँ जी सरलता को इस तरह प्यार करती हैं कि अनजाने किंचित रोषपूर्ण नयनों से देखकर ऐसे चंपा के फूल को आग में फेंक दिया है।—दीदी, रोओ मत, होश आने पर माँ तुम्हें फिर चूमेंगी और प्यार से पगली की बेटी कहेंगी।

सावित्री—**(उठकर नवीन के पास बैठ कर और किंचित आह्लाद प्रकट कर नवीन को एक टक देखते हुए)** प्रसव वेदना जैसी दूसरी वेदना नहीं है; लेकिन जिस अमूल्य रत्न को प्रसव किया है उसका मुँह देख कर सारा दुख दूर हो गया। **(रोते हुए)** अरे दुख! बीबी अगर यम को चिट्ठी लिख कर मालिक को नहीं मारती तो हीरे के टुकड़े जैसे बच्चे को देखकर कितना प्रसन्न होते। **(ताली पीटना)**

सभी—हाय! हाय! पागल हो गयी हैं।

सावित्री—**(सैरिन्ध्री के प्रति)** धाई बहू लड़के को ज़रा मेरी गोद में दो। तापित अंग को ज़रा शीतल करूँ, मालिक का नाम लेकर लड़के का मुँह चूमूँ—**(नवीन का मुँह चूमना)**।

सैरिन्ध्री—माँ, मैं तुम्हारी बड़ी पतोहू हूँ, देख नहीं रही हो, तुम्हारे प्राणों के राम अचेत पड़े हुए हैं, बोल नहीं पा रहे हैं।

सावित्री—अन्नप्राशन के समय बोल निकलेगी।—हाय! हाय! मालिक

होते तो आज कितनी खुशियाँ मनाई जातीं, बधावे बजते—
(**रोना**)

सैरिन्ध्री—सत्यानाश पर सत्यानाश ! माँ जी पागल हो गयीं।

सरलता—दीदी, जननी का बिस्तर छोड़ दो, मैं सेवा करके उन्हें स्वस्थ करूँ।

सावित्री—ऐसी चिट्ठी भी लिखी थी ? ऐसी खुशी के दिन बाजे नहीं बजे ? (**चारों ओर देखकर सशब्द उठ कर सरलता के निकट जा**) तुम्हारे पैरों पर पड़ती हूँ, बीवी जी, एक दूसरी चिट्ठी लिख कर यमलोक से मालिक को वापस ला दो। साहब की बीबी हो, नहीं तो मैं तुम्हारे पैर पकड़ती।

सरलता—माँ ! तुम मुझे जननी से भी अधिक स्नेह करती हो, माँ, तुम्हारे मुँह से ऐसी बात सुनकर मुझे यमलोक की यातना से भी अधिक कष्ट हुआ ! (**दोनों हाथों से सावित्री को पकड़कर**) तुम्हारी यह दशा देख कर मेरे अन्तःकरण में आग बरस रही है।

सावित्री—कस्बिन, पाजी, म्लेच्छ, मुझे एकादशी के दिन छू लिया !
(**हाथ छुड़ाना**)

सरलता—माँ ! तुम्हारे मुँह से ये बातें सुनकर मैं अब संसार में नहीं रह सकती। (**सावित्री के पैरों को धारण करके धरती पर लेट कर**) माँ ! मैं तुम्हारे पाद-पद्मों में प्राण त्याग करूँगी। (**रोना**)

सावित्री—खूब हुआ, नीच मर गई है; मेरे मालिक स्वर्ग सिधार गए, तू अभागी नरक में जाएगी।—(**हँसते हुए ताली पीटना**)।)

सैरिन्ध्री—(**उठकर**) हाय ! हाय ! सरलता मेरी अत्यन्त सुशीला है, मेरे सास की बड़े प्यारों की बहू है, जननी के मुँह से कुवाक्य सुनकर अतिशय कातर हुई है। (**सावित्री के प्रति**) बिटिया, तुम मेरे पास आओ।

सावित्री—धाई, लड़के को अकेला रख आई बिटिया, मैं जाऊँ।
(**दौड़कर नवीन के पास बैठना**)

रेवती—(**सावित्री के प्रति**) क्यों माँ, तुम जो कहती हो कि छोटी बहू जैसी बहू सारे गाँव में नहीं है, छोटी बहू को खिलाए बग़ैर तुम नहीं खाती हो, उसी छोटी बहू को तुमने कस्बिन कह कर गाली दी! क्यों माँ, तुम मेरी बात नहीं सुन रही हो, हम लोग तुम्हारा खाकर आदमी बने हैं, न जाने कितना खाने को दिया है।

सावित्री—मेरे लड़के के अठकौड़[1] के दिन आना; तुझे इनाम दूंगी।

चाची—बड़ी दीदी, तुम्हारा नवीन जी उठेगा, तुम पागल मत बनो।

सावित्री—तुमने जाना कैसे? उस नाम को तो और कोई नहीं जानता। मेरे ससुर ने कहा था, बहू जी के लड़का हुआ तो 'नवीनमाधव' नाम रक्खूंगा। मुझे लड़का मिला है, वही नाम रक्खूंगी। मालिक कहा करते थे, कब लड़का होगा, 'नवीनमाधव' कह कर बुलाऊँगा। (**रोना**)। अगर ज़िन्दा रहते तो आज वह साध पूरी होती।

(नैपथ्य में आवाज़)

वह बाजा आ गया—(**ताली पीटना**)।

सैरिन्ध्री—कविराज आ रहे हैं, छोटी बहू उठकर उस घर में जाओ।

(कविराज और साधुचरण का प्रवेश, सरलता, रेवती और पड़ोसिनों का प्रस्थान, सैरिन्ध्री घूँघट काढ़े एक ओर खड़ी है)

साधु—यह लो, माँ जी उठ बैठी हैं।

सावित्री—(**रोकर**) मेरे मालिक नहीं है इसलिए तुम लोग मुझे ऐसे दिन कूड़े पर फेंक आए।

आदुरी—उनके घट में क्या चेत है, वे बिल्कुल पागल हो गई हैं। वे उस मरे बड़े हाल्दार को कह रही हैं, 'मेरा दुधमुहाँ बच्चा'; छोटी

---

१. जन्म के आठवें दिन होने वाला एक उत्सव।

हालदारिनी को बीबी कह कर न जाने कितनी गालियाँ दीं, छोटी हालदारिनी फफक कर रोने लगीं। तुम लोगों को कहा है 'बजनिया।'

साधु—ऐसी दुर्घटना हुई है!

कविराज—एक तो पतिशोक से उपासी हैं और दूसरे नयनानन्द नन्दन की ऐसी दशा; सहसा इस प्रकार पागल होना सम्भव और निदान सम्मत है। नाड़ी की गति देखना आवश्यक है। मालकिन जी, हाथ दीजिए—**(हाथ बढ़ाकर)**।

सावित्री—तू दाढ़ीजार का बेटा कोठी का आदमी है, नहीं तो भले आदमी की बेटी का हाथ पकड़ना क्यों चाह रहा है? **(उठकर)** धाई, लड़के को देखना बिटिया, मैं पानी पी आऊँ, तुझे लेली की साड़ी दूँगी।

(प्रस्थान)

कविराज—हाय! ज्ञानप्रदीप अब फिर प्रज्वलित नहीं होगा। मैं हिमसागर तैल भेजूँगा, उसी को सेवन करना इस समय को विधि है। —**(नवीन का हाथ पकड़ कर)** क्षीणताधिक्य मात्र है, दूसरा कोई बुरा लक्षण नहीं देख रहा हूँ। डाक्टर लोग दूसरे विषयों में नीम हकीम हैं सही, लेकिन चीर-फाड़ के मामले में अच्छे हैं; व्यय अधिक होगा, लेकिन एक डाक्टर बुलाना चाहिए।

साधु—छोटे बाबू को लिखा गया है कि डाक्टर साथ लेकर आएँ।

कविराज—अच्छा ही हुआ।

(चार सम्बन्धियों का प्रवेश)

पहला—ऐसी घटना होगी इसे हम स्वप्न में भी नहीं जानते थे, दोपहर के समय कोई भोजन कर रहा था, कोई नहा रहा था, कोई भोजन करके सो रहा था। मुझे अब मालूम हुआ।

दूसरा—हाय! सिर की चोट गहरी मालूम हो रही है। कैसी दुर्घटना है! आज झगड़ा होने की कोई संभावना नहीं थी, नहीं तो सारे रैयत हाज़िर रहते।

साधु—दो सौ रैयत लाठियाँ लेकर मार-मार कर रहे हैं और 'हाय बड़े बाबू! हाय बड़े बाबू।' कह कर रो रहे हैं। मैंने उन्हें अपने-अपने घर जाने के लिए कहा; क्योंकि कोई बहाना मिला तो साहब बिगड़ कर गाँव फूंक देगा।

कविराज—मस्तक को धोकर फिलहाल तारपीन का तेल लगाओ; इसके पश्चात् सायंकाल आकर दूसरी व्यवस्था कर जाऊँगा। रोगी के घर में हल्ला करने से व्याधि बढ़ जाती है; यहाँ किसी तरह की बातचीत नहीं होनी चाहिए।

(कविराज, साधुचरण और सम्बन्धियों का एक ओर तथा आदुरी का दूसरी ओर प्रस्थान, सैरिन्ध्री का बैठना।)

अंक ५

तृतीय गर्भाङ्क

साधुचरण का घर

(क्षेत्रमणि की शैय्या......एक ओर साधुचरण और दूसरी ओर रेवती बैठी है)

क्षेत्रमणि—बिस्तर झाड़कर बिछा, माँ बिस्तर छोड़ दो।

रेवती—प्यारी बिटिया, सोने की बिटिया, ऐसे क्यों बोल रही हो बिटिया? बिस्तर छोड़ दिया है बेटी, बिस्तर पर तो कुछ नहीं है बिटिया, हमारी गुदड़ी पर तुम्हारी चाची ने जो रजाई दी है उसी को तो बिछा रक्खा है बिटिया!

क्षेत्रमणि—मेरे बदन में काँटे चुभ रहे हैं। मरी, हाय, मरी; मेरा मुँह पिता की ओर फेर दो।

साधु—**(धीरे-धीरे क्षेत्रमणि का करवट बदल कर स्वगत)** बिस्तर गड़ना मृत्यु का पूर्व लक्षण है। (जाहिरा) मेरी बेटी दरिद्रों का रत्न है; बेटी कुछ खाओ न, इन्द्राबाद से तुम्हारे लिए अनार खरीद लाया हूँ; तुम्हें जिस चुनरी की बड़ी साध थी बेटी उसे भी खरीद लाया हूँ उसे देखकर तुम खुश तो नहीं हुई बेटी!

रेवती—मेरी बिटिया को कितनी साध है, कहा था सीमन्तोन्नयन के समय मुझे फूल की माला देनी होगी। हाय! मेरी बेटी कैसी हो गई है; क्या करूँ; बाप रे बाप! **(क्षेत्रमणि के मुँह के ऊपर मुँह रख कर)** सोने की क्षेत्र मेरी कोयले जैसी हो गई है—देखो, देखो, बेटी की आँख की पुतलियाँ कहाँ गईं।

साधु—क्षेत्रमणि! क्षेत्रमणि! अच्छी तरह से ताको बेटी!

क्षेत्र—कुदाल, माँ! बाबू! आह!

(करवट बदलना)

रेवती—मैं गोद में उठा लूँ, माँ की बेटी माँ की गोद में अच्छी रहेगी—

(गोद में उठाने के लिए उद्यत होना)

साधु—गोद में मत उठा, वह बेहोश हो जाएगी।

रेवती—ऐसी फूटी तकदीर थी! हाय! मेरा हारान मोर पर चढ़ा कार्तिकेय है, मैं हारान के रूप को भूलूँ कैसे, बाप रे!

साधु—राय का बेटा कब का गया अभी तक नहीं लौटा?

रेवती—बड़े बाबू मुझे शेर के मुँह से लौटा लाए। दाढ़ी जार के बेटे ने ऐसा घूँसा मारा कि बेटी का हमल भी गिर गया। इसके अलावा खींचातानी तो थी ही। हाय, नाती हुआ; खून का पुतला था फिर भी सभी अंग बन गए थे। अँगुलियाँ तक थी। छोटे साहब ने मेरी क्षेत्र को खा डाला और बड़े साहब ने बड़े बाबू को खा डाला। हाय, हाय! कंगालों की कोई रक्षा नहीं करता।

साधु—ऐसा क्या पुन्न किया है कि नाती का मुँह देखूँगा?

क्षेत्र—बदन फटा जाता है—कमर—ओफ़—ओफ़—ओफ़—

रेवती—नवमी की रात शायद बीत चली, मेरी सोने की प्रतिमा के जल में जाने पर मेरा क्या होगा! मुझे माँ कह कर कौन बुलाएगी! इसी के वास्ते ले आये थे।

(साधु का गला पकड़ कर रोना)

साधु—चुप रह, अभी मत रो।

(राईचरण और कविराज का प्रवेश)

कविराज—इस समय के उपसर्ग क्या हैं? औषध पिलाई गई थी?

साधु—औषध पेट में नहीं गई; जो कुछ गई भी थी फ़ौरन उल्टी हो गई। अब ज़रा हाथ तो देखिए, लगता है अन्तिम घड़ी का पूर्व लक्षण है।

रेवती—काँटा, काँटा, कह रही है; इतना मोटा बिस्तर बिछा दिया फिर भी मेरी बिटिया छटपटा रही है, ज़रा अच्छी तरह दवा लेकर प्राणदान कर जाइए।—यह मेरी बड़ी प्यारी बिटिया है।

साधु—नाड़ी नहीं मिलती ?

कविराज—**(हाथ पकड़ कर)** ऐसी दशा में नाड़ी का क्षीण होना अच्छा लक्षण है—

क्षीणे बलवती नाड़ी सा नाड़ी प्रणघातिका।

साधु—दवा इस समय देनी न देनी बराबर है; पिता-माता में अन्तिम घड़ी तक आश्वासन रहता है; देखिए अगर कोई उपाय हो।

कविराज—अरवा चावल का जल चाहिए; पूरी मात्रा में सूचिकाभरण सेवन करना ही इस समय की विधि है।

साधु—राईचरण उस घर में स्वस्त्ययन के लिए जो अरवा चावल बड़ी रानी ने दिया है उसे ले आ।

(राईचरण का प्रस्थान)

रेवती—हाय ! अन्नपूर्णा को क्या होश है कि वे अरवा चावल लेकर मेरी क्षेत्रमणि को देखने आएँगी; मेरी दशा देखकर ही माई जी पागल हो गई हैं।

कविराज—एक तो पति शोक से व्याकुल हैं, तिस पर पुत्र मृतवत् है; विक्षिप्तता क्रमशः बढ़ रही है; लगता है मालकिन जी नवीन के पहले ही परलोक सिधारेंगी; अतिशय क्षीण हो गई हैं।

साधु—बड़े बाबू को आज कैसा देखा ? मुझे लगता है, निलहे निशाचरों की अत्याचाराग्नि को बड़े बाबू ने अपने पवित्र शोणित से बुझा दिया। कमीशन से प्रजा का उपकार सम्भव है सही, लेकिन इसका नतीजा क्या होगा ? चैतन ताल के एक सौ करैत साँप अगर मेरे सारे बदन में काटते हैं तो मैं उसे भी सह सकता हूँ; ईंट के बने भट्ठे पर बड़ी कड़ाही में उबलते हुए गुड़ में डूबना मैं सह सकता हूँ; अमावस की रात में हल्ला मचाते हुए निर्दयी दुष्ट डाकू सुविद्वान एक मात्र पुत्र का बध करके आँखों के सामने परम सुन्दरी पतिप्राणा दस महीने की गर्भवती सहधर्मिणी के पेट में लात मार गर्भ गिरा सात पुश्त की कमाई सम्पत्ति का अपहरण कर ले जाँय, मेरी आँखों को तलवार से फोड़ दें, इसे भी सह सकता हूँ;

गाँव में एक की जगह दस नील की कोठियाँ बनें यह भी सह सकता हूँ; लेकिन एक क्षण के लिए भी प्रजापालक बड़े बाबू का विरह नहीं सह सकता।

कविराज—जिस आघात से सिर फट कर भेजा निकल आया है वह भयंकर है। सान्निपातिक उपक्रम देख आया हूँ; दोपहर या संध्या को मृत्यु होगी। विपिन के हाथों से ज़रा-सा गंगाजल मुँह में डलवाया गया, वह भी निकल आया। नवीन की स्त्री पतिशोक से व्याकुल है लेकिन फिर भी पति की सद्‌गति के उपाय के प्रति अनुरक्त है।

साधु—हाय! हाय! माई जी अगर विक्षिप्त न हो गईं होतीं तो यह दशा देख कर मर जातीं—डाक्टर बाबू ने भी कहा है कि सिर की चोट गहरी है।

कविराज—डाक्टर बाबू अत्यन्त दयावान हैं; विन्दु बाबू रुपया देने लगे तो वे बोले, 'विन्दु बाबू, तुम लोग परेशान हो, तुम्हारे पिता का श्राद्ध होना भी सम्भव नहीं है, इस वक्त मैं तुमसे कुछ भी नहीं ले सकता, मैं जिस पालकी से आया हूँ उसी से चला जाऊँगा, तुम्हें उन्हें कुछ नहीं देना होगा।' दुःशासन डाक्टर होता तो मालिक के श्राद्ध का रुपया ले जाता; शैतान को मैंने दो बार देखा है, जैसा दुर्मुख है वैसा ही अर्थपिशाच भी।

साधु—छोटे बाबू डाक्टर बाबू के साथ क्षेत्रमणि को देखने आए थे लेकिन कोई व्यवस्था नहीं की। निलहों के अत्याचार से मेरा अन्नकष्ट देख क्षेत्र-मणिका नाम लेकर डाक्टर बाबू मुझे दो रुपए दे गए हैं।

कविराज—दुःशासन डाक्टर होता तो हाथ पकड़े बगैर ही कह देता नहीं बचेगा; और तुम्हारा एक बैल बेचकर रुपए ले जाता।

रेवती—मैं सर्वस्व बेच कर रुपए दे सकती हूँ, मेरी क्षेत्र को अगर कोई बचा दे।

(चावल लेकर राईचरण का प्रवेश)

कविराज—पथलौटी में चावल धोकर पानी ले आओ।

(रेवती का चावल लेना)

जल अधिक न देना —पथलौटी बड़ी अच्छी देख रहा हूँ।

रेवती—माई जी गया गई थीं, वहाँ से पथलौटियाँ लाई थीं। मेरी क्षेत्र को भी एक दी थी। हाय! मेरी वही माई जी पागल हो गई हैं; सिर पीट कर मर न जाँय इसलिए दोनों हाथों को रस्सी से बाँध रखा गया है।

कविराज—साधु, खरल लाओ, मैं दवा निकालूँ।

(औषध की डिबिया खोलना)

साधु—कविराज महाशय, अब दवा नहीं निकालनी पड़ेगी, आँखों को जरा देखिए—राईचरण इधर आ।

रेवती—मेरी माँ! मेरे भाग्य में क्या लिखा है! माँ! हारानका रूप कैसे भूलूँगी, माँ! माँ!—अरी क्षेत्र, अरी क्षेत्र, क्षेत्र-मणि! बेटी! अब क्या नहीं बोलोगी, मेरी बिटिया, हाय दैया! हाय दैया! हाय दैया!

(रोना)

कविराज—अन्तिम क्षण समुपस्थित है।

साधु—राईचरण, पकड़, पकड़।

(साधुचरण और राईचरण का शैय्या सहित क्षेत्र को बाहर ले जाना)

रेवती—मैं सोने की लक्ष्मी को नहीं वहा सकती! बेटी, मैं कहाँ जाऊँ री! साहब के साथ रहना मेरे लिए अच्छा था बेटी! मैं मुँह देख कर जुड़ाती बेटी! हाय! हाय! हाय!

कविराज—हाय! हाय! हाय! माँ का कैसा विलाप है! सन्तान न होना ही अच्छा है।

(प्रस्थान)

अंक ५

चतुर्थ गर्भाङ्क

गोलक वसु के मकान का दालान

(नवीनमाधव के मृत शरीर को गोद में लेकर सावित्री बैठी है)

सावित्री—आ री निंदिया, भैया को आ री निंदिया! गोपाल को देखकर मेरी छाती शीतल हो जाती है, सोने जैसा मुखड़ा देखकर मुझे वही मुखड़ा याद आ जाता है—**(मुँह चूमना)**। भैया मेरे सो गए हैं।—**(सिर पर हाथ रखना)** हाय, हाय, मच्छड़ों ने काटकर कैसी गति बना दी है? —गर्मी लगती है तो क्या करूँ, अब मशहरी लगाए बगैर नहीं सोऊँगी—**(छाती पर हाथ रखना)** मरी जाती हूँ, माँ से क्या सहा जाता है, खटमलों ने इस तरह काटा है कि भैया के कोमल शरीर से खून निकल रहा है। भैया का बिस्तर कोई नहीं लगा देता; गोपाल को सुलाऊँ कैसे? मेरे क्या कोई है, मालिक के साथ सब कुछ चला गया **(रोना)**। लड़के को गोद में ले कर रो रही हूँ, भाग्य फूट गया है! **(नवीन का मुंह देखकर)** दुखिया का धन मुझे दिवालिया बना रहा है। **(मुंह चूम कर)** नहीं भैया, तुम्हें देख कर मैं सब दुख भूल गई हूँ, रो नहीं रही हूँ, **(मुंह में स्तन डाल कर)** मेरे गोपाल दूध पीओ, दूध पीओ। नीच का पैर पकड़ा फिर भी मालिक को जरा ला नहीं दिया; उससे जैसी यारी है, बिकती तो यमराज भी छोड़ देता। **(अपनी रस्सी देख कर)** विधवा हो कर हाथ में गहना रखने से पति की गति नहीं होती। चिल्लाकर रोने लगी फिर भी मुझे शंख की चूड़ी पहना दी। दिए में जला डाला है फिर भी है। **(दाँत से हाथ की रस्सी काटना)** विधवा हो कर

हाथ में गहना पहनना शोभा नहीं देता; हाथ में फफोले पड़ गए हैं। **(रोना)** मेरी शंख की चूड़ियाँ पहनना जिसने खत्म कर दिया है उसके हाथ की शंख की चूड़ियाँ त्रिरात्रि में उतरें—**(ज़मीन पर अंगुली फोड़ना)**। खुद ही बिस्तर लगाती हूँ **(मन ही मन बिस्तर लगाना)**। चटाई को साफ़ नहीं किया। **(हाथ बढ़ा कर)** तकिया पहुँच के बाहर है; गुदड़ी मैली हो गई है। **(हाथ से घर का फ़र्श साफ़ करना)** भैया को सुलाऊँ **(धीरे-धीरे नवीन के मृत शरीर को धरती पर रख कर)** माँ से तुम्हें डर किस बात का बेटा? आराम से लेटे रहो; थूक जाऊँ—**(छाती पर थूकना)**। बीबी बेहया अगर आज आती है तो गला दबोच कर उसे मार डालूंगी। बेटे को आँखों से ओझल नहीं करूँगी। मैं लकीर खींच जाऊँ **(उँगली से नवीन की मृत देह के चारों तरफ घर के फ़र्श पर लकीर चते हुए मंत्र पढ़ना।)**

सापेर फेना बाघेर नाक।
धुनोर झागुन चड़ोक् पाक॥
सात सतीनेर सादा चुल।
भाँटिर पाता धुत्रो फूल॥
नीलेर बिचि मरिच पोड़ा।
मड़ार माथा मादार गोड़ा॥
हन्ने कुकुर चोरेर गंडी।
यमेर दाँते एइ गंडी॥

(साँप का फेन, बाघ की नाक, धूने की झाग, चड़क घूमना, सात सौतों के पके बाल, भाँटी का पत्ता, धतूरे का फूल, नील का बीज, जली लाल मिर्च, मुर्दे का शिर, मदार की जड़, पागल कुत्ता, चोर का चंडी पाठ, इन्हीं से तीर का फल बनेगा जो यम के दाँत तोड़ेगा।)

(सरलता का प्रवेश)

सरलता——ये लोग कहाँ गईं।——हाय ! मृत शरीर की परिक्रमा कर रही हैं ! शायद, प्राणकान्त रास्ते की थकावट से ज़मीन पर गिरकर शोक-दु:ख-विनाशिनी निद्रा देवी के शरणापन्न हुए हैं। निद्रे, तुम्हारी कैसी लोकातीत महिमा है ! तुम विधवा को सधवा करती हो, विदेशी को देश में लाती हो, तुम्हारे स्पर्श से कारावासियों की जंजीरें टूट जाती है; रोगियों की तुम धन्वन्तरि हो; तुम्हारे राज्य में वर्ण भेद जनित भिन्नता नहीं हैं; तुम्हारा राजनियम जाति-भेद के कारण भिन्न नहीं होता; तुमने मेरे प्राणकान्त को अपने तटस्थ राज्य की प्रजा बनाया है, नहीं तो उनके पास से पागल जननी मृत पुत्र को कैसे लाई ? जीवन नाथ पिता भ्राता के विरह से अत्यन्त व्याकुल हुए हैं, पूनों का शशधर जिस प्रकार कृष्ण पक्ष में धीरे-धीरे घटता जाता है, जीवननाथ के मुख का लावण्य उसी तरह दिन-पर-दिन मुर्झाता हुआ समाप्त हो गया है। ——माँ, तुम कब उठ कर आई ? मैं आहार निद्रा छोड़ कर निरन्तर तुम्हारी सेवा में लगी हूँ; मैं क्या इतनी बेहोश हो गई थी ? तुम्हें स्वस्थ करने के लिए मैं तुम्हारे पति को यमलोक से ला दूंगी इस बात को स्वीकार किया है, तुम थोड़ी सी शान्त थी। इस घोर रजनी में, सृष्टि का संहार करने में लगे हुए प्रलय काल में घोर अंधकार से अवनी आवृत हो गई है; आकाश-मण्डल घनघोर घटाओं से आच्छन्न हैं; अग्निवाण की भाँति क्षण-पर-क्षण बिजली चमक रही हैं; प्राणी मात्र काल निद्रा जैसी निद्रा में अभिभूत हैं; सभी मौन हैं; शब्दों में केवल अरण्य के भीतर अंधकार में स्यारों का कोलाहल और चोरों के लिए अमंगलजनक कुत्तों का भौंकना सुनाई पड़ रहा है। ऐसी भयावनी रात में, जननी, तुम कैसे अकेले बाहर निकल कर मृत पुत्र को लाई ?

(मृत शरीर के निकट जाना)

सावित्री——मैंने गेंड़ली दी है, तू उसके अन्दर आई ?

सरलता—हाय ! ऐसे देश विजयी जीवनाधिक सहोदर के विच्छेद से प्राणनाथ के प्राण नहीं रहेंगे। **(रोना)**

सावित्री—तू मेरे लड़के को देख कर डाह कर रही है ? अरे सत्यानाशी, राँड, दाढ़ीजार की बेटी, तेरा भतार मर जाय; निकल, यहाँ से निकल, नहीं तो अभी तेरी गर्दन पर पैर रख कर तेरी जीभ खींच लूँगी।

सरलता—हाय ! मेरे सास-ससुर का ऐसा सुवर्णषड़ानन पानी में चला गया !

सावित्री—तू मेरे लड़के की ओर मत देख, तुझे मना कर रही हूँ, भतार खानेवाली। देखती हूँ, तेरी मौत क़रीब आ गई है।

(थोड़ा आगे जाना)

सरलता—हाय ! कृतान्त का करार कर कितना निष्ठुर होता है ! हे यम ! तुमने मेरी सरल सास के मन में ऐसा दुःख दिया !

सावित्री—फिर बुला रही है, फिर बुला रही है, **(दोनों हाथों से सरलता का गला दबोच कर जमीन पर गिरा कर)** पाजी कहीं की, यम की सुहागिन, अब तुझे मार डालूँ—**(गर्दन पर पैर रख कर खड़ी होना)**। मेरे मालिक को खाया है, अब मेरे दुधमुहे बच्चे को खाने के लिए अपने यार को बुला रही हो। मर्—मर्, मर्—!

(गर्दन पर नाचना)

सरलता—गूँ, हाय, गूँ—गाँ—गूँ—गाँ—

(सरलता की मृत्यु, विन्दुमाधव का प्रवेश)

विन्दु—यह तो यहाँ पड़ी हुई है !—माँ ! यह क्या ! मेरी सरलता को मार डाला, जननी ! **(सरलता का सिर हाथ पर लेकर)** मेरे प्राणों की सरला इस पाप से भरी पृथ्वी को छोड़ गई **(रोने के बाद सरलता का मुँह चूमना)**।

सावित्री—दाँतों से काट कर मार डाल बेहया को; मेरे दुधमुँहे बेटे को

खाने के लिए यम को बुला रही थी, इसीलिए मैंने गर्दन दबोचकर मार डाला।

बिन्दु—हे माता! जननी जिस तरह रात्रिकाल में अंगचालन से दूध पीते हुए छाती से चिपके दुधमुहे बच्चे को मार कर नींद खुलने पर विलाप से व्याकुल हो कर आत्म-हत्या करती है; आप में अगर अब शोक-दु:ख को भुलाने वाली विक्षिप्तता पैदा हो तो आप भी अपने प्राणों से अधिक सरलता के वध के मनस्ताप से प्राण-त्याग करें। माँ, तुम्हारे ज्ञान-दीपका क्या अब उन्मेष नहीं होगा? ज्ञान का संचार न होना ही अच्छा है, हाय! मृत-पति-पुत्रा नारी के लिए विक्षप्तता क्या सुखप्रद है! मन मृग विक्षिप्तता के पत्थर की दीवाल से घिरा हुआ है; शोक-शार्दूल आक्रमण करने में असमर्थ है।—माँ, मैं तुम्हारा बिन्दुमाधव हूँ।

सावित्री—क्या, क्या कहते हो?

बिन्दु—माँ, मुझसे तो अब जिया नहीं जाता, जननी! पिता के फाँसी लगाने और सहोदर की मृत्यु से आपने पागल हो कर सरलता की हत्या करके मेरे जले हृदय पर नमक छिड़का!

सावित्री—क्या? मेरा नवीन नहीं है, नवीन मेरा नहीं है? मरी, मरी, भैया मेरे, मेरे सोने के बिन्दुमाधव! मैंने तुम्हारी सरलता का वध किया है? मैंने पागल हो कर छोटी बहू को मार डाला है? **(सरलता के मृत शरीर का आलिंगन करना)** हाय, हाय! मैं पति-पुत्र विहीन होकर भी जीवित रह सकती थी, लेकिन तुम्हें अपने हाथों से मारकर मेरा कलेजा फटा जाता है।

(सरलता का आलिंगन करके जमीन पर गिर कर मरना।)

बिन्दु—**(सावित्री के बदन पर हाथ रखकर)** जो कहा वही हुआ। होश आने के कारण ही माँ की मृत्यु हुई! कैसी विडम्बना है! जननी अब गोद में लेकर मुँह नहीं चूमेंगी। माँ, मेरा अब माँ कहना क्या

समाप्त हो गया? (रोना) जन्म भर के लिए जननी की चरण धूलि सिर पर चढ़ाऊँ (**चरण धूलि सिर पर रखना**)। जन्म भर के लिए जननी का चरण रेणु भोजन करके मानवदेह को पवित्र करूँ--(**चरण धूलि फाँकना**)।

(**सैरिन्ध्री का प्रवेश**)

सैरिन्ध्री--देवर, मैं साथ मरूँ, मुझे बाधा मत दो, सरलता के पास मेरा विपिन बड़े सुख से रहेगा--यह क्या, यह क्या! सास बहू इस तरह क्यों पड़ी हुई हैं?

विन्दु--बड़ी बहू, माँ ने सरलता का वध किया, इसके बाद सहसा होश होने पर अत्यन्त शोक सन्तप्त हो कर स्वयं प्राण-त्याग किया।

सैरिन्ध्री--अभी? कैसे? सत्यानाश हुआ? क्या हुआ, क्या हुआ? हाय, हाय! अरी दीदी, मेरी बड़ी साध की बालों की रस्सी तुमने आज भी जूड़े में नहीं बाँधी! हाय, हाय! अब तुम दीदी कह कर नहीं पुकारोगी (**रोना**)--माँ, तुम राम के पास चली गई, मुझे जाने नहीं दिया। माँ, तुम्हें पाकर मैंने एक दिन भी अपनी माँ को याद नहीं किया।

(**आदुरी का प्रवेश**)

आदुरी--विपिन डर गया है, बड़ी हालदारिनी जल्दी आओ।

सैरिन्ध्री--तू वहीं से बुला सकती थी, अकेला रख आई है।

(**आदुरी के साथ तेज़ी से प्रस्थान**)

विन्दु--विपत्ति के सागर में विपिन मेरा ध्रुव नक्षत्र है। (**लम्बी साँस छोड़ते हुए**) नश्वर संसार में मानवलीला, प्रबल प्रवाहसमाकूला गहरी नदी के नीचे तटकी तरह क्षणभंगुर है। तट की कैसी विचित्र शोभा है! नयनाभिराम नवीन दुर्वादलों से ढँके खेत हैं, अभिनव पल्लव सुशोभित वृक्षराजि है, कहीं संतोष संकुलित धीवरों की कुटिया विराजमान है; कहीं नवदुर्वादल लोलुपा सवत्सा धेनु चरने में मग्न है; अहा! वहाँ भ्रमण करने से विहंगमों के सुललित तान और प्रस्फुटित वन-प्रसून सौरभ से मन्द-मन्द सुगन्ध लाने

वाले पूर्णानन्द आनन्दमय की चिन्ता में चित्त अवगाहन करता है। सहसा खेत में थोड़ी-सी फटी जगह देखकर अचिरात् शोभासह तट को तोड़ कर गहरे नीड़ में निमज्जित हो जाती हैं! कैसा परिताप है, स्वरपुर निवासी वसु वंश नील-कर्मनाशा में विलुप्त हो गया!—नीलका कर कैसा कराल है!

नीलकर विषधर विषपोरा मुख।
अनल शिखाय फेले दिल यत सुख॥

अविचारे कारागारे पितार निधन।
नील क्षेत्रे ज्येष्ठ भ्राता हलेन पतन॥

पति पुत्र शोके माता हये पागलिनी।
स्वहस्ते करेन वध सरला कामिनी॥

आमार विलापे मार ज्ञानेर संचार।
एकेबारे उथलिल दुःख पारावार॥

शोकशूले माखा हलो विष विड़म्बना॥
तखनि मलेन माता के शोने सान्त्वना॥
कोथा पिता कोथा पिता डाकि ज्ञानिषार।
हास्यमुखे आलिंगन कर एक बार॥
जननी जननी बले चारि दि के चाइ।
आनन्दमय मूर्त्ति देखिते ना पाइ॥
मा बले डाकिले माता अमनि आसिये।
बाछाबले काछे लन मुंख मुछाइये।
अपार जननी स्नेह के जाने महिमा।
रणे बने भीतमने बलि मा, मा, मा, मा॥
सुखावह सहोदर जीवनेर भाइ।
पृथिवी ते हेन बन्धु आर दुटि नाइ॥

नयन मेलिया दादा देख एक बार।
वाड़ी आसियाछे विन्दुमाधव तोमार॥

आहा! आहा! मरि मरि बुक फेटे जाय।
प्राणेर सरला मम लुकालो कोथाय॥
रूपवती गुणवती पतिपरायणा।
मरालगमना कान्ता कुरंगनयना॥
सहासवदने सती सुमधुर स्वरे।
बेताल करिते पाठ मम करे धरे॥
अमृत पठने मन हतो विमोहित।
विजन विपिने वनविहंग संगीत॥
सरला सरोजकान्ति किबा मनोहर।
आलो कर्ये छिल मम देह सरोवर॥
के ह्वील सरोरुह इहया निर्द्दय।
शोभाहीन सरोवर अंधकारमय॥
हेरि सब शवमय श्मशान संसार।
पिता माता भ्राता दारा मरेछे आभार॥

(निलहे विषधर साँप हैं। उनका मुँह विष से भरा हुआ है। उन्होंने हमारे सारे सुखों को भस्म कर दिया है। अन्याय से पिता जेल में मरे, बड़े भाई नील के खेत में मारे गये। माँ अपने पति और पुत्र के शोक में पागल हो गयी। उसने अपने हाथों से एक सरल रमणी को मार डाला, मेरे विलाप से माँ को रोश हुआ, उसके दुःख का अन्त नहीं रहा। शोक की तीव्र व्यथा में अभाव का ज़हर दिखाई पड़ा। ढाढ़स की बात कौन सुनता, माँ भी चल बसी। मैं बारम्बार पुकारता हूँ—पिता कहाँ हो? पिता कहाँ हो? हँसते हुये एक बार फिर मेरा आलिंगन करो। माँ! माँ। कहकर मैं चारों ओर निहारता हूँ। लेकिन आनन्दमयी माँ की मूर्त्ति कहीं नहीं दिखाई देती। अब मैं रण में, वन में जब कभी माँ माँ पुकारता हूँ। सुखदायी सहोदर जैसा बन्धु दुनिया में दूसरा नहीं। भैया! आँखें खोलकर एक बार देखो, तुम्हारा विन्दुमाधव घर लौट आया है। हाय! हाय! कलेजा टूक टूक रोता है। मेरी प्राण-प्रिय

सरला कहाँ जा छिपी। मेरी कान्ता रूपवती गुणवती पतिपरायणा मरालगमना कुरंगनयना थी। वह हँसती हुई मधुर स्वर में मुझे बैताल सुनाती थी। उसका पढ़ना निराले वन में चिड़ियों के संगीत जैसा लगता था। उससे मेरा मन विमोहित होता था। सरला सरोजकान्ति कितनी सुन्दरी थी। उसने मेरे हृदय सरोवर को आलोकित कर रखा था। किस निठुर ने मेरे कमल को मुझ से छीन लिया? सरोवर शोभाहीन अंधकारमय हो गया। मैं जिस संसार को देख रहा हूँ वह मुर्दों से पटा हुआ श्मशान है। मेरे पिता, माता, स्त्री सब मारे गये हैं!

हाय! ये बड़े भैया का मृतदेह ढूँढ़ने कहाँ गए?—वे आएँ तो गंगा यात्रा का आयोजन किया जाय। —हाय पुरुष सिंह नवीन-माधव के जीवन नाटक का अन्तिम अंक कैसा भयंकर है!

(सावित्री का चरण पकड़ कर बैठना)

(यवनि का पतन)

———
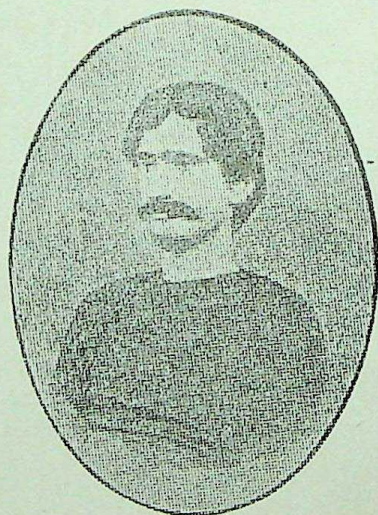
बंकिमचन्द्र

परिशिष्ट—१

दीनबन्धु-जीवनी

(बंकिमचन्द्र चट्टोपाध्याय)

पूरबी-बंगाल रेलवे के काँचरापाड़ा स्टेशन से कई कोस पूरब-उत्तर में चौबेड़िया नाम का गाँव है। यमुना नामक एक छोटी-सी नदी ने गाँव को क़रीब चारों ओर से घेर रखा है, इसीलिए इसका नाम चौबेड़िया पड़ा है, यह गाँव दीनबन्धु की जन्मभूमि है। गाँव नदीया ज़िले के अन्तर्गत है। बँगला साहित्य, दर्शन और धर्म्म-शास्त्र में नदीया ज़िले का बड़ा गौरव है। दीनबन्धु का नाम नदीया का एक और गौरव-स्थल है।

दीनबन्धु का जन्म १८२९ ई० में हुआ था। वे कालाचाँद मित्र के पुत्र थे। उनके बाल्यकाल के बारे में अधिक नहीं कहना है। दीनबन्धु कम उम्र में ही कलकत्ता आकर हेअर स्कूल में अँगरेज़ी पढ़ने लगे। इस विद्यालय में रहते समय ही उन्होंने बँगला में लिखना शुरू किया।

इसी समय उनका परिचय 'प्रभाकर'-सम्पादक ईश्वरचन्द्र गुप्त से हुआ। उन दिनों बँगला साहित्य की बड़ी दुरवस्था थी। तब 'प्रभाकर' सर्वोतकृष्ट पत्रिका थी। ईश्वर गुप्त का बँगला साहित्य पर एकाधित्य था। उनकी कविता से मुग्ध होकर बालकगण उनसे परिचय करने के लिए व्याकुल होते थे। ईश्वर गुप्त तरुण लेखकों को प्रोत्साहित करने के लिए सदा उत्सुक रहते थे। 'हिन्दू पेट्रियट' ने यथार्थ ही लिखा था कि, आधुनिक लेखकों में बहुतेरे ईश्वर गुप्त के शिष्य हैं। लेकिन ईश्वर गुप्त की दी हुई शिक्षा कहाँ तक स्थायी या वांछनीय हुई है, यह नहीं कहा जाय सकता। दीनबन्धु आदि अच्छे लेखकों की भाँति यह नगण्य लेखक भी ईश्वर गुप्त का ऋणी है।...

बँगला साहित्य के चार रसिक पटु लेखकों का नाम लिया जा सकता है—टेक चाँद, हुतोम, ईश्वर गुप्त और दीनबन्धु। इसमें दूसरा पहिले

का और चौथा तीसरे का शिष्य है। टेकचाँद और हुतोम में जितना सादृश्य है, ईश्वर गुप्त और दीनबन्धु में उतना न होने पर भी बहुत दूर तक था।...

मुझे जितना मालूम है, दीनबन्धु की पहिली रचना 'मानव-चरित्र' नामक कविता है। ईश्वर गुप्त द्वारा सम्पादित 'साधुरंजन' नामक साप्ताहिक में वह प्रकाशित हुई थी।...दूसरों को यह कैसी लगी थी नहीं कह सकता, लेकिन उसने मुझे बहुत मोहित कर लिया था। मैंने इस कविता को शुरू से आखिर तक कंठस्थ कर लिया था, और 'साधु-रंजन' का वह अंक जब तक अच्छी तरह फट नहीं गया तब तक उसे छोड़ा नहीं।...बहुतेरे दीनबन्धु की पहली रचना सुनकर प्रसन्न हो सकते हैं, इसलिए स्मृति के आधार पर उसकी दो पंक्तियाँ उद्धृत किए देता हूँ। उसका आरंभ इस प्रकार हुआ था—

मानव-चरित्र-क्षेत्रे नेत्र निक्षेपिया।
दुःखानले दहे देह, विदरये हिया॥

एक कविता इस प्रकार है—

जे दोषे सरस हय से जने सरस।
जे दोषे विरस हय से जाने विरस॥

एक और—

जे नयने रेणु अणु असि अनुमान।
वायसे हानिबे ताय तीक्ष्ण चंचु-बाज॥

—इत्यादि।

तभी से दीनबन्धु बीच-बीच में 'प्रभाकर' में कविता लिखते थे। उनकी कविताओं का पाठक समाज में समादर होता था। उन्होंने तरुणाई में जिस कवित्व-शक्ति का परिचय दिया था, उनके असाधारण 'सुर-धुनी' काव्य और 'द्वादश-कविता' में वह परिचय वैसा नहीं मिलता। उन्होंने दो साल जामातृ-षष्टी (दामाद छठ) के मौके पर 'जामाई-षष्टी' शीर्षक दो कविताएँ लिखीं। ये दोनों कविताएँ विशेष रूप से

प्रशंसित और सविशेष आग्रह के साथ पढ़ी गई थीं। दूसरे साल 'प्रभाकर' के जिस अंक में 'जामाइ-षष्टी' छपी थी, उसे फिर से छापना पड़ा था।...

दीनबन्धु ने 'प्रभाकर' में 'विजय-कामिनी' नामक एक छोटा सा उपाख्यान-काव्य लिखा था। नायक का नाम विजय, नायिका का नाम कामिनी था। शायद इसके दस-बारह साल बाद उन्होंने 'नवीन तपस्विनी' लिखी थी। 'नवीन तपस्विनी' के नायक का नाम भी विजय, नायिका का नाम कामिनी था। चरित्रगत उपाख्यान-काव्य और नाटक के नायकता नायिका में विशेष अन्तर नहीं होता। यह छोटा-सा उपाख्यान-काव्य सुन्दर बना था।

हेअर स्कूल से दीनबन्धु कालिज में गए और वजीफ़ा लेकर कई साल पढ़ते रहे। उनकी गिनती कालिज के अच्छे विद्यार्थियों में थी।

शायद १८५५ में दीनबन्धु कालिज से निकल कर १०० रुपए वेतन पर पटना में पोस्ट मास्टर बने। इस काम में ६ महीने के अन्दर ही उनकी प्रशंसा हुई। डेढ़ साल में ही उनकी तरक्क़ी हुई। वह ओड़िसा विभाग के इन्सपेक्टिंग पोस्ट मास्टर बनाए गए।

अब लगता है कि दीनबन्धु डेढ़ सौ रुपए के पोस्ट मास्टर बने रहते तो अच्छा होता, उनका इन्सपेक्टिंग पोस्ट मास्टर बनाया जाना मंगल-जनक नहीं हुआ था। पहिले इस पद के काम का नियम था भिन्न-भिन्न जगहों में घूमकर पोस्ट आफ़िसों का काम देखना। अब ६ महीने हेड-क्वार्टर में स्थायी रूप से रहा जा सकता है। पहिले यह नियम नहीं था। साल भर घूमते रहना पड़ता था। कहीं एक दिन, कहीं दो दिन, कहीं तीन दिन—इसी तरह रहना पड़ता था। सालों इस तरह निरन्तर परिश्रम करने से लोहे का शरीर भी टूट जाता है, निरन्तर घूमते रहने से लोहे का पहिया भी घिस जाता है। दीनबन्धु इस परिश्रम को सह न सके। बंग देश का दुर्भाग्य है कि वे इन्सपेक्टिंग पोस्ट मास्टर बने थे।

इससे हमारी पूंजी बर्बाद हुई है सही मगर कोई लाभ नहीं हुआ है, ऐसी बात नहीं है। उपहास निपुण लेखक के लिए एक विशेष शिक्षा

की आवश्यकता होती है। नाना प्रकार के मनुष्यों के चरित्र की पर्यालोचना से ही यह शिक्षा मिलती है। दीनबन्धु नाना स्थानों का भ्रमण कर नाना प्रकार के चरित्र वाले लोगों के सम्पर्क में आए थे। इस शिक्षा के कारण वह नाना प्रकार के रहस्यजनक चरित्रों का सृजन करने में सक्षम हुए थे। उनके लिखे नाटकों में जैसा चरित्र-वैचित्र्य है, वह बँगला साहित्य में बिरला ही दिखाई देता है।

ओड़िसा विभाग से दीनबन्धु का तबादला नदीया विभाग में हो गया और वहाँ से वह ढाका विभाग भेजे गए। इसी समय नील-सम्बन्धी गोल-माल शुरू हुआ। नाना स्थानों का भ्रमण कर दीनबन्धु ने नीलहों के अत्याचारों के बारे में अच्छी जानकारी हासिल की थी। इसी समय 'नील-दर्पण' लिख कर वंगाल की प्रजा को उन्होंने अपरिशोधनीय ऋण में आबद्ध किया।

दीनबन्धु भली-भाँति जानते थे कि, 'नील दर्पण' के लेखक होने की बात प्रगट हो जाने से उन्हें नुकसान पहुँचने की संभावना है। जिन अँगरेज़ अफ़सरों के अधीन वे काम करते थे, वे सभी नीलहों के दोस्त थे। विशेष करके डाकखाने के काम में नीलहों आदि बहुतेरे अँगरेजों के सम्पर्क में आना पड़ता था। उन्होंने दुश्मनी की तो खास नुकसान न पहुँचा पाने पर भी हमेशा चिन्तित कर सकते हैं। इन बातों को जानते हुए भी दीनबन्धु 'नील-दर्पण' प्रकाशित कराने में नहीं डिगे। 'नील-दर्पण' में ग्रंथकार का नाम नहीं था सही मगर ग्रंथकार का नाम छिपाने के लिए दीनबन्धु ने किसी प्रकार प्रयत्न नहीं किया था। 'नील-दर्पण' के प्रकाशित होने के बाद ही वंगाल के लोग किसी न किसी प्रकार जान गए थे कि दीनबन्धु ही इसके लेखक हैं।

दीनबन्धु दूसरों के दुःख से कातर होते थे, 'नील-दर्पण' इसी गुण का परिणाम है। उन्होंने वंगाल की प्रजा का दुःख सहृदयता के साथ सम्पूर्ण रूप से अनुभव किया था, इसीलिए 'नील-दर्पण' लिखा और प्रकाशित कराया। जो लोग दूसरों के दुःख से कातर होते हैं, दीनबन्धु उनमें अग्रगण्य थे। उनके हृदय का असाधारण गुण यह था कि दुःखी

जितना कातर होता था, दीनबन्धु उतना ही या उससे अधिक कातर होते थे। इसका अपूर्व उदाहरण मैंने स्वयं देखा है। एक बार वे यशोधर में मेरे घर पर ठहरे हुए थे। रात में उनका कोई मित्र बुरी तरह बीमार होने वाला था। बीमारी की आशंका करके उन्होंने दीनबन्धु को जगाया और सारी बात बताई। सुनकर दीनबन्धु बेहोश हो गए। जिन्होंने अपनी पीड़ा के लिए दीनबन्धु को जगाया था, अब वही दीनबन्धु की सेवा करने लगे। इस बात को मैंने अपनी आँखों से देखा है। उसी दिन मुझे पता चला था कि औरों में और जो भी गुण क्यों न हों, दूसरों के दुःख में दीनबन्धु की तरह कातर कोई नहीं होता। उसी गुण का नतीजा 'नील-दर्पण' है।

'नील-दर्पण' अँगरेजी में अनूदित होकर इंगलैंड पहुँचा। इसके प्रचार के लिए सुप्रीम कोर्ट के मुकदमे में लांग साहब को जेल की सज़ा मिली। प्रचार में सहायक होने के कारण सीटन-कार अपदस्थ हुए। यह कहानी सभी को मालूम है।

इस ग्रंथ के लिए लांग साहब जेल गए थे इसलिए हो, या इसके किसी विशेष गुण के कारण 'नील दर्पण' यूरोप की बहुतेरी भाषाओं में अनुदित होकर पढ़ा गया था। बँगला के और किसी ग्रंथ को यह सौभाग्य प्राप्त नहीं हुआ है। ग्रंथ का सौभाग्य कुछ भी क्यों न हो, जो भी व्यक्ति इसमें लिप्त थे, उनमें करीब सभी कुछ-न-कुछ मुसीबत में पड़े थे। इसका प्रचार करके लांग जेल गए, सीटन-कार अपदस्थ हुए। इसका अँगरेज़ी अनुवाद करके माइकेल मधुसूदन दत्त गुप्त रूप से तिरस्कृत और अवमानित हुए थे, और सुना है कि अंत में अपने जीवन धारण के उपाय सुप्रीम कोर्ट की नौकरी तक छोड़ने के लिए वाध्य हुए थे। ग्रंथकार को खुद जेल की सज़ा नहीं हुई या नौकरी से हाथ धोना नहीं पड़ा यह सही है, लेकिन उसे इससे भी बड़ी मुसीबत में पड़ना पड़ा। एक दिन रात में 'नील-दर्पण' लिखते हुए दीनबन्धु मेघना नदी पार कर रहे थे। किनारे से करीब दो कोस दूर जाने पर नाव अचानक डूबने लगी। मल्लाह तैरने लगे; दीनबन्धु ऐसा नहीं कर सकते थे। हाथ में 'नील-दर्पण' लिए डूबती नाव में

वे चुपचाप बैठे रहे। इसी समय अचानक एक तैरने वाले का पैर ज़मीन पर पड़ा तो उसने आवाज़ दी, 'डरो मत, यहाँ पानी कम है, पास ही ज़रूर दियारा है।' सचमुच निकट ही दियारा था, नाव दियारे से लगाई जाने पर दीनबन्धु उठ कर नाव की छत पर बैठे रहे। तब भी भीगा 'नील-दर्पण' उनके हाथों में था। नदी में भाटा था, जल्द ही ज्वार आने पर दियारा डूब जायगा और उसके साथ ही पानी से भरी नाव भी न जाने कहाँ चली जायगी। तब प्राण कैसे बचेगा? इसी बात को मल्लाह सोच रहे थे, दीनबन्धु भी सोच रहे थे। गहरी अँधेरी रात थी, चारों ओर वेगवती की घोर स्रोत-ध्वनि, बीच-बीच में निशाचर पक्षियों का चीत्कार सुनाई पड़ रहा था। प्राण बचाने का कोई उपाय न देख कर दीनबन्धु बिलकुल निराश हो रहे थे, इसी समय दूर डाँड की आवाज़ सुनाई पड़ी। सभी के ज़ोरों से बुलाने पर दूरस्थ नाव के लोगों ने उत्तर दिया और जल्द आकर दीनबन्धु और उनके साथ के लोगों का उद्धार किया।

ढाका विभाग से दीनबन्धु फिर नदीया लौटे। नदीया विभाग में ही वे अधिक दिनों तक रहे, खास कामों के लिए वे ढाका या अन्यत्र भेजे जाते थे।

ढाका विभाग से लौटकर दीनबन्धु ने 'नवीन तपस्विनी' लिखा। यह कृष्णनगर में छपी। प्रेस दीनबन्धु आदि कई सज्जनों ने स्थापित किया था मगर स्थायी नहीं हुआ।

नदीया विभाग से दीनबन्धु फिर ढाका विभाग में भेजे गए। वहाँ से उनका तबादला ओड़िसा विभाग में और फिर नदीया विभाग में हुआ। कृष्णनगर में उन्होंने मकान भी खरीदा था। १८६९ के अन्त में या १८७० के शुरू में वे कलकत्ते में सुपर-न्यूमररी इन्सपेक्टिंग पोस्टमास्टर नियुक्त हुए। पोस्ट मास्टर जेनरल की सहायता करना ही इस पदाधिकारी का काम होता है। दीनबन्धु की सहायता से कई सालों तक काम बड़े मज़े में चलता रहा। १८७१ में लुसाई युद्ध में

डाक का इन्तज़ाम करने के लिए दीनबन्धु काछाड़ पहुँचे। काम समाप्त कर कुछ दिनों के बाद वे लौट आए।

दीनबन्धु और सूर्य नारायण पोस्टल विभाग के कर्मचारियों में सब से होशियार माने जाते थे। सूर्य नारायण बाबू आसाम का भारी काम देखने के लिए वहीं रहते थे, दूसरी जगह जहाँ भी कोई मुश्किल काम आ जाता था, दीनबन्धु वहाँ भेजे जाते थे। इसी तरह के काम के सिलसिले में वे ढाका, ओड़िसा, उत्तर पच्छिम, दार्जिलिंग, काछाड़ आदि स्थानों में हमेशा जाते रहते थे। पोस्टल विभाग में परिश्रम का काम उनके ज़िम्मे था, पुरस्कार दूसरे पाते थे।

पुरस्कार दूर रहा, अंत में दीनबन्धु को अनेक लांछनाएँ मिली थीं। पोस्टमास्टर जेनरल और डायरेक्टर जेनरल में झगड़ा शुरू हुआ। दीनबन्धु का यह अपराध था कि वे पोस्ट मास्टर जेनरल की सहायता करते थे। इसीलिए उन्हें दूसरा काम दिया गया। उन्हें कुछ दिनों तक रेलवे में काम करना पड़ा। इसके बाद वे हवड़ा विभाग में नियुक्त हुए। यही आखिरी तबादला था।

अधिक परिश्रम के कारण दीनबन्धु को कठोर व्याधि हो गई। कुछ लोग कहते हैं कि बहुमूत्र रोग घातक होता है। यह कहाँ तक सच है नहीं कह सकता, लेकिन इधर समझा था कि दीनबन्धु शायद रोग-मुक्त हो जायँगे। बीमार हो जाने के बाद से दीनबन्धु बहुत सावधान रहते थे। उन्होंने बहुत थोड़ी मात्रा में अफ़ीम खानी शुरू की थी। कहते थे इससे कुछ आराम पहुँचा। बाद में १८७३ में क्वार महीने में फोड़े के कारण उन्हें अचानक बिस्तर पकड़ना पड़ा। उनकी मृत्यु का वृत्तान्त सभी को मालूम है। विस्तार से लिखने की आवश्यकता नहीं, लिख भी नहीं सकता। अगर मनुष्य की प्रार्थना सफल होने की होती तो प्रार्थना करता कि ऐसे सुहृद की मृत्यु की बात किसी को न लिखनी पड़े।

'नवीन-तपस्विनी' के बाद 'वियेपागला बुड़ो' प्रकाशित हुआ। दीनबन्धु के बहुतेरे ग्रंथ सच्ची घटनाओं पर आधारित हैं और जीवित

व्यक्ति का चरित्र उनके प्रणीत चरित्र में अनुकृत हुए हैं। 'नीलदर्पण' की वहुतेरी घटनाएँ सच्ची हैं,* 'नवीन तपस्विनी' की बड़ी रानी और छोटी रानी का वृत्तान्त सच्चा है। 'सधवार एकादशी' के क़रीब सभी नायक नायिकाएँ जीवित व्यक्तियों की प्रतिकृति हैं।

'It was believed all over Nuddea that one Huromony, a peasant girl, who was looked upon as one of the beauties of Krishnagore, was carried off one day, while going to fetch water, by a planter's servant, to the Katchi factory. One Mr. Archibald Hills was than the Manager, or chhota saheb of the factory under the general superintendence of Mr. J. Farlong. It was reported that he was present at the Scene of occurrence and rode after the party. It was also alleged that Mr. Hills had kept her in his room till about 11-30 p.m. and had then sent her back in a palki with closed doors. The story was told by the Rev. C. Boomwetsch before the Indigo Commisson. Tbe President, Mr. Seton-Karr, requested the Magistrate of Krishnagore to enquire about the correctness of the story. Mr. W. J. Herschel, the Magistrate, who had gone closely into the evidence in regard to the case, said in his reply that the abduction seemed very clearly proved, though no other charge was tenable. It seemes probable that the case

इसमें वर्णित घटनाओं का कुछ हिस्सा सच्चा है। 'जामाई-बारिक' में दो स्त्रियों का वृत्तान्त भी सच्चा है। 'बिये पागला बूड़ो' भी जीवित व्यक्ति को लक्ष्य करके लिखा गया था।

सच्ची घटनाएं, जीवित व्यक्तियों के चरित्र, प्राचीन उपन्यास, अँगरेज़ी ग्रंथ और 'प्रचलित लतायफ़' से सामग्री लेकर दीनबन्धु ने अपने अपूर्व मनोरंजक नाटक लिखते थे। 'नवीन तपस्विनी' में इसका उत्तम दृष्टान्त मिलता है। राजा रमणी मोहन का वृत्तान्त कुछ हद तक सच है। होंदल कुत् कुत् का मामला प्राचीन उपन्यास मूलक है, 'जलधर', 'जगदम्बा' Merry Wives of Windsor (Spakespere) से लिए गए हैं।

बंगाली पाठकों में कितने ही बिलकुल अशिक्षित हैं। वे सोचेंगे कि, अगर दीनबन्धु के ग्रंथों का मूल प्राचीन उपन्यास, अँगरेजी ग्रंथ या प्रचलित कहानियों में है तो उनके ग्रंथों की प्रशंसा कैसे की जाय ? वे सोचेंगे, मैं दीनबन्धु की अप्रशंसा कर रहा हूँ। इस सम्प्रदाय के पाठकों को कुछ समझा कर कहने के लिए मैं अनिच्छुक हूँ, क्योंकि पानी पर ऐपन नहीं बनाया जा सकता। शेक्सपीयर का ऐसा कोई भी नाटक नहीं है जो किसी प्राचीनतर-ग्रंथ मूलक नहीं हैं। स्काट के बहुतेरे उपन्यास प्राचीन कथा या प्राचीन ग्रंथ-मूलक हैं। महाभारत रामायण का अनुकरण है।

---

of Huromony gave the cue to the author of Nil Durpan for the story of abduction of Kshetramani whose rescue has given us one of the most memorable scenes in the domain of fiction. (History of Indigo Disturbances in Bengal. Compiled by Lalitchandra. Mitra, Calcutta, 1903).

इनियद,[1] इलियद का अनुकरण है। इनमें कौन सा ग्रंथ अप्रशंसनीय है?

'सधवार एकादशी' 'बियेपागला बूड़ो' के बाद प्रकाशित हुई थी। लेकिन लिखी गई थी उसके पलिले। 'सधवार एकादशी' के जैसे असाधारण गुण हैं, उसी तरह बहुतेरे असाधारण दोष भी हैं। यह प्रहसन विशुद्ध रुचि अनुमोदित नहीं है, इसलिए मैंने दीनबन्धु से विशेष रूप से अनुरोध किया था कि विशेष परिवर्तन किए बग़ैर इसका प्रचार नहीं होना चाहिए। सिर्फ़ कुछ ही दिनों तक यह अनुरोध रखा गया था। बहुतेरे कहेंगे, यह अनुरोध नहीं रखा गया तो अच्छा ही हुआ, हम 'निमचाँद' को देख सके हैं। बहुतेरे इससे उलटी बात कहेंगे।

'लीलावती' बड़े जतन से लिखा गया है और दीनबन्धु के दूसरे नाटकों से इसमें दोष बहुत कम हैं। इस काल को दीनबन्धु के कवित्व-सूर्य का मध्याह्नकाल कहा जा सकता है। इसके बाद से तेज कुछ घटने लगता है। ऐसे उदाहरण बहुत मिलते हैं। स्काट ने पहिले पद्य-ग्रंथ लिखना शुरू किया था। पहिले तीन बहुत अच्छे बने, Lady of the Lake नामक काव्य के बाद फिर वैसा नहीं हुआ। यह देख कर स्काट ने पद्य लिखना छोड़ दिया, गद्य काव्य शुरू किया। गद्य काव्य-लेखक के तौर पर स्काट के यश का मूल उनके पहिले के पन्द्रह या सोलह उपन्यास हैं। Kenilworth नामक ग्रंथ के बाद स्काट का और कोई उपन्यास प्रथम श्रेणी में स्थान पाने योग्य नहीं बना। मध्याह्न की तेज़ धूप से सन्ध्या के क्षीणालोक का जो सम्बन्ध है, Ivanhoe और Kenilworth आदि से स्काट के अंतिम दोनों गद्यकाव्यों का वही सम्बन्ध है।

'लीलावती' के बाद दीनबन्धु की लेखनी ने कुछ दिनों तक विश्राम लिया था। इस विश्राम के बाद 'सुरधुनी' काव्य, 'जामाह बारिक' और 'द्वादश कविता' बहुत जल्द प्रकाशित हुई। 'सुरधुनी' काव्य

---

१. रोमन कवि वर्जिल लिखित Aenid

बहुत पहिले लिखा गया था। मैंने अनुरोध किया था कि इसका भी प्रचार नहीं होना चाहिए। मेरे ख्याल से यह दीनबन्धु की लेखनी के योग्य नहीं बना था। शायद दूसरे मित्रों ने भी इसी तरह अनुरोव किया था। इसी लिए यह बहुत दिनों तक अप्रकाशित पड़ी रही।

दीनबन्धु की मृत्यु के कुछ ही पहिले 'कमले-कामिनी' प्रकाशित हुई थी। जब यह प्रकाशित हुई तब वह बीमार पड़े हुए थे।

मैं दीनबन्धु के ग्रंथों की समालोचना नहीं कर रहा हूँ। ग्रंथ समालोचना इस निबन्ध का उद्देश्य नहीं है। समालोचना का यह समय भी नहीं है। दीनबन्धु सुलेखक थे, यह सभी को मालूम है, मुझे बताना नहीं पड़ेगा। वह बहुत योग्य राजकर्मचारी थे, इसका थोड़ा सा उल्लेख किया है, लेकिन दीनबन्धु का एक परिचय बाक़ी है। उनके सरल, अकपट, स्नेहमय हृदय का परिचय कैसे दूँ? बंगाल में आज कल गुणवान व्यक्तियों की कमी नहीं है, सुलेखकों का भी बिलकुल अभाव नहीं है, लेकिन दीनबन्धु जैसे अन्तःकरण का अभाव बंगाल ही क्यों, मनुष्य लोक में सदा रहेगा। इस संसार में क्षुद्र कीट से लेकर सभी का स्वभाव एक है, अहंकार, अभिमान, क्रोध, स्वार्थपरत, कपटत से परिपूर्ण है। ऐसे संसार में दीनबन्धु जैसा रत्न ही अनमोल रतन है।

इस परिचय की कौन सी ज़रूरत है? इस बंग देश में दीनबन्धु को विशेष रूप से कौन नहीं जानता? दारजिलिंग से बरिसाल तक, काछाड़ से गंजाम तक, इसमें कितने सज्जन दीनबन्धु के मित्रों में नहीं हैं? कितने उनके स्वभाव का परिचय नहीं जानते? किसे परिचय देना होगा?

बंगाल में ऐसे स्थान बहुत कम ही हैं जहाँ दीनबन्धु नहीं गए। जहाँ गए वहीं मित्र बनाए। जो भी उनके आने की बात सुनता, वही उनसे वार्तालाप के लिए उत्सुक होता। जो वार्तालाप करता, वही मित्र बन जाता। उनके जैसा सुरसिक आदमी बंगभूमि में दूसरा कोई है कि नहीं, यह नहीं कह सकता। वह जिस सभा में बैठते, उस सभा के

जीवन स्वरूप बन जाते। उनके सरस, मीठे कथोपकथन से सभी मुग्ध होते थे। सुनने वाले मर्म के सभी दुःख भूल कर, उनके बहाए हास्यरस सागर में बहने लगते थे। उनके ग्रंथ बंगला भाषा के सर्वोत्कृष्ट हास्यारस के ग्रंथ हैं सही, लेकिन उनकी यथार्थ हास्यरस पटुता के शतांश का भी परिचय ग्रंथों में नहीं मिलता। हास्यरसावतार के रूप में उनकी पटुता का सच्चा परिचय उनके कथोपकथन में ही मिलता था। बहुधा वे साक्षात् मूर्तिमान् हास्यरस प्रतीत होते थे। देखा जाता था कि बहुतेरे 'अब हँसा नहीं जाता' कह कर उनके पास से भाग खड़े होते थे। हास्यरस में वे यथार्थ में ऐन्द्रजालिक थे।

कितने ही बेवक़ूफ आत्माभिमानी होते हैं, दीनबन्धु ऐसे लोगों के लिए यम थे। वे उनके आत्माभिमान का प्रतिवाद नहीं करते थे, बल्कि उस भाग में यथा साध्य हवा करते थे। बेवक़ूफ हवा से पागल हो जाता था। तब वे तमाशा देखते थे। ऐसा आदमी दीनबन्धु के पाले पड़ने पर कदापि छुटकारा नहीं पाता था।

इधर कुछ वर्षों से उनकी हास्यरस पटुता धीरे-धीरे मन्द होती जा रही थी। साल भर से कुछ ऊपर हुए, एक दिन उनके किसी खास दोस्त ने पूछा था, 'दीनबन्धु, तुम्हारा वह हास्यरस कहाँ गया? तुम्हारा रस सूख रहा है, तुम अब अधिक दिनों तक नहीं जिओगे।' तो दीनबन्धु ने इतना ही कहा, 'कौन कहता है?' लेकिन अगले क्षण अन्यमनस्क हो गए। एक दिन हमने रात एक साथ बिताई। उनकी रस-उद्दीपन शक्ति सूखी है या नहीं खुद जानने के लिए उस रात एक बार कोशिश की थी; वह चेष्टा बिलकुल असफल नहीं रही। रात के क़रीब ढाई बजे तक बहुतेरे मित्रों को मुग्ध कर रखा था। तब नहीं जानता था कि वही उनका अंतिम उद्दीपन है। उसके बाद हम कई बार दिन रात साथ रहे, लेकिन उस रात जैसा खुश-मिज़ाज नहीं देखा। उनकी असाधारण क्षमता धीरे-धीरे दुर्बल हो रही थी। फिर भी उनकी व्यंग्य शक्ति एक दम निस्तेज नहीं हुई थी। मृत्यु शय्या पर इसे उन्होंने नहीं छोड़ा। बहुतेरे जानते हैं, कि उनकी मृत्यु का कारण विस्फोटक था, पहिले

पीठ पर एक हुआ, इसके कुछ ठीक होने पर एक पुट्ठे पर हुआ। अन्त दीनबन्धु ने बहुत दूर के बादल की हल्की बिजली की तरह ज़रा सा हँसकर कहा, "फोड़े ने अब मेरा पैर पकड़ लिया है।"

मनुष्यमात्र में घमंड होता है; दीनबन्धु में नहीं था। मनुष्य मात्र में क्रोध होता है; दीनबन्धु में नहीं था। दीनबन्धु की कोई भी बात मुझ से छिपी नहीं थी, मैंने कभी उन्हें गुस्सा होते नहीं देखा। बहुधा उनमें क्रोध का अभाव देख कर उलाहना दिया, गुस्सा नहीं हो सके इसलिए शर्मा जाते थे। अथवा क्रोध करने की कोशिश करके अन्त में विकल होकर कहा, "कहाँ, गुस्सा तो आता ही नहीं।"

उनमें क्रोध के जो चिह्न मिलते हैं, वह जामाइ वारिक के 'मोतारास भाट परा' जैसे बहुतेरे दीनबन्धु के ग्रंथों की प्रशंसा करते थे, उसी तरह कुछ लोग उनके ग्रंथों के निन्दक भी थे। जहाँ यश है वहीं निन्दा भी, संसार का यही नियम है। संसार में जो यशस्वी हुए हैं, वही सम्प्रदाय, विशेष द्वारा निन्दित हुए हैं। इसके बहुत से कारण हैं। पहला कारण है, दोष शून्य मनुष्य पैदा नहीं होता; जो बहु गुण युक्त होते हैं, उनके दोष गुण सान्निध्य के कारण कुछ अधिक स्पष्ट होते हैं, इसीलिए लोग उनके कीर्त्तन में लग जाते हैं। दूसरी बात है, गुण से दोष का सदा विरोध रहा है, इसलिए दोषी व्यक्ति गुणशाली व्यक्ति के शत्रु बन जाते हैं। तीसरी, कार्यक्षेत्र में आने पर कार्य करते हुए बहुतेरे शत्रु बन जाते हैं। शत्रुगण दूसरी तरह से शत्रुता करने में असमर्थ होने पर निन्दा करके शत्रुता करते हैं। चौथी, वहुतेरे मनुष्यों का स्वभाव ही ऐसा होता है कि, प्रशंसा से निन्दा करना और सुनना उन्हें अच्छा लगता है, साधारण आदमी की निन्दा से यशस्वी व्यक्ति की निन्दा वक्ता और श्रोता के लिए सुखदायी होती है। पाँचवीं, ईर्ष्या मनुष्य का स्वाभाविक धर्म है, बहुतेरे दूसरों के यश से अत्यन्त कातर होकर यशस्वी की निन्दा में लग जाते हैं। इसी कोटि के निन्दक ही अधिक हैं, विशेष करके बंगाल में।

दीनबन्धु स्वयं निर्विरोध, निरहंकार और क्रोध शून्य होने पर भी इन कारणों से उनके बहुतेरे निन्दक हो उठे थे। पहिले उनका कोई

निन्दक नहीं था, क्योंकि पहले वे उतने यशस्वी नहीं हुए थे। जब 'नवीन तपस्विनी' के प्रकाशित होने पर उनके यश की मात्रा पूर्ण होने लगी तो निन्दक वर्ग सिर उठाने लगा। दीनबन्धु के ग्रंथ में यथार्थ में बहुतेरे दोष हैं—कितने ही केवल इसी लिए ही निन्दा करते थे। इसमें किसी को आपत्ति नहीं होगी। मगर वे उनके दोष के साथ गुणों की बात नहीं सोचते, इसीलिए उन्हें निन्दक कहता हूँ।

बहुतेरे दीनबन्धु के पास नौकरी की उम्मीदवारी में जा विफल हो क्रोधवश दीनबन्धु के आलोचक वर्ग में शामिल हुए थे। इस कोटि के निन्दकों की निन्दा से दीनबन्धु हँसते थे—निम्नकोटि के अखबारों से वे घृणा करते थे, यह कहने की आवश्यकता नहीं।...

यह भी स्पष्ट कहा जा सकता है कि, दीनबन्धु ने कभी एक भी ग़लत काम नहीं किया। उनका स्वभाव उतना तेजस्वी नहीं था सही, मित्रों के कहने पर या संसर्ग दोष से निन्दनीय कामों के लेशमात्र संस्पर्श से वे हमेशा अपने को बचा नहीं पाते थे। लेकिन जो कुछ ग़लत है, जिससे दूसरों का अनिष्ट होगा, जो पाप है, ऐसा काम दीनबन्धु ने कभी नहीं किया। उन्होंने बहुतों का उपकार किया था, उनकी कृपा से बहुतों की रोटी का इन्तज़ाम हुआ था।

एक दुर्लभ सुख दीनबन्धु को नसीब हुआ था। वह साध्वी स्नेह-शालिनी पतिपरायणा पत्नी के पति थे। दीनबन्धु का ब्याह कम उम्र में नहीं हुआ था। हुगली के कुछ उत्तर वंशवाटी गाँव में उनका ब्याह हुआ। दीनबन्धु सदा गृहसुख से सुखी थे। दम्पति-कलह कभी न कभी सभी घरों में हुआ करता है, लेकिन कभी भी क्षण भर के लिए कहा सुनी नहीं हुई। एक बार कलह करने के लिए दीनबन्धु दृढ़प्रतिज्ञ हुए थे, लेकिन प्रतिज्ञा व्यर्थ हुई थी। झगड़ा नहीं कर सके। झगड़ा करने गए तो पहिले ही हंस दिये, या उनकी सहधर्मिणी ने क्रोध देखकर मज़ाक से गुस्सा दूर कर दिया, यह मुझे अब याद नहीं।

दीनबन्धु की आठ सन्तानें थीं।

दीनबन्धु मित्रमंडली के प्रति विशेष स्नेहवान् थे। मैं यह कह

सकता हूँ कि, उनके जैसे मित्र का प्रेम संसार में एक मुख्य सुख है। जिन्होंने इसे खो दिया है, उनका दुःख वर्णनातीत है।[1]

---

१. १८७६ ई० में दीनबन्धु ग्रंथावली का प्रथम संस्करण प्रकाशित हुआ। इसके लिए बंकिमचन्द्र ने दीनबन्धु का संक्षिप्त जीवनचरित लिख दिया और इसका अधिकार उनके पुत्रों को दे दिया था।

परिशिष्ट—२

दीनबन्धु का कवित्व
(बंकिमचन्द्र चट्टोपाध्याय)

जिस साल ईश्वरचन्द्र गुप्त की मृत्यु हुई, उसी साल माइकेल मधुसूदन दत्त प्रणीत 'तिलोत्तमा संभव काव्य', 'रहस्य सन्दर्भ' में प्रकाशित होने लगा। यही मधुसूदन का पहिला बँगला काव्य है। इसके अगले साल दीनबन्धु का पहिला ग्रंथ 'नील-दर्पण' प्रकाशित हुआ।

वह १८५९।६० ई० बँगला साहित्य में चिरस्मरणीय है—वह नए पुराने का संधि-स्थल है। पुराने दल के अंतिम कवि ईश्वरचन्द्र अस्तमित हुए, नए के प्रथम कवि मधुसूदन का नवोदय हुआ। ईश्वरचन्द्र सोलहो आने बंगाली थे, मधुसूदन पूरे अँगरेज़। दीनबन्धु इनके संधिस्थल हैं। कहा जा सकता है कि १८५९।६० की तरह दीनबन्धु बँगला काव्य के नए पुराने के संधिस्थल हैं।

दीनबन्धु ईश्वरचन्द्र गुप्त के काव्य-शिष्यों में हैं। ईश्वर गुप्त के काव्य शिष्यों में दीनबन्धु गुरु के कवि-स्वभाव के जितने उत्तराधिकारी हुए थे, उतना दूसरा कोई नहीं। दीनबन्धु का हास्य रस पर अधिकार गुरु का अनुकारी है। बंगालियों के रोज़मर्रा के जीवन से दीनबन्धु की कविता का जो घनिष्ट सम्बन्ध है, वह भी गुरु का अनुकारी है। जिस रुचि के लिए दीनबन्धु को दोष दिया जाता है, वह रुचि भी गुरु की है।

लेकिन कवित्व के लिए गुरु की अपेक्षा शिष्य को ऊँचा आसन देना होगा। गुरु के लिए यह अगौरव की बात नहीं है। दीनबन्धु के हास्य रस के अधिकार को ईश्वर गुप्त का अनुकारी कहा है, इसका तात्पर्य यही है कि दीनबन्धु ईश्वर गुप्त के साथ एक ही प्रकार के व्यंग्य प्रणेता थे। पहिले की देशी व्यंग्य-प्रणाली एक प्रकार की थी—अब एक दूसरे प्रकार के व्यंग्य

के प्रति हममें प्रेम उत्पन्न हो रहा है। पहिले के लोग कुछ मोटा काम पसन्द करते थे; अब सूक्ष्म के प्रति लोगों में अनुराग उत्पन्न हो रहा है। पहिले के रसिक लठैत की तरह ज़ोर से दुश्मन के सिर पर प्रहार करते थे, खोपड़ी फट जाती थी। अब के रसिक डाक्टर की तरह, महीन लैनसेट निकाल कब झट से दर्द की जगह बैठा देते हैं, कुछ पता ही नहीं चलता। लेकिन हृदय का शोणित क्षत से निकल जाता है। अब अँगरेज़ शासित समाज में डाक्टरों की श्रीवृद्धि हो रही है—लठैतों की बड़ी दुरवस्था है। साहित्य-समाज में अब लठैत नहीं हैं, ऐसी बात नहीं—दुर्भाग्य की बात है उनकी संख्या कुछ बढ़ी है, लेकिन उनकी लाठी में घुन लगे हैं, बाहुओं में बल नहीं, वे लाठी के सहारे से कातर हैं, शिक्षा नहीं है, कहाँ मारना चाहिए कहाँ मार बैठते हैं। लोगों को हँसाते हैं सही, मगर हँसी के पात्र वे खुद हैं। ईश्वर गुप्त या दीनबन्धु इस कोटि के लठैत नहीं थे। उनके हाथों में पक्के बाँस का लट्ठ, बाहु में अमित बल और शिक्षा भी विचित्र थी। दीनबन्धु के लट्ठ प्रहार से कितने ही जलधर और राजीव मुखोपाध्याय ने जलधर या राजीव-जीवन त्याग किया है।

कवि का प्रधान गुण है सृजन-कौशल। ईश्वर गुप्त में इसकी शक्ति नहीं थी। दीनबन्धु में यह शक्ति प्रचुर-परिमाण में थी। उनके सर्जित जलधर, जगदम्बा, मल्लिक, निमचाँद दत्त आदि इसके जीते-जाते उदाहरण हैं। लेकिन जो कुछ सूक्ष्म, कोमल, मधुर, अकृत्रिम, करुण, प्रशान्त है, उस पर दीनबन्धु का उतना आधिकार नहीं था। उनकी लीलावती, उनकी मालती, कामिनी, सैरिन्ध्री, सरला आदि रसज्ञ के निकट उतनी आदरणीया नहीं हैं। उनके विनायक, रमणी मोहन, अरविन्द, ललित मोहन मन को मुग्ध नहीं कर पाते। लेकिन जो कुछ स्थूल, असंगत, असंलग्न, विपर्यस्त है, वह उनकी इंगित मात्र के अधीन है। ओझा के बुलाने पर भूतों के झुंड की भाँति पाँत में खड़े हो जाते हैं।

किस प्रकार से दीनबन्धु ने इन चरित्रों की रचना की थी, इस पर विचार करने से हैरान होना पड़ता है। बंगाल के समाज के बारे में दीन-बन्धु की बहुदर्शिता अचरज की बात है। सभी वर्ग के बंगालियों के जीवन

की सभी बातें जानने वाला बंगाली लेखक अब नहीं है। इस विषय में बंगाली लेखकों की अब साधारण तौर से बड़ी शोचनीय हालत है, उनमें से बहुतों में लिखने के योग्य शिक्षा है, लिखने की शक्ति है, जिस चीज़ को जानने से रचना सार्थक होती है सिर्फ़ वही नहीं मालूम है। उनमें से बहुतेरे देश-वत्सल हैं, देश के मंगल के लिए लिखते हैं, लेकिन देश की हालत के बारे में कुछ भी नहीं जानते। कलकत्ते में उनके वर्ग के लोग क्या करते हैं, यही बहुतों के स्वदेश सम्बन्धी ज्ञान की सीमा ही है। किसी ने दो-चार गाँव या दो-एक छोटे शहर देखे हैं, लेकिन वह भी मानो केवल सड़कें, बाग़-बगीचे, हाट-बाज़ार मात्र है। जनता से नहीं मिले हैं। देश के बारे में उनका ज्ञान प्रधानतः अखबारों से ही लिया गया है। अखबारों के लेखक भी प्रधानतः (रस भी नहीं) इसी कोटि के लेखक हैं—अँगरेज़ तो हैं ही। अतएव उनसे भी देश के बारे में जो ज्ञान मिलता है, उसे दार्शनिकों की भाषा में 'रस्सी से सर्पज्ञानवत्' भ्रम ज्ञान कह कर उड़ा दिया जा सकता है। यह नहीं कहता कि कोई बंगाली लेखक गाँवों में घूमा ही नहीं है। बहुतेरे घूमे हैं, लेकिन लोगों से मिले हैं क्या? अगर नहीं मिले हैं तो उनकी जानकारी की क़ीमत कितनी है?

बंगाली लेखकों में दीनबन्धु ही इस विषय में सबसे ऊँचे आसन के अधिकारी हैं। दीनबन्धु को सरकारी काम से मणिपुर में गंजाम तक, दार्जिलिंग से बंगाल की खाड़ी तक हमेशा जाना पड़ता था। उनका जाना सिर्फ सड़क नापना या शहर देखना ही नहीं था। डाकखानों के मुआइने के लिए गाँवों में जाना पड़ता था। लोगों से मिलने की उनमें असाधारण शक्ति थी। वे बड़ी ख़ुशी से सभी वर्ग के लोगों से मिलते थे। क्षेत्रमणि जैसी देहात की तथाकथित छोटी जाति की बेटी, आदुरी जैसी ग्राम्या वर्षियसी, तोराप जैसा ग्राम्य काश्तकार, राजीव जैसा गाँव का बूढ़ा, नशीराम और रतार जैसे ग्रामीण बालक; दूसरी ओर निमचाँद जैसा शहराती शिक्षित शराबी, अटलबिहारी जैसा नगरविहारी देहाती बाबू, कांचन जैसी मानव-शोणितपायिनी नगरवासिनी राक्षसी, नदरे चाँद, हेमचाँद जैसे आधे देहाती, आधे शहराती, शैतान छोकरे, घटिराम जैसे

डिप्टी, नील कोठी के दीवान, अमीन, तगादगीर, ओड़िया पालकी ढोने वाले, दुले[1] पालकी ढोने वाले, पासिन पेंचो की माँ तक सभी के दिल की बातें वे जानते हैं, वे क्या करते हैं; क्या कहते हैं, वे ठीक-ठीक जानते थे। कलम की नोक पर उसे यथार्थ रूप से प्रकट सकते थे, दूसरा कोई बंगाली लेखक ऐसा नहीं कर सका। उनकी आदुरी जैसी बहुतेरी आदुरी मैंने देखी हैं—वे सोलहो आने आदुरी हैं। नदेर चाँद हेमचाँद मैंने देखे हैं, वे सही में नदेरचाँद या हेम चाँद हैं। मल्लिका देखी गई है—ठीक उसी तरह की खिलती हुई मल्लिका। दीनबन्धु बहुधा कुशल भास्कर या चित्रकार की भाँति जीवित आदर्श को सामने रखकर चरित्रों का सृजन करते थे। सामाजिक वृक्ष पर सामाजिक बन्दर को समारूढ़ देखते ही तूलिका निकाल पूँछ समेत चित्रित कर लेते थे। यह तो हुआ उनका यथार्थवाद। उनमें Idealize करने की विलक्षण शक्ति थी। सामने जीवित आदर्श को रखकर अपनी स्मृति का भांडार खोल देते, उस पर दूसरों का गुण दोष थोप देते थे। जहाँ जो फबता है, उसे सजाना जानते थे। पेड़ पर के बन्दर को इस तरह सजाते-जाते कि वह हनुमान या जामवंत बन जाता था। निमचाँद, घटीराम, भोलाचाँद आदि जंगली जानवरों की इसी तरह उत्पत्ति हुई थी। इन सृजनों को बाहुल्य और विचित्रता पर विचार करने से उनका अनुभव विस्मयजनक प्रतीत होता है।

परन्तु केवल अनुभव से ही कुछ नहीं होता। सहानुभूति के बिना सृजन नहीं होता। दीनबन्धु का सामाजिक अनुभव ही विस्मयजनक नहीं है—उनकी सहानुभूति भी अतिशय तीव्र थी। विस्मय और विशेष प्रशंसा की बात यह है कि, सभी कोटि के लोगों से उनकी तीव्र सहानुभूति थी। ग़रीब-दुखियों के दुःख के मर्म को इस तरह समझते और किसी को नहीं देखा। इसलिए दीनबन्धु एक तोराप या राइचरण, एक आदुरी या रेवती को अंकित कर सके थे। उनकी यह तीव्र सहानुभूति केवल ग़रीब-दुखियों

---

१. बंगाली समाज की एक जात।

से ही नहीं थी; यह सर्वव्यापी थी। वह खुद पवित्र चरित्र थे, लेकिन दुश्चरित्र का दुःख समझ सकते थे। दीनबन्धु पवित्रता का ढोंग नहीं रचते थे। इस विश्वव्यापी सहानुभूति के गुण से हो या दोष से, वह सभी जगह जाते थे, शुद्धात्मा पापात्मा सभी प्रकार के लोगों से मिलते थे। लेकिन अग्निकुंड में पड़े पत्थर की तरह पापाग्नि कुंड में भी अपनी शुद्धता की रक्षा करते थे। स्वयं इस प्रकार के पवित्रचेता होकर भी सहानुभूति की शक्ति के गुण से वह पापी के दुःख को पापी की तरह समझ सकते थे।...दीनबन्धु को मैं भली-भाँति जानता था; उनके हृदय के सभी कोने मेरे जाने थे। मेरा विश्वास है कि, ऐसे पर दुःख-कातर मनुष्य को मैंने देखा है कि नहीं इसमें सन्देह है। उनके ग्रंथ में भी यह परिचय है।

लेकिन यह सहानुभूति केवल दुःख से ही नहीं है। सुख-दुःख राग-द्वेष सब कुछ से बराबर की सहानुभूति है। आदुरी के गहनों के सुख की सहानुभूति, तोराप के क्रोध से सहानुभूति, भोला चाँद जिस शुभ कारण से ससुराल नहीं जा पाता है, उस सुख से सहानुभूति। सभी कवियों में यह सहानुभूति होनी चाहिए। इसके न होने से कोई भी उच्च कोटि का कवि नहीं हो सकता। लेकिन दूसरे कवियों से दीनबन्धु का कुछ अन्तर है। सहानुभूति मुख्यतः कल्पनाशक्ति का परिणाम है। मैं अपने को ठीक दूसरे की जगह कल्पना से बैठा पाऊँ तभी उससे सहानुभूति उत्पन्न होती है। अगर यही होता है तो, ऐसा हो सकता है कि, अत्यन्त निर्दय—निष्ठुर व्यक्ति भी कल्पना शक्ति के बल पर काव्य रचना करते समय दुःखी से अपनी सहानुभूति उत्पन्न कर काव्य का उद्देश्य सिद्ध करता है। दूसरी ओर ऐसे लोग भी हैं कि दया आदि कोमल वृत्तियाँ उनके स्वभाव में इतनी प्रबल हैं कि, उनके लिए सहानुभूति स्वतः सिद्ध है; कल्पना की सहायता की आवश्यकता नहीं होती। मनोवैज्ञानिक कहेंगे कि, कल्पना-शक्ति छिप कर काम करती है, वह काम इतना अभ्यस्त है या शीघ्र होता है कि हम समझ नहीं पाते। यहाँ भी कल्पना विराजमान है। माना ऐसा ही हुआ। फिर भी एक अन्तर है। प्रथमोक्त कोटि के लोगों की सहानुभूति उनकी इच्छा या चेष्टा के अधीन है, द्वितीय कोटि के लोगों की सहानुभूति

उनकी इच्छा के अधीन नहीं है, वे ही सहानुभूति के अधीन हैं। एक कोटि के लोग जब चाहते हैं, तभी सहानुभूति आ उपस्थित होती है, नहीं तो वह नहीं आ सकती; सहानुभूति उनकी चेरी है। दूसरी कोटि के लोग खुद ही सहानुभूति के दास हैं, वे उसे चाहें या न चाहें, वह उन पर सवार है, हृदय में आसन जमाए विराजमान है। प्रथमोक्त कोटि के लोगों की कल्पना शक्ति बड़ी प्रबल होती है; दूसरी कोटि में प्रीति, दयादि वृत्तियाँ प्रबल होती हैं।

दीनबन्धु द्वितीय कोटि के आदमी थे। उनकी सहानुभूति उनके अधीन या आयत्त नहीं थी; वे खुद ही सहानुभूति के आधीन थे। उनकी सर्वव्यापी सहानुभूति उन्हें जिस पथ पर ले जाती थी, वही करने के लिए वह वाध्य होते थे। उनके ग्रंथों में रुचि का जो दोष दिखाई पड़ता है, शायद अब हम उसे समझ सकेंगे। वह सुशिक्षित और निर्मल-चरित्र के थे; तथापि उनके ग्रंथों में जो रुचि का दोष देखने में आता है, उनकी प्रबल-दुर्दमनीय सहानुभूति ही उसका कारण है। जिससे उनकी सहानुभूति है, जिसका चरित्र चित्रण करने वे बैठे हैं, उसका सब कुछ उनकी लेखनी के सामने आ जाता था। कुछ काटने-छाँटने की शक्ति उनमें नहीं थीं, क्योंकि, वे सहानुभूति के आधीन थे। सहानुभूति उनके आधीन नहीं थी। हमने कहा है कि, वह जीवित आदर्श सामने रखकर चरित्र चित्रण करने बैठते थे। जीवित आदर्श से सहानुभूति के कारण ही वे उसे आदर्श बना पाते थे। लेकिन आदर्श का उन पर ऐसा प्रभाव था कि, वह उसके किसी हिस्से को छोड़ नहीं पाते थे। तोराप के सृजन के समय, तोराप जिस भाषा में क्रोध प्रगट करता है, उसे छोड़ नहीं पाते थे। आदुरी के सृजन के समय, आदुरी जिस भाषा में मज़ाक करती है, उसे छोड़ नहीं पाते थे। निमचाँद का सृजन करते समय, निमचाँद जिस भाषा में मतवालापन करता है, उसे छोड़ नहीं पाते थे। दूसरा कवि होता तो सहानुभूति से एक तरह का समझौता करता—कहता—"तुम मुझे तोराप या आदुरी या निमचाँद का स्वभाव चरित्र समझा दो, लेकिन भाषा मेरे मन की होगी, भाषा तुमसे नहीं लूँगा।" लेकिन दीनबन्धु में समार्थ्य नहीं था कि सहानु-

भूति से किसी प्रकार का समझौता करते। सहानुभूति उनसे कहती, "मेरा हुक्म है, सब कुछ लेना होगा, भाषा समेत। देखते नहीं हो कि, तोराप की भाषा छोड़ देने से तोराप का क्रोध तोराप के क्रोध की तरह नहीं रह जाता, आडुरी की भाषा छोड़ देने से आदुरी का मज़ाक आदुरी के मज़ाक की तरह नहीं रह जाता, निमचाँद की भाषा छोड़ देने से निमचाँद का मतवालापन फिर निमचाँद के मतवालेपन की तरह नहीं रह जाता? सब कुछ देना होगा।" दीनबन्धु की हिम्मत नहीं थी कि कहें—"नहीं ऐसा नहीं होगा।" इसीलिए हम पूरे तोराप, पूरे निमचाँद, पूरी आदुरी को देख पाते हैं। रुचि की रक्षा करने से, खंडित तोराप, कटी आदुरी, टूटे निमचाँद को ही हम पाते।

मैं यह नहीं कहता कि, दीनबन्धु ने जो कुछ किया, ठीक किया है। ग्रंथ में रुचि का दोष न आने पावे, यह सभी तरह से वांछनीय है, इसमें कौन-सा संशय है? मैंने जो थोड़ी-सी बातें कहीं उनकी उद्देश्य प्रशंसा या निन्दा करना नहीं है। व्यक्ति को समझना ही मेरा उद्देश्य था। गुण में भी दोष उत्पन्न होता है, इसे सभी जानते हैं। इस बात से हम उन्हें समझ पा रहे हैं। ग्रंथ अच्छा हो चाहे बुरा, आदमी बड़े प्यार करने लायक थे। उनके जीवन में भी इसी बात को देखा था। दीनबन्धु को जितने लोगों ने प्यार किया, ऐसी बात मैंने कभी देखी या सुनी नहीं। वह सर्वव्यापी सहानुभूति ही इसका कारण है।

दीनबन्धु में ये दो गुण हैं—(१) उनका सामाजिक अनुभव, (२) उनकी प्रबल और स्वाभाविक सर्वव्यापी सहानुभूति, उनके काव्य के गुण दोष का कारण हैं—इस बात को समझाना इस समालोचना का मुख्य उद्देश्य है। मैं यह भी बताना चाहता हूँ, कि जहाँ इन दोनों में एक की कमी हुई है, वहीं उनका कवित्व निष्फल हुआ है।

दीनबन्धु की इस अलौकिक सामाजिकता और तीव्र सहानुभूति के कारण ही उनका पहिला नाटक लिखा गया। जिन इलाक़ों में नील की खेती होती थी, वहाँ वे काफ़ी घूमे थे। नीलहों के उस समय के प्रजापीड़न से अच्छी तरह परिचित हुए थे। इस प्रजापीड़न को उनके जैसा दूसरा

कोई नहीं जानता था। उनकी स्वाभाविक सहानुभूति के कारण सताई प्रजा का दु:ख उन्हें अपने झेले दु:ख की तरह प्रतीत हुआ, उनके हृदय का उत्स कवि की लेखनी से निकलने लगा। 'नीलदर्पण' बँगला की Uncle Tom's Cabin है। 'टाम काका की कुटिया' ने अमरीका के ग़ुलामों की ग़ुलामी खत्म की; 'नीलदर्पण' ने नील के दासों की दासता समाप्त करने में बहुत काम किया है। 'नीलदर्पण' में ग्रंथकार के अनुभव और सहानुभूति ने पूरी तरह योग दिया था, इसीलिए 'नीलदर्पण' उनके सभी नाटकों से शक्तिशाली है। और नाटकों में और गुण हो सकते हैं, लेकिन 'नीलदर्पण' जैसी शक्ति और किसी में नहीं है। उनका दूसरा कोई भी नाटक पाठकों या दर्शकों को उतना सम्मोहित नहीं करता। बँगला भाषा में ऐसे बहुतेरे नाटक, उपन्यास या दूसरे तरह के काव्य रचित हुए हैं जिनका उद्देश्य सामाजिक अनिष्ट का संशोधन करना था। वे प्राय: काव्यांश में निकृष्ट हैं, क्योंकि काव्य का मुख्य उद्देश्य सौन्दर्य का सृजन है। इसे छोड़कर समाज सुधार को मुख्य उद्देश्य बनाने से कवित्व निष्फल हो जाती है, लेकिन 'नीलदर्पण' का मुख्य उद्देश्य इस प्रकार का होने पर भी काव्यांश में वह उत्कृष्ट है। इसका कारण यह है कि ग्रंथकार की मोहमयी सहानुभूति ने सब कुछ को माधुर्यमय बना दिया है।

अन्त में मैं यही कहना चाहता हूँ कि दीनबन्धु के कवित्व के दोष-गुण का जो कारण बताया, यह केवल उनके ग्रंथों से ही मिला ऐसी बात नहीं है। किताब पढ़कर अन्दाज़ से एक थिअरी खड़ी की है, ऐसी बात नहीं है। ग्रंथकार के हृदय को मैं भली-भाँति जानता था। इसीलिए यह कहा और कह सका। जो ग्रंथकार के हृदय में पाया, ग्रंथ में भी वही मिला, यह बात लिखी। ग्रंथकार को न जानता तो उनके ग्रंथों को इस तरह समझ पाता कि नहीं इसमें सन्देह है। दूसरा जिसे ग्रंथकार के हृदय में इतने निकट का स्थान नहीं मिला है, वह लिख सकता कि नहीं, मालूम नहीं। मेरी बड़ी इच्छा थी कि बात दीनबन्धु के पाठकों को समझाऊँ। दीनबन्धु के स्नेह और प्रीति के ऋण को जितना हो सके अदा करना

चाहता था, इसी की कामना थी। इसीलिए इस समालोचना को लिखने के लिए मैंने उनके पुत्रों से खुद निवेदन किया था। दीनबन्धु के ग्रंथों की प्रशंसा या निन्दा करना मेरा उद्देश्य नहीं है। सिर्फ़ यही समझाना मेरा उद्देश्य था कि वह असाधारण व्यक्ति किस बात में असाधारण था।
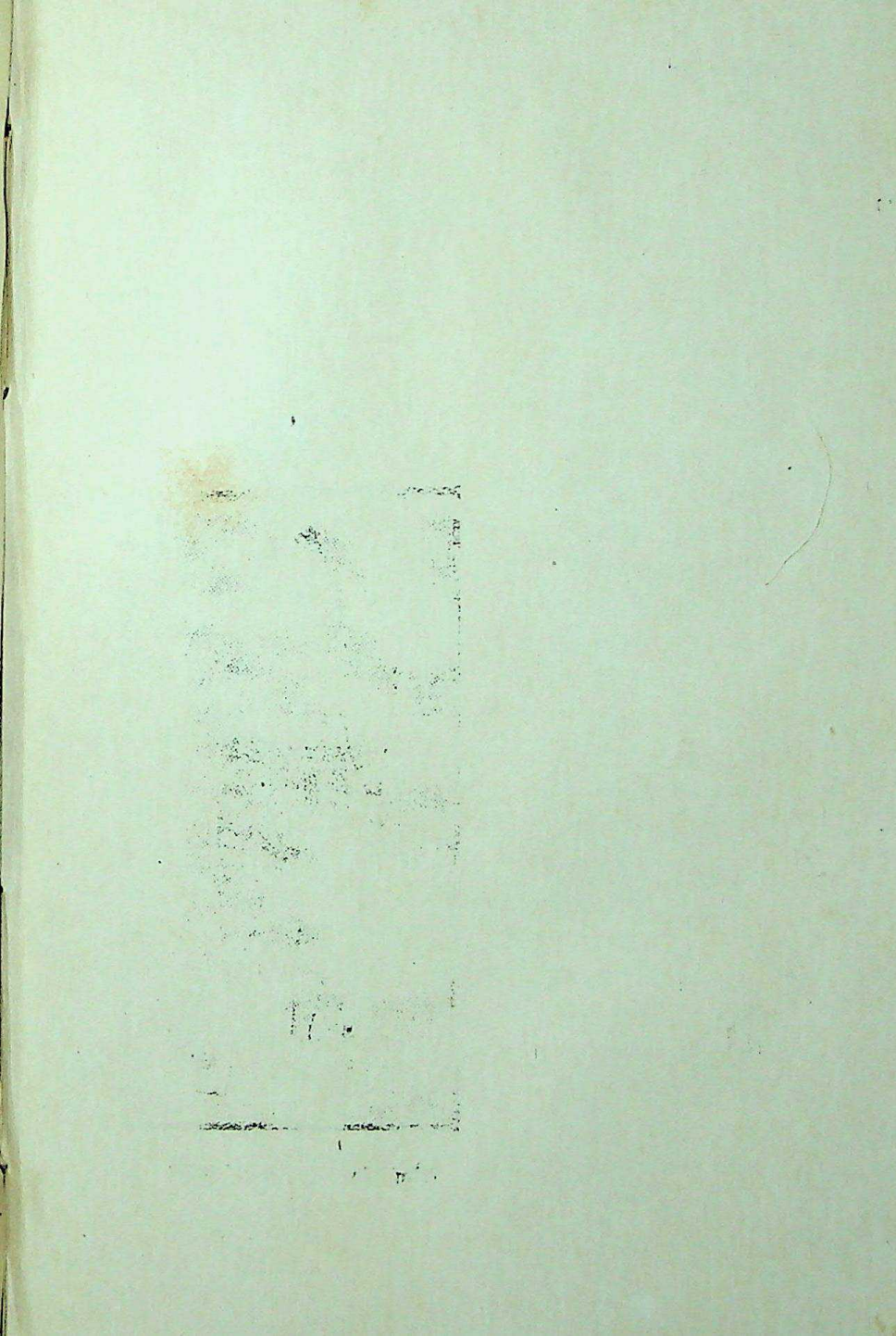
नीलकोठी का 'वूना' कुली

परिशिष्ट–३

बंगीय रंग मंच पर 'नीलदर्पण'

'नीलदर्पण' ढाका से प्रकाशित हुआ था और पहिले पहल इसका अभिनय भी वहीं हुआ। यह इतना जनप्रिय हुआ कि साल भर के अन्दर ही पुनर्मुद्रित हुआ। कलकत्ते में यह १८६२ में खेला गया। इस देश में यूरोपीय रंगमंच का प्रवर्तन गेरासिम स्तेपानोविच लेबेदेफ़ (१७४९-१८७१) ने १७९५ में कलकत्ते में किया था। लेबेदेफ़ का रंगमंच पेशेवर था और यहीं बँगला का पहिला नाटक खेला गया। इसके बाद बंगाल में पेशेवर रंगमंच का धारावाहिक प्रारंभ क्रमशः दीनबन्धु के 'सधवार एकादशी', 'लीलावती', 'नीलदर्पण' आदि नाटकों से होता है।' नीलदर्पण के अभिनय से ही बंगाल में वैतनिक प्रथा का धारावाहिक इतिहास भी शुरू होता है। इसीलिए गिरीशचन्द्र घोष ने नीलदर्पण-प्रणेता को बंगाल के रंगमंच का स्रष्टा कहकर नमस्कार किया है। वस्तुतः दीनबन्धु के नाटकों के न होने से रंगमंच पर अभिनय असंभव होता। गिरीशचन्द्र ने लिखा है—"...जिन दिनों 'सधवार एकादशी' का अभिनय हुआ उन दिनों किसी धनी की सहायता के बिना नाटकों का अभिनय एक प्रकार से असंभव होता था; क्योंकि पोशाक आदि में इतना अधिक खर्च होता था कि उसका बोझ उठाना साधारण लोगों के बूते की बात नहीं थी। लेकिन आपके समाज चित्र 'सधवार एकादशी' में अर्थ व्यय की आवश्यकता नहीं हुई। इसीलिए सम्पत्तिहीन युवक के मिलकर 'सधवार एकादशी' का अभिनय कर सके। आपके नाटक न होते तो ये युवक 'नेशनल थियेटर' स्थापित करने की हिम्मत न करते। इसीलिए आपको रंगमंच का स्रष्टा कहकर नमस्कार करता हूँ।"[1] इस नाटक के

---

१ 'शास्ति—कि—शान्ति' नाटक का उत्सर्ग-पत्र।

अभिनय के बाद नाटक-मंडली ने The Baghbazar Amateur Theatre का नाम बदल कर 'National Theatre' रखा और दीनबन्धु का 'लीलावती' खेला। उन दिनों गिरीशचन्द्र घोष इस दल के कर्णधार थे। उनका 'निमचाँद' और 'ललित' का अभिनय देखकर दीनबन्धु के आनन्द की सीमा नहीं रही। उन्होंने अभिनेताओं को प्रोत्साहित किया। इसी के फलस्वरूप नेशनल थियेटर 'नीलदर्पण' को मंचस्थ करने के लिए आगे बढ़ा।

'नीलदर्पण' का रिहर्सल शुरू हुआ। नाट्य-शिल्पी धर्मदास सुर के पड़ोसी और सम्बन्धी भुवनमोहन नियोगी के भागीरथी के तीर वाले बैठक को रिहर्सल के लिए चुना गया। गिरीशचन्द्र सब को सिखाने-पढ़ाने लगे, धर्मदास सुर ने दृश्यपट बनाना शुरू किया। इसी समय मंडली के कितने ही लोगों ने कहा कि नेशनल थियेटर की प्रतिष्ठा बढ़ गई है, हमें टिकट बेचकर अभिनय करना चाहिए। इस बात को लेकर मतभेद दिखाई पड़ा। गिरीशचन्द्र टिकट लगाकर अभिनय करने के विरोधी थे। इसके बारे में अमृतलाल वसु ने अर्द्धेन्दुशेखर मुस्तफ़ी से सुनी बातें इस प्रकार से लिखी हैं—"अर्द्धेन्दु ने कहा, 'लोगों में एक ग़लत धारणा बनी हुई है कि गिरीश बाबू टिकट लगाकर अभिनय करने के विरोधी हैं। गिरीश बाबू का कहना था कि थियेटर के लिए एक अच्छा-सा मकान किराए पर लेकर टिकट बेचने की व्यवस्था किए बग़ैर कुछ नहीं होगा। पहिले अच्छा मकान लो, अच्छा स्टेज बनाओ, तब टिकट बेचो, नहीं तो लोग क्यों लेने लगे?' अर्द्धेन्दु और नगेन बाबू ने कहा, 'हमने छोटा-सा मकान लेकर ही शुरू किया, स्टेज भी छोटा ही बनाया, अचानक बड़ा मकान कहाँ मिलता?'"[1]

---

१. मानसी ओ मर्मवाणी, अष्टम वर्ष, प्रथम खंड, चौथा अंक (पुरातन प्रसंग), पृष्ठ. ४६४–६५।

टिकट लगाकर अभिनय करने के लिए सहमत न होने के कारण मंडली के लोगों ने उनका संग छोड़ दिया और वेणीमाधव मित्र को सभापति बनाया। इस प्रकार वैतनिक नेशनल थियेटर से गिरीशचन्द्र का सम्बन्ध समाप्त हो गया। इस मतभेद के समय अमृतलाल मंडली में नहीं थे। उन दिनों वह बनारस में डाक्टरी (होमियोपैथी) करते थे। गिरीशचन्द्र के हटने के बाद अर्द्धेन्दुशेखर की चेष्टा और प्रयत्न से अभिनेता का जीवन अपना कर वे नीलदर्पण के अभिनय में सम्मिलित हुए। इस विषय में गिरिशचन्द्र ने लिखा है--"...जिस समय अमृतलाल 'नीलदर्पण' में सम्मिलित हुए उस समय मेरे न रहने का कारण कोई झगड़ा नहीं है, बल्कि मतभेद मात्र है। मेरा लिखा गाना 'लुप्तवेणीबइछे तेरो धार' इत्यादि इसका प्रमाण है। गाने का श्लेष इस प्रकारहै---'स्थान-माहात्म्ये हाड़ी शुंडी पयसा दे देखे बाहार'।[1] उपयुक्त साज सरंजाम के बिना ही जनता में टिकट बेचकर अभिनय करने के पक्ष में मैं नहीं था। कारण यह था कि बंगालियों का नाम सुनकर लोग यूँ ही मुँह टेढ़ा कर लेते थे, नेशनल थियेटर में ऐसी दीन अवस्था देखकर वे क्या करेंगे---यही मेरी आपत्ति थी। नेशनल थियेटर से बहुतेरे समझेंगे कि, यह जातीय रंग-मंच बंगाल के शिक्षित और धनियों की सम्मिलित चेष्टा से बना है। गृहस्थ युवक मामूली सरंजाम लेकर नेशनल थियेटर कर रहे हैं, यह अच्छा नहीं लगा। मतभेद यही था। दो-एक ऐसे आदमी पृष्ठपोषक बन गए थे जो टिकट बेचकर पैसा हड़प जाने वाले थे। वही इस मतभेद को शत्रुता के तौर पर पेश करने लगे। लेकिन यथार्थ में शत्रुता के लिए कोई कारण नहीं था।"[2]

गिरीशचन्द्र ने मंडली छोड़ दी। इधर नीलदर्पण का रिहर्सल

---

१. स्थान के माहात्म्य के कारण यहाँ हाड़ी (बंगाल की तथाकथित एक नीच जाति), कलवार सभी पैसे देकर बहार का मजा ले रहे हैं।

२. गिरीशचन्द्र रचित बंगीय नाट्यशालाय नटचूड़ामणि स्वर्गीय अर्द्धेन्दुशेखर मुस्तफ़ी, पृष्ठ २१-२३।

चलता रहा। अर्द्धेन्दुशेखर मंडली के जेनरल मास्टर बने मगर प्रधान उद्योक्ता थे नगेन्द्रनाथ वन्द्योपाध्याय। जोड़ासाँको के मधुसूदन महाशय का आँगन चालीस रुपए माहवार पर किराए पर लेकर वहाँ स्टेज बनाने के लिए अब्दुल मिस्त्री को रखा गया। धर्मदास बाबू स्टेज बनाने के काम की देख-भाल करते थे। उन दिनों वे कम्बुलिया टोला[1] के स्कूल में मास्टरी करते थे, दिन भर उन्हें स्कूल में रहना पड़ता था। स्टेज का काम कुछ भी नहीं हो पाता था। अतएव अमृत बाबू उनकी ओर से स्कूल में मास्टरी करते थे और उन्हें (धर्मदास बाबू को) दिन भर स्टेज का काम देखने का मौक़ा मिलता था, इस प्रकार से रिहर्सल ख़तम होने पर ७ दिसम्बर, शनिवार, १८७२ ई० (२३ अगहन १२७९ बंगाब्द) को सान्याल के मकान में 'नीलदर्पण' का टिकट लगाकर अभिनय हुआ और इसके साथ ही बंगीय रंगमंच का जो आदि उद्देश्य था उसमें भी परिवर्त्तन हो गया।

प्रथम अभिनय रजनी के अभिनेता गण[2]

उड साहब, गोलोक वसु, सावित्री
और एक रैयत............. अर्द्धेन्दुशेखर मुस्तफ़ी
नवीनमाधव.............. नगेन्द्रनाथ वन्द्योपाध्याय
विन्दुमाधव.............. किरणचन्द्र वन्द्योपाध्याय
साधुचरण, पदी हलवाइन और मजिस्ट्रेट...महेन्द्रलाल वसु
राइचरण, तोराप, गोप और मुख्तार...मतिलाल सुर
गोपीनाथ दीवान........... शिवचन्द्र चट्टोपाध्याय
रोग साहब.............. अविनाशचन्द्र कर
अमीन, पंडितजी और वैद्य...... शशीभूषण दास
खलासी................ गोलकनाथ चट्टोपाध्याय

---

१. उत्तरी कलकत्ते का एक मुहल्ला।
२. भिन्न-भिन्न सूत्रों से नामावली लेकर यह तालिका तैयार की गई है।

लठैत.................... पूर्णचन्द्र घोष
नवीनमाधव के मुख्तार आदुरी
और एक रैयत............... गोपालचन्द्र दास
राखाल.................. यदुनाथ भट्टाचार्य
सैरिन्ध्री.................. अमृतलाल वसु
सरलता.................. क्षेत्रमोहन गंगोपाध्याय
रेवती.................... तिनकड़ि मुखोपाध्याय
क्षेत्रमणि .... अमृतलाल मुखोपाध्याय (बेल बाबू या काप्तेन बेल)

परामर्शदाता (सभापति)...... वेणीमाधव मित्र
मंत्री (सेक्रेटरी)............. नगेन्द्रनाथ वन्द्योपाध्याय
सज्जाकार................ कार्तिकचन्द्र पाल

ऐक्यतान वादक—

हरमोनियम.............. कालिदास सान्याल
बेहाला.................. निमाइ उस्तादजी, गौरदास बाबाजी और बागबाजार वसुपाड़ा के सुप्रसिद्ध राजा बाबू
ढोल.................... श्यामपुकुर के विख्यात योगेन्द्रनाथ भट्टाचार्य

अभिनय में निपुणता के बारे में अमृतलाल ने लिखा है—"...हर अभिनेता ने मानो कुशल शिल्पी की तरह दीनबन्धु के नीलदर्पण को अपने मन के मुताबिक स्टेज पर उपस्थित किया।...बलवान लम्बे सुपुरुष नगेन्द्रनाथ 'नवीनमाधव' की भूमिकामें जैसे फब रहे थे, वैसा नवीन माधव जिन्दगी में फिर कभी नहीं देखा। असाधारण रूप गुण वाले महेन्द्र वसु ने 'पदी हलवाइन' की भूमिका में अद्भुत कृतित्व का परिचय दिया था। क्षेत्र गांगुली की तरह 'सरलता' कभी कोई स्त्री भी नहीं बन सकी। सरलता, सावित्री और सैरिन्ध्री की विचित्र रुलाई बंगाल के समाज के

भिन्न-भिन्न स्तरों के भिन्न-भिन्न नारी कंठों के आर्त्तनाद को भली-भाँति उपस्थित किया।"[१] सैरिन्ध्री के रोने को बिल्कुल ठीक बनाने के लिए अमृतलाल अपने मुहल्ले के एक टूटे-फूटे घर में रोज़ रोने का अभ्यास करते थे। इसलिए लोग उस टुटहे मकान को भुतहा मकान समझते थे। अमृतलाल को शुरू में रोना सीखने में परेशानी हुई, लेकिन आगे चलकर उन्होंने अपने गुरु अर्द्धेन्दुशेखर मुस्तफ़ी को हरा दिया था।

शनिवार को रात के १२ बजे अभिनय खतम हुआ। अमृतलाल ने कहा है—"लोग सराहते अघाते नहीं थे। ...लेकिन इसी समय 'इंगलिशमैन'[२] में हमारे अभिनय की एक व्यंग्यपूर्ण आलोचना निकली। लोगों ने कहा कि यह चिट्ठी अवश्य गिरीश बाबू की लिखी हुई है। इसकी एक-दो पंक्तियाँ मुझे याद हैं—'Up goes the red rag, and appears in view the rickety stage with its repulsive hangings' वग़ैरह। सैरिन्ध्री के ओठ बिचकाने का Sairindhri with her upper lips curved भी उल्लेख था।"[३]

'नीलदर्पण' के पहिले अभिनय में अपार भीड़ हुई थी। 'विश्वकोश'[४] में लिखा है कि शहर के अधिकांश धनियों ने सीट रिज़र्व कराए थे। नाच के महफ़िल में लोग जिस तरह सज-धजकर जाते हैं लोग उसी तरह की पोशाक पहन कर थियेटर देखने आए थे। नाट्य शिल्पी धर्मदास सुर ने लिखा है—"अब जिस तरह के पोस्टर निकलते हैं, तब ऐसा कुछ भी

---

१. मानसी ओ मर्मवाणी, अष्टम वर्ष, प्रथम खंड, पंचम अंक ('पुरातन प्रसंग') पृष्ठ ५७२।
२. सौ साल चलकर १९३० के जमाने में बन्द होने वाला कलकत्ते का एक साम्राज्यवादी दैनिक।
३. मानसी ओ मर्मवाणी अष्टम वर्ष, प्रथम खंड, पंचम अंक, पृष्ठ ५७४।
४. नगेन्द्रनाथ वसु सम्पादित—बंगला संस्करण।

नहीं था; पुलिस की नोटिस की तरह इश्तहार छपाकर पहली बार अभिनय हुआ।" 'विश्वकोश' से पता चलता है कि दूसरे अभिनय से 'इंगलिशमैन' के छापा खाने से सिर्फ़ अँगरेज़ी में पोस्टर छपाए गए थे।

'नीलदर्पण' के अभिनय के समय एक बार एक घटना हुई। एक दिन डिप्टी पुलिस कमिश्नर 'जाइल्स' साहब अभिनय देखने आए। बहुतों ने अनुमान लगाया कि वे शायद दो-चार को गिरफ़्तार करने आए हैं। लेकिन तब सभी अभिनय में खोए हुए थे, डर की कौन कहे सभी का आनन्द और भी बढ़ गया। 'तोराप' वेशी मतिलाल सुर ने गर्व के साथ कहा—"पकड़ना है तो पकड़े; मैं इस लुंगी को पहिने ही जाऊँगा।" जाइल्स ने इन बातों को सुनकर कहा कि वे दीनबन्धु के मित्र हैं, इसीलिए इस उत्कृष्ट नाटक का अभिनय देखने आए हैं।[1]

इधर गिरीशचन्द्र ने नेशनल थियेटर से नाता तोड़कर एक यात्रा-मंडली खोली। इसके लिए उन्होंने एक प्रहसन लिखा। उसमें उनका लिखा दोहरे अर्थ वाला निम्नलिखित गाना सुप्रसिद्ध अभिनेता और गायक राधामाधव कर गाया करते थे। गाने में नेशनल थियेटर के सभी अभिनेताओं और सदस्यों के नाम होशियारी से लाए गए थे और 'नील-दर्पण' के अभिनय पर श्लेष था। गाना इस प्रकार था—

लुप्तवेणी[1] बइछे तेरो धार
ताते पूर्ण[2] अर्द्ध इन्दु[3] किरण[4]

---

१. मानसी ओ मर्मवाणी, अष्टम वर्ष, प्रथम खंड, पंचम अंक, पृष्ठ ५७५।

चिह्नित वाक्यों के अर्थ—

१—वेणीमाधव मित्र—मंडली के सभापति

२—पूर्णचन्द्र घोष—अभिनेता

३—अर्द्धेन्दुशेखर मुस्तफ़ी—अभिनेता

४—किरणचन्द्र वन्द्योपाध्याय—अभिनेता

सिंदुरमाखा मतिर[5] हार।
नग[6] ह'ते धारा धाय, सरस्वती क्षीणकाय[7],
विविध विग्रह[8] घाटेर उपरे शोभा पाय,
शिव[9] शम्भुसुत[10] महेन्द्रादि[11]
यदुपति[12] अवतार।
अलक्ष्येते विष्णु[13] करे गान,
किबा धर्म्म[14] क्षेत्र[15] स्थान,
सबाइ मिले डेके बले, दीनबन्धु[16] कर पार।
किबा बालूमय बेला[17]
पाले पाल[18] रतेरे बेला,[19]

५--मतिलाल सुर-- अभिनेता
६--नगेन्द्रनाथ वन्द्योपाध्याय--अभिनेता
७--'सरस्वती क्षीणकाय' अर्थात् अल्प विद्या
८--विग्रह--एक गंदी गाली
९--शिवचन्द्र चट्टोपाध्याय--अभिनेता
१०--कार्त्तिकचन्द्र पाल--सज्जाकार
११--महेन्द्रलाल वसु--अभिनेता
१२--यदुनाथ भट्टाचार्य--अभिनेता
१३--ब्राहम समाज के गायक विष्णुचरण चट्टोपाध्याय, ये नेपथ्य में गाना गाते थे।
१४--धर्म्मदास सुर--स्टेज मैनेजर
१५--क्षेत्रमोहन गंगोपाध्याय--अभिनेता
१६--दीनबन्धु मित्र--नाट्यकार
१७--अमृतलाल मुखोपाध्याय (बेल बाबू या काप्तेन बेल)--अभिनेता
१८--राजेन्द्रनाथ पाल आदि पालवंशीय पृष्ठ पोषकगण
१ --रेतेर बेला--रिहर्सल रात को होता था

भुवनमोहन[२०] चरे[२१] , करे गोपाले[२२] खेला,
मिछे करे आशा, जत चाषा[२३]
नीलेर गोड़ाय दिच्चे सार[२४] ।
कलंकित शशी[२५] हरषे, अमृत[२६] बरषे,
ज्ञान हय बा दीनेर[२७] गौरव एतदिने खसे,
स्नान-महात्म्ये हाड़ी-शुंड़ि
पयसा दे देखे बाहार[२८] ॥

२०—भुवनमोहन नियोगी—एक विशिष्ट सदस्य
२१—चरे अर्थात् घूमते हैं। भूवन बाबू के जिम्मे ख़ास काम न होने की वजह से वे घूमते थे, या 'भुवनमोहन चरे' से रसिक नियोगी के घाट पर भूवन बाबू का बैठक जहाँ नीलदर्पण का रिहर्सल होता था।
२२—गोपालचन्द्र दास—अभिनेता
२३—चाषा—काश्तकारी करनेवाली जाति के कितने ही लोग मंडली में थे।
२४—'नीलेर गोडाय दिच्चे सार'—अर्थात् नीलदर्पण नाटक रूपी खेत में खाद डाल रहे हैं।
२५—शशिभूषण दास—अभिनेता
२६—अमृतलाल वसु—अभिनेता
२७—अर्थात् ग्रंथकार दीनबन्धु मित्र का
२८—मंडली पेशेवर थी, इसलिए सभी लोग टिकट लेकर जा सकते थे और एक साथ बैठकर नाटक देख सकते थे।

ऊपर लिखा परिचय अविनाशचन्द्र गंगोपाध्याय सम्पादित 'गिरीश गीतावली,' पृ० ४००–४०१ के आधार पर तैयार किया गया है।

गिरीश बाबू के इस गाने से पता चलता है कि अभिनय उनके मन के लायक़ नहीं हुआ था। वस्तुतः दीनबन्धु भी नाटक देखकर बहुत प्रसन्न नहीं हुए थे। नेशनल थियेटर में 'सधवार एकादशी' और 'लीलावती' देखकर उन्होंने कहा था—"तुम्हारे से चुँचुड़ा की मंडली की तुलना ही नहीं हो सकती—मैं चिट्ठी लिखूँगा कि बंकिम हार गया।" उसी नेशनल थियेटर में नीलदर्पण देखकर उन्हें खेद के साथ कहना पड़ा था कि "इसमें एक भी योग्य गंभीर भूमिका करने वाला अभिनेता सम्मिलित नहीं हुआ है।"[१] गिरीशचन्द्र अभिनय देखने नहीं गए थे इसीलिए ये बातें कही गईं थीं, इसमें सन्देह नहीं। फिर भी अमृतलाल ने कहा है कि नीलदर्पण का अभिनय देखकर दर्शकों ने इसकी जो प्रशंसा की उसका श्रेय गिरीशचन्द्र की निपुण शिक्षा को ही है। गिरीशचन्द्र ने लिखा है—"...नील दर्पण का अभिनय सिखाने की ज़िम्मेदारी धर्मदास बाबू ने मुझे दी थी। नीलदर्पण मंडली के महेन्द्रलाल, मतिलाल, काप्तेन बेल, शिवचन्द्र आदि बहुतेरे आजीवन मुझे गुरु का गौरव प्रदान करते रहे।"[२]

दो शनिवार लगातार अभिनय के बाद नीलदर्पण का अभिनय बन्द हो गया। नेशनल थियेटर के लोगों ने गिरीशचन्द्र के घर जाकर अनुरोध किया कि मंडली को सिखाने का भार वे फिर सँभालें। अन्त में गिरीशचन्द्र ने उनकी बात मान ली। इसी समय मंडली में फिर मनमुटाव दिखाई पड़ा। अर्द्धेन्दुशेखर, अमृतलाल वग़ैरह कई अभिनेताओं के नेशनल थियेटर छोड़कर चले जाने से अभिनय कुछ दिनों के लिए बन्द हो गया। स्टेजपोशाक वगैरह दूसरी जगह ले जाया गया।

२९ मार्च १८७३ को सोलहो आने गिरीशचन्द्र की देख-रेख में कलकत्ते के टाउन हाल में बड़े समारोह से नीलदर्पण फिर अभिनीत हुआ।

---

१. गिरीशचन्द्र—बंगीय नाट्यशाला नटचूड़ामणि
२. वही, पृष्ठ २१

उस समय के मशहूर डाक्टर मैकनामारा ने 'नेटिव हास्पिटल' खोलना चाहा। धर्मदास सुर, राजेन्द्रनाथ पाल वग़ैरह ने उनसे कहा कि अगर टाउन हाल भाड़े पर मिल जाय तो वहाँ अभिनय करके सारी रक़म वे अस्पताल के फंड में देने के लिए तैयार हैं। डाक्टर मैकनामारा ने टाउन हाल में अभिनय की व्यवस्था कराने में मदद की। टाउन हाल भलीभाँति सजाया गया, चारों ओर इश्तहार बाँटे गए—The National Theatre will re-open, for the benefit of the Native Hospital, at the Town Hall. पूर्ववर्त्ती अभिनयों में अर्द्धेन्दुशेखर ने 'उड' का अभिनय करके असाधारण प्रतिभा का परिचय दिया था। उनके चले जाने से टाउन हाल के अभिनय में स्वयं गिरीशचन्द्र ने उड का पार्ट किया। इस अभिनय को देखनेवाले लोग उनके पार्ट की प्रशंसा कर गए हैं। उड की भूमिका में गिरीशचन्द्र ने अँगरेज़ की जो प्रतिच्छवि दिखाई थी उसकी प्रशंसा बहुतेरे संभ्रान्त अँगरेज यह कह कर कर गए हैं कि उनका अभिनय अँगरेज जैसा ही था।[1] टाउन हाल के अभिनय में गिरीशचन्द्र ने उड के साथ ही नवीनमाधव का पार्ट करके अभिनयपटुता का चरमोत्कर्ष दिखाया था।

टाउन हाल के अभिनय की एक घटना का उल्लेख करना उचित होगा। अभिनय में एक जगह जब तोराप ने 'रोग' साहब से आजिज़ आकर उन पर आक्रमण कर दिया तो दर्शकों में से दीनदयाल वसु[2] अभिनय देख कर इतने खो गए थे कि स्टेज पर चढ़ कर 'तोराप' वेशी मतिलाल सुर के साथ 'रोग' को मारते-मारते मूर्च्छित हो गए।[3]

इस अभिनय में ग्यारह सौ रुपए मिले थे। खर्च के चार सौ काटकर

---

१. नाट्य मंदिर, तृतीय वर्ष, ७–८वाँ अंक, पृष्ठ ५७२।
२. आगे चलकर तंत्रशास्त्र के विख्यात विद्वान् और कलकत्ता हाइकोर्ट के बैरिस्टर जान उडरफ़ के आप पेशकार बने।
३. नाट्य मन्दिर, तृतीय वर्ष, ७–८वाँ अंक, पृष्ठ ५७३।

बाक़ी रक़म अस्पताल फंड को दे दी गई। इस तरह नीलदर्पण ने अपने जन्मकाल में ही एक जनहितकर काम में सहायता की थी।

गिरीशचन्द्र ने यही पहली बार नीलदर्पण का अभिनय किया। इसके बाद 'ग्रेट नेशनल' और 'स्टार थियेटर' में नीलदर्पण का फिर अभिनय हुआ, गिरीशचन्द्र ने न जाने कितनी बार बड़ी योग्यता के साथ उड का पार्ट किया। बंगीय नाट्यशाला में अभिनेत्रियों को लेकर अभिनय की प्रथा चलने के बाद भी नीलदर्पण खेला जाता रहा। लेकिन इस नाटक में सावित्री, सैरिन्ध्री, पदी हलवाइन आदि का इनका जैसा अभिनय अर्द्धेन्दुशेखर मुस्तफ़ी, अमृतलाल वसु, महेन्द्रलाल वसु ने किया वैसा बाद में किसी अभिनेत्री से भी नहीं बन पड़ा।

१९०८ में एक ही समय 'स्टार', 'मिनार्वा' और 'कोहिनूर' (बाद में मनोमोहन) थियेटरों में बड़े समारोह के साथ नीलदर्पण के अभिनय हुए। १९५० के युग तक यही नीलदर्पण का अन्तिम अभिनय था। इसके कुछ ही दिनों के बाद अँगरेज़-विद्वेष और राजद्रोह का आरोप लगाकर नीलदर्पण समेत बहुत से नाटकों का अभिनय बन्द कर दिया गया।

कहा जाता है कि एक बार ईश्वरचन्द्र विद्यासागर नील दर्पण का अभिनय देखने गए। अर्द्धेन्दुशेखर 'रोग' का अभिनय कर रहे थे। तृतीय गर्भांक में 'रोग' जहाँ अपने कमरे में क्षेत्रमणि की आबरू उतारने पर आमादा हो जाता है, उसे देखकर विद्यासागर अभिनय की बात भूल गए। उन्होंने मुस्तफ़ी को अपनी चप्पल का निशाना बनाया। मुस्तफ़ी ने चप्पल उठाकर माथे पर रखते हुए कहा—"यही मेरा श्रेष्ठ पुरस्कार है।" विद्यासागर की चप्पल नीलहों के अमानुषिक अत्याचार के खिलाफ़ प्रतिवाद का प्रतीक बन गई।

पिछली शताब्दी में एक बार लखनऊ में नीलदर्पण का अभिनय हो रहा था। अँगरेज़ फ़ौजियों ने नंगी तलवार लेकर मंच पर हमला किया था। इस घटना का सजीव वर्णन उस अभिनय में सम्मिलित होने वाली विनोदिनी दासी नामक अभिनेत्री ने इन शब्दों में किया है—"एक रात लखनऊ के छतरमंज़िल में हमारे नीलदर्पण का अभिनय हो रहा था।

उस दिन लखनऊ शहर के क़रीब सभी साहब नाटक देखने आए थे। जहाँ रोग साहब क्षेत्रमणि पर अवैध अत्याचार करने के लिए उद्यत हुआ, तोराप ने दरवाज़ा तोड़कर रोग साहब को पीटा, उसी समय नवीनमाधव क्षेत्र-मणि को लेकर चले गए। एक तो नीलदर्पण नाटक का बहुत सुन्दर अभिनय हो रहा था, उस पर मतिलाल सुर तोराप का, अविनाश कर महाशय मिस्टर रोग साहब का अभिनय बड़ी दक्षता से कर रहे थे। यह देखकर साहब बहुत उत्तेजित हो गए। गोलमाल शुरू हुआ और एक साहब दौड़कर स्टेज पर चढ़ गया और तोराप को मारने पर आमादा हो गया।[1]

---

१. विनोदिनी दासी--आमार कथा, १३१९ वंगाब्द (१९१२ ई०) पृष्ठ २९.

परिशिष्ट–४

नीलदर्पण का तथ्यगत आधार

नीलदर्पण के कितने ही अन्य पात्रों की कहानियों की तरह क्षेत्रमणि की कहानी भी सच्ची घटना पर आधारित है। इस घटना का विवरण सबसे पहिले 'हिंन्दू पेट्रियट' में प्रकाशित हुआ था। इसके बाद 'इन्डिगो कमीशन' के सभापति को नदीया के मैजिस्ट्रेट हर्सेल ने १३ जून १८६० को जो चिट्ठी लिखी थी उससे भी घटना की सच्चाई का प्रमाण मिलता है।[1] हार्सेल ने लिखा है कि १२ फरवरी को मथुर विश्वास की पतोहू हरमणि को आर्चिबिल्ड हिल्स के आदमी पकड़ ले गए थे।

दारोग़ा ने उसी दिन काचिकाटा की कोठी में पहुँच कर सुना कि हिल्स वहाँ नहीं हैं। १४ तारीख को पुलिस ने रिपोर्ट दी कि हरमणि अपने घर लौट आई है। २८ फरवरी को हार्से नदीया के मैजिस्ट्रेट बन कर आए। ९ मार्च को मथुर विश्वास ने अभियोग किया कि जब उसकी पतोहू हरमणि अकेली पानी भरने जा रही थी तो आर्चिबल्ड हिल्स, किसन सिंह, मधु सिंह, जुरन सिंह, आदित्य विश्वास, शकूर मुहम्मद, कुतुबादि ताकीदगीर वग़ैरह ३० आदमी भी उसे ज़बर्दस्ती पकड़ कर काचिकाटा कोठी में ले गए। घोड़े पर चढ़ा हिल्स बराबर उनके साथ रहा। हिल्स ने रात के साढ़े ग्यारह बजे तक उसे अपने कमरे में रखा। इसके बाद उसे पूरब के एक गाँव में एक ब्राह्मण के घर ले जाया गया, लेकिन वहाँ उसे घर में घुसने नहीं दिया गया। एक नाई के घर में भी उसे घुसने नहीं दिया गया। तब उसे गोलाई-दुर्गापुर की कोठी अमीन,

---

१. Indigo Commission's' Report, Appendix No. 12 परिशिष्ट (१) में उद्धृत।
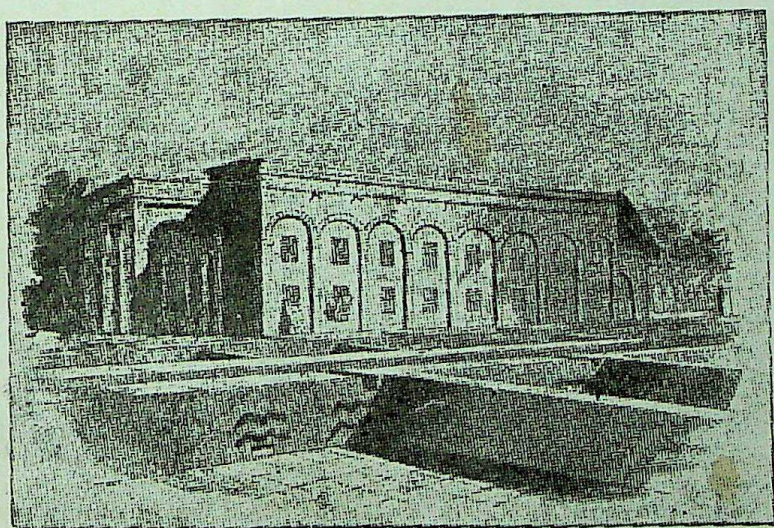
मुल्ला हाटी की कोठी

मथुर निवास के एक रिश्तेदार, स्वरूप विश्वास के घर पहुँचाया गया। १० मार्च को हरमणि मैजिस्ट्रेट के सामने पेश की गई। दारोगा ने १० मार्च को रिपोर्ट दी कि हरण करके ले जाने की बात सच्ची है। जो पुलिस उसे रिहा कराने गई थी उसने हरमणि को कोठी में ले जाए जाते देखा था। लेकिन कोठी में घुसने की उनकी हिम्मत नहीं हुई, और पुलिस भेजने के लिए उन्होंने खबर भेजी थी। मदद पहुँचने के पहिले ही हरमणि वहाँ से हटा दी गई थी। ५ अप्रैल की रिपोर्ट वग़ैरह को देख-भाल कर हार्सेल ने मामला खारिज कर दिया। फ़ैसले में लिखा कि चूँकि मथुर विश्वास ने पहिले ही सुलहनामा लिख दिया था कि वह मुक़दमा दायर नहीं करेगा तो अभियुक्तों को सज़ा न देने के लिए यही यथेष्ट कारण है; दूसरी बात यह है कि, घर्षणा का अभियोग गढ़ा हुआ मालूम होता है।

असल बात यह है कि, इतने प्रमाणों के बावजूद हार्सेल जैसे हाकिम को भी निलहों के खिलाफ़ किसी तरह का अभियोग लगाकर अभियुक्त के कठघरे में खड़ा करने की हिम्मत न होती। इसके अलावा एक बात यह भी है कि १८५७ के विद्रोह के समय बहुत से निलहे गोरे मैजिस्ट्रेट बनाए गए थे और वे स्वगोत्रीय थे। उनमें मिलीभगत का होना अचरज की बात नहीं है। यह सब होते हुए भी हार्सेल, इडेन जैसे एक-दो मैजिस्ट्रेटों ने निलहों का जुल्म कुछ हद तक बन्द करने की कोशिशें की थीं। लेकिन अधिकांश मैजिस्ट्रेट निलहों के अंतरंग मित्र थे जिसका परिचय नील-दर्पण में मिलता है।

नाटक के एक हिस्से में जेल में गोलोकचन्द्र की लाश के सामने दारोग़ा पूछता है कि "मैजिस्ट्रेट साहब आएँगे या नहीं?" जमादार जवाब देता है: "जी नहीं, उनके आने में और चार दिन की देर होगी, शनिवार को शचीगंज की कोठी में साहबों की शैम्पेन पार्टी है, बीवियों का नाच होगा। उड साहब की बीवी हमारे साहब के सिवा दूसरे के साथ नाच ही नहीं पाती, अर्दली रहते समय मैंने देखा है।" निलहों और अधिकांश मैजिस्ट्रेटों का चरित्र ऐसा ही था; जिस जज ने पादरी लांग का फ़ैसला किया था उन्होंने भी इसका ज़िक्र किया था। उनका कहना था कि

जमादार का यह कथन 'घृणित मानहानि है,' क्योंकि निलहे अवैध तरीक़े से मैजिस्ट्रेटों को मुट्ठी में करके अपना काम बनाते हैं, यहाँ इसकी ओर इशारा किया गया है। गोलोकचन्द्र के मुक़दमे के समय देखा गया कि नील कोठी का साहब मैजिस्ट्रेट की बग़ल में बैठा है और उसी की सलाह के मुताबिक फ़ैसला हो रहा है।[1]

नीलदर्पण के दो साल पहिले टेकचाँद ठाकुर ने[2] 'आलालेर घरेर दुलाल' (बड़े घर का बिगड़ा लल्ला) निलहों के अत्याचार का जीता-जागता चित्र उपस्थित किया था—

"यशोहर में (जेसोर, अब पूर्वी पाकिस्तान में) निलहों का ज़ुल्म बहुत बढ़ गया है। प्रजा क़तई नील बोना नहीं चाहती क्योंकि धान वग़ैरह बोने से ज़्यादा फ़ायदा होता है। जिसने नील कोठी में जाकर एक बार दादनी ली उसका सत्यानाश हो जाता है। प्रजा जी जान से नील की खेती करके दादनी की रक़म पटाती है सही मगर हिसाब की दुम हर साल बढ़ती जाती है और कोठी वाले के गुमाश्तों व दूसरे कार-परदाज़ों का पेट थोड़े में नहीं भरता। इसलिए जिस प्रजा ने एक बार निलहों की दादनी का सुधामृत पान किया है वह प्राण रहते कोठी का मुँह नहीं देखना चाहता। लेकिन निलहों का नील तैयार न हो तो बड़ी मुसीबत में पड़ना पड़ता है।...दूसरी बात यह है कि जो अँगरेज़ कोठी का काम-काज देखते हैं वे विलायत के बहुत मामूली आदमी होते हैं, कोठी का काम वे बड़ी सख्ती से चलाते हैं ताकि उन्हें कहीं पुनर्मूषिक न बनना पड़े।...

१–हरिश्चन्द्र मुखर्जी ने इस विषय में Hindu Patriot में लिखा था–"Are those magistrates men to govern millions, when they cannot resist the temptation of dining with the planters and talking with their wives and dancing with them ?"

२–असल नाम, प्यारी चाँद मित्र

मतिलाल (ज़मींदार) संगियोंके साथ हँसी-मज़ाक कर रहा है—
"खजान्ची बही खोलकर नाक पर चश्मा चढ़ाए लिख रहा है, इसी समय एक किसान दौड़ता हुआ आ चिल्लाकर बोला—'बाबू साहब, कोठी वाले बेटे ने हमारा सत्यानाश कर दिया। बेटा सर ज़मीन पर आ हमारी बोई हुई ज़मीन जोत रहा है, हल, बैल सब छीन लिया है। बेटे ने बोई फ़सल चौपट कर दी। साले ने पका धान हेंगा दिया।' खज़ानची ने आकर देखा कोठीवाला साला टोपी पहने, मुँह में सिगार दबाए, हाथ में बन्दूक लिए हल्ला मचा रहा है। खज़ान्ची ने पास जाकर म्याओं-म्याओं करके एक-दो बातें कहीं, कोठी वाले को खदेड़ दो मारो का हुक्म दिया। दोनों ओर से चलने लगी—कोठी वाले ने दौड़कर गोली चलानी चाही। ज़मींदार के आदमी थोड़ी देर में भाग खड़े हुए, कुछ घायल भी हुए। कोठी वाला अपना प्रताप दिखा सीना तान कर कोठी में चला गया और दादनी वाली प्रजा घर लौट 'सत्यानाश' हुआ कह कर रोने लगी।

"दंगे के बाद निलहा साहब ने कोठी में जा ब्रान्डी में बोतल का पानी मिला कर पिया और सीटी बजाता हुआ गाने लगा। उसका कुत्ता दौड़ता हुआ सामने खेल रहा था। साहब जानता था कि उसे दुरुस्त करना कठिन है, मैजिस्ट्रेट और जज हमेशा उसकी कोठी पर खाना खाते हैं और साथ ठहरते हैं, अदालत के आदमी उससे यमदूत की तरह डरते हैं, अगर तहक़ीक़ात होती है तो भी क़तल के मुक़दमे में किसी दूसरे ज़िले में उसका फ़ैसला नहीं होगा। काला आदमी क़तल या कोई और अपराध करे तो मुफ़स्सिल की अदालत में फ़ौरन उस पर मुक़दमा चलता है और सज़ा होती है। गोरों के इस तरह के जुर्म करने पर सुप्रीम कोर्ट में मुक़दमा होता है, गवाह नहीं मिलते, दुनिया भर की परेशानी होती है, मुक़दमा हो जाता है।

"निलहे ने जो सोचा था वही हुआ। अगले दिन दारोग़ा ने आकर उसकी कचहरी घेर ली। दुर्बल होना बड़ा अपराध है—सब का कोई सामना नहीं कर सकता। मतिलाल ने घर के भीतर जाकर दरवाज़ा बन्द कर लिया। खज़ानची ने सामने आकर एक मुश्त देकर बहुतों की

मुश्क खुलवा दी। दारोगा बड़ा शोर-शराबा मचा रहा था—रुपया पाते ही ठंडा पड़ गया। जाँच करके दोनों ओर बचाते हुए उसने मैजिस्ट्रेट को रिपोर्ट दी—एक ओर लोभ था और दूसरी ओर डर। निलहे के अमीन ने सभी तरह की तैयारियाँ कीं और मैजिस्ट्रेट को विश्वास होने लगा कि नील कोठी वाला अँगरेज़ है, ईसाई है, बुरा काम कदापि नहीं कर सकता क्योंकि काली चमड़ीवाले ही हर तरह का दुष्कर्म करते हैं। इसी समय सरिश्तेदार और पेशकार ने भी निलहे से ज़्यादा घूस पाकर उसके विपक्ष का बयान दबा दिया। निलहे ने भाषण दिया—'यहाँ आकर मैं इस तरह से बंगालियों का उपकार कर रहा हूँ, मैं उनकी शिक्षा और दवा-दारू के लिए काफ़ी खर्च कर रहा हूँ, उल्टे मेरे ऊपर यह तोहमत लगाई जा रही है। बंगाली बड़े बेईमान और दंगाई होते हैं।' इन बातों को सुनकर मैजिस्ट्रेट टिफ़िन करने चले गए। टिफ़िन के बाद खूब छककर शराब पी और सिगार पीते हुए अदालत में आए—मुक़दमा पेश हुआ, साहब ने सिरिश्तेदार को बुलाकर कहा—'मामला खारिज़ करो।''

१८५७ के विद्रोह और नील-विद्रोह ने बंगाल में एक ऐसी ज़ोरदार लहर पैदा कर दी थी कि तत्कालीन बँगला साहित्यपर इसका काफ़ी अच्छा प्रभाव पड़ा। मधुसूदन, दीनबन्धु, कालीप्रसन्न सिंह, बंकिम—सभी को बृटिश विरोधी जन विद्रोह ने आलोड़ित किया था। मधुसूदन ने 'बूड़ो शलिकेर घाड़े रें' (बूढ़े मुँह मुँहासे लोग) में ज़मींदारी के अत्याचारी रूप को उद्घाटित किया था। हिन्दू-मुसलमान किसानों की ज़िन्दगी और अत्याचार के खिलाफ़ उनका मिला-जुला संग्राम इस प्रहसन में चित्रित हुआ है। कालीप्रसन्न ने अपने 'हुतोम ध्यांचार नक्सा' (१८६२) में १८५७ के विद्रोह के साथ बंगाली बुद्धिजीवियों के बड़े हिस्से ने जो विश्वासघात किया था उस विद्रूप के कोड़े बेरहमी से लगाए हैं। नील-विद्रोह के समय के क़ानून और अदालत की खिल्ली उड़ाते हुए इसमें लिखा गया है : "प्यादे तक डिप्टी मैजिस्ट्रेट बनकर मुफ़स्सिल चले गए। बड़ा तहलका मचा। जंगली बाघ (प्लैन्टर्स ऐसोसियेशन) मामला टेढ़ा देख नाम बदल (लैंड होल्डर्स ऐसोसियेशन) तुलसी के

खेत में जा घुसा। लांग को सज़ा हो गई। वेल्स को धमकियाँ मिलीं। ग्रान्ट ने इस्तीफ़ा दिया। फिर भी हल्ला शान्त नहीं हुआ।"

इसी में एक जगह लिखा गया है—"दूसरी क्रान्ति[1] (रेवोल्यूशन) होगी, यह समझ कर निलहों ने सरकार से तोप और गोरा पल्टन की मदद माँगी। रेजीमेन्ट के रेजीमेन्ट गोरा, गनबोट और स्पेशल कमीशन चले; मुफ़स्सिल की जेलों में निरपराधियों के लिए अब जगह मिलना मुश्किल हो गया, अखबारों में खलबली मच गई और आल्टर ब्रेड अवतार बन गए।"

निलहों द्वारा शोषित और अत्याचारित बंगाल के ग्रामीण जीवन की जो बुरी हालत थी उसका चित्र मीर मुशर्रफ़ हुसैन के 'उदासीन पथिकेरे मनेर कथा' नामक उपन्यास में मिलता है। आप नदीया ज़िले के कुष्टिया सब-डिवीज़न के रहने वाले थे और प्रत्यक्ष अनुभव के आधार पर आपने यह उपन्यास लिखा था। नील-विद्रोह के बारे में बहुतेरे तथ्य वह जानते थे और इसका एक इतिहास लिखने का उनका इरादा भी था। लेकिन उनकी इच्छा पूरी नहीं हुई। अंतिम जीवन में उन्होंने जलधर सेन को लिखा था—"तुम्हें नील-विद्रोह के बारे में बहुत-सा नोट दे जाऊँगा। तुम एक इतिहास लिखना, इस बुढ़ापे में मैं नहीं लिख सका।"[2]

इसी वातावरण में हुसैन ने 'ज़मींदार-दर्पण' लिखा था। बंकिमचन्द्र ने इसके बारे में लिखा था—"उदाहरण द्वारा ज़मींदारों के अत्याचारों का वर्णन करना इसका उद्देश्य है। निलहों के बारे में विख्यात नीलदर्पण का जो उद्देश्य था, आम ज़मींदारों के बारे में इसका भी वही उद्देश्य है।"[3]

निलहों के अत्याचार, उत्पीड़न और शोषण का प्रारंभ उसी दिन से हुआ जिस दिन से ईस्ट इन्डिया कम्पनी की छत्रछाया में अँगरेज़ों

---

१. १८५७ को पहली क्रान्ति मानी थी।

२. जलधर सेन—कांगाल हरिनाथ, प्रथम खंड, पृ. ३८।

३. बंगदर्शन

ने इसकी खेती शुरू की। प्रोफ़ेसर हारामचन्द्र चकलादार ने लिखा है—

Only fifty years ago, three or four millions of our countrymen in Bengal were subjected by European Indigo planters to a system of inhuman oppression which only finds a parallel in the annals of negro-slavery in America. .....Every form of oppression that unrestrained tyrrany could devise or the inventive imagination of rapacity could contrive, were put into practice by the Indigo-planters. The criminal records of Bengal, from the time that indigo cultivation was introduced into the province down to its final banishment, prove clearly and undeniably that 'murder, homicide, riot, arson, dacoity, plunder and kidnapping (Sir Ashly Eden) afterwards Lt. Governor of Bengal, handed to the Indigo Commission an abstract of 49 serious cases and a file of heinous crimes in connection. with the cultivation of indigo, Vide Report of the Indigo Commission, Answer No. 3575) were some of the means by which the ryot was forced to take up the cultivation of Indigo.'

१'Fifty Years Ago : The woes of a class of Bengal peasantry under European Indigo planters.' The Dawn and Dawn Society's Magazine, Calcutta, July, 1905.

बंगाल सरकार के चीफ़ सेक्रेटरी बकलैंड ने अपनी पुस्तक में निलहों के अत्याचार के प्रमाणित तरीकों का विवरण इस प्रकार दिया है--

"विशिष्ट निलहों के विरुद्ध जो अपराध संशयातीत और अविसंवादित रूप से सिद्ध हुए हैं उनका वर्गीकरण इस प्रकार से किया जा सकता है:

१—हिंसात्मक आक्रमण जिसके फलस्वरूप देशी लोगों की जान गई है, यद्यपि इसे नरहत्या नहीं भी कहा जा सकता।

२—तरह-तरह के बहाने बनाकर इस देश के लोगों को गोदाम में बन्द कर रखना, विशेष करके उनके जानवरों को बन्द कर रखना, जिसका उद्देश्य था उनसे तथाकथित पावना वसूल करना।

३—अपने भाड़ेतों को इकट्ठा कर ज़बर्दस्त दंगा-फ़साद करना और दूसरे निलहों से दंगे करना।

४—चमड़े से बँधे बेंत (यह 'श्याम चाँद' कहलाता था जिसका उल्लेख नीलदर्पण में भी आया है) से किसानों और दूसरों को पीटना, और भी तरीक़ों से सजा देना।"[१]

नदीया जिले के हतिया गाँव के किसान सबीर विश्वास ने नील-कमीशन के सामने कहा था कि "निलहों के अनुसार मुझे सात बीघे ज़मीन में नील की खेती करनी पड़ती है, मगर ज़मीन ग्यारह बीघे हैं। किसी साल वे मुझे एक या दो रुपए दादनी देते हैं, लेकिन कोठी के अमले इसे हड़प लेते हैं। अपनी फ़सल के लिए कोठी से मुझे कभी एक पैसा भी नहीं मिला। पिछले साल मैंने पचीस नाव भर कर नील दिए। निलहे कहते हैं कि एक नाव में ३।४ बोझ नील आते हैं, मैं कहता हूँ कि १२।१६ बोझ आते हैं।"[२]

१-Buckland, C. E.-Bengal under the Lieutenant Governors. pp. 238-239 Calcutta, 1902.

२-Indigo Commission's Report, Evidence, P. 232.

निलहे ज़मींदार और महाजन भी थे। उनकी अनन्त लूट का एक और उदाहरण दिया जाता है——

नदीया ज़िले के बाजिभाजु गाँव के किसान मीरजान मंडल ने कहा था, "महाजन के यहाँ रुपए में १४ से १६ कट्टा धान मिलता है, निलहा वहाँ सिर्फ ८ कट्टा ही देता है, उसे छोड़कर हम दूसरे महाजन के पास नहीं जा सकते। मेरी एक शिकायत यह है कि पिछले कार्तिक महीने में निलहा मेरे सात सौ बाँस काट ले गया। इसके लिए उसने कुछ भी नहीं दिया। अगर देता भी है तो कहता है कि सौ बाँस का दाम चार आने होता है।"[1]

काकबर्न (Cockburn) बहुत दिनों तक नील कोठी के मालिक रहे। बाद में मुर्शिदाबाद ज़िले के डिप्टी मैजिस्ट्रेट बने। उन्होंने कहा है—"जो निलहे ज़मींदार बन गए हैं, वे प्रजा की रक्षा के लिए बनाए गए क़ानूनों की बात सुनकर हँसते हैं। किसी भी क़ानून को उनके ख़िलाफ़ इस्तेमाल नहीं किया जा सकता, क्योंकि जब तक प्रजा का सब कुछ उनकी मुट्ठी में है तब तक प्रजा क़ानून की कारण में जाने की हिम्मत नहीं कर सकती।"[2]

देलातूर १८४८ में फ़रीदपुर ज़िले के मैजिस्ट्रेट थे। नील-कमीशन के सामने उन्होंने कहा था——"नील की एक भी ऐसी पेटी विलायत नहीं जाती जो इन्सान के ख़ून से रंगी न हो——इस कथन के लिए कमीशन को दोषी ठहराया गया है। यह कथन मेरा भी है। फ़रीदपुर का मैजिस्ट्रैट रहते समय मैंने जो अनुभव प्राप्त किया उसके आधार पर मैं दावे के साथ कह सकता हूँ कि यह बात सोलहो आने सच है। मैंने ऐसे रैयतों को देखा हैं जिनकी पीठ बल्लमों से आर-पार छेद दी गई थी। कुछ रैयत मेरे

१–Indigo Commission's Report, Evidence, P. 233

२–Selections from Bengal Government Records, No. XXXIII, 'Indigo Cultivation,' Part, I, p. 18.

सामने लाए गए थे जिन्हें निलहे फ़ोर्ड ने गोली मारी थी। मैं ऐसे और भी रैयतों को जानता हूँ जिन्हें बल्लम से घायल करके हरण किया गया था।"[1]

ब्रिटिश पार्लियामेंट में भी इसी तरह की बातें कितने ही सदस्यों ने कही थीं। लेयड ने कहा था—"निलहों ने लाचार किसानों की ज़मीन दख़ल कर ली है, वे हथियारबन्द होकर किसानों के घरों में घुस जाते हैं, उनका घर-द्वार मटियामेट कर देते हैं, पेड़ काट डालते हैं, बगीचा उजाड़ देते हैं। जो बाधा देने की कोशिश करते हैं उन्हें मार डालते हैं, किसी किसी का हरण कर ले जाते हैं और अपनी जेल में बन्द कर रखते हैं। सारे देश में भीषण अराजकता फैली हुई है, जिसकी तुलना किसी सभ्य देश से नहीं की जा सकती।"[2]

तब न्याय और अदालतों की क्या हालत थी इसका एक यथार्थ चित्र भूदेव मुखोपाध्याय ने इन शब्दों में दिया है—

"कलकत्ते के सुप्रीम कोर्ट और सदर दीवानी तथा उसकी अधीनस्थ अदालतों में एक प्रकार का पारस्परिक विद्वेष था। देहातों में अगर कोई अदालत किसी निलहे या व्यापारी (अँगरेज़) के मामले में हस्तक्षेप करने जाती तो उसी दम इस अदालत के विचारपति के खिलाफ़ सुप्रीम कोर्ट में मामला दायर होता और उसके खर्च से विचारपति परेशान होता। इसीलिए सरकार ने उस समय नियम बनाया कि सुप्रीम कोर्ट का खर्च सरकार से दिया जायगा। सरकार ने ऐसा नियम भी बनाया था कि सुप्रीम कोर्ट के सामने जो मुक़दमा आएगा उसे कम्पनी की कोई भी दूसरी अदालत अपने हाथों में नहीं लेगी। लेकिन सुप्रीम कोर्ट के विचारपतियों ने ऐसा कोई नियम नहीं बनाया था। जो मुक़दमा कम्पनी की किसी अदालत में पेश है उसका फ़ैसला भी वे अपने हाथों में ले लेते। इन कारण कम्पनी की

---

१. Indigo Commission's Report, Evidence No. 1918.

२. Hansard, Vol. 162, Col. 802.

अदालतों की बुरी तरह अवमानना होती थी और वे बलहीन हो गई थीं। विशेषकर अँगरेज़ कम्पनी की अदालत के मातहत न थे और वे उनकी तनिक भी पर्वाह नहीं करते थे। एक ही देश में रहकर प्रजा का एक हिस्सा एक अदालत के मातहत हो और एक हिस्सा न हो, यह नितान्त विचित्र बात है। तिस पर बहुतेरे अँगरेज़ देहातों में रह कर खेती और व्यापार करते हैं, इस देश के लोगों के साथ तरह-तरह के काम करते हैं; लेकिन देश की अदालत को नहीं मानते, ऐसा करने से यत्परोनास्ति विशृंखला दिखाई पड़ी।"[1]

१—बाँगलार इतिहास, द्वितीय भाग, पृ० ६१–६२।

देशी नील का पौदा

परिशिष्ट–५

नील की खेती और व्यापार

रँगाई के काम में आने वाली चीज़ों में नील का महत्वपूर्ण स्थान है। हिन्दुस्तान में इसकी खेती और व्यवहार प्राचीन काल से होता आया है। प्राचीन काल में एकमात्र इसी देश में नील पाया जाता था, यह सही नहीं मालूम होता। लेकिन यह सच है कि यहाँ से प्राचीन काल में नील विदेशों में जाता था। रोमन इतिहासकार प्लिनी ने इसका उल्लेख 'इन्डिकम' (Indicum) के नाम से किया है। प्लिनी ने लिखा है कि इसकी रफ़्तनी सिन्धु नदी के किनारे पर बसे बरबरिकन् नामक बन्दरगाह से होता था। ईसा की पहली सदी के ग्रीक लेखक दिओस् कोरिदेस्ने इसे 'इन्डिग़ो' कहा है। फ़ारसी में नील 'तुख़्मे नील' और अरबी में 'नवुन नील' कहलाता है।

संस्कृत साहित्य में आकाश के रंग से पालनकर्त्ता विष्णुके वर्ण का निर्णय किया गया था और इसीलिए उनका चित्रण नील रंग से किया जाता रहा है। मनु ने अपनी स्मृति में लिखा है कि ब्राह्मण को नील का व्यापार नहीं करना चाहिए। संस्कृत में नील का एक नाम 'विष-शोधनी' भी आता है। नील का तेल आज तक पशुओं और मनुष्यों के काम में आता है।

वनस्पति शास्त्र में लेगूमिनोसी स्पेसिस (Leguminosae Specis) के पौधे की तीन सौ क़िस्में मिलती हैं। यह संसार के ग्रीष्म प्रधान और नातिशीतोष्ण अंचलों में ही उपजता है। हिन्दुस्तान में इसकी चालीस क़िस्में होती हैं। वैज्ञानिक पच्छिमी हिन्दुस्तान को ही इसका केन्द्र बताते हैं। मगर बंगाल और पूरबी हिन्दुस्तान में इसकी पचीस क़िस्में मिलती हैं। वहाँ इसकी क़िस्नें कम होने पर भी खेती अधिक होती रही है।

नील के पौधे की जिस क़िस्म से सबसे अच्छा रंग बनता है उसका

वैज्ञानिक नाम 'इन्डिगो टिंकटोरिया' है और यह सिर्फ़ इसी देश में मिलता था। इसका पौधा चार से छः फ़ीट लम्बा सन के पौधे जैसा ही होता था।

फूल फूलने पर नील का पेड़ काट लिया जाता। उसे फुनगी, पत्ते समेत बड़े-बड़े चहबच्चों में कई घंटे भिगा रखा जाता था। पानी का रंग पीला होने पर उसे अलग बर्त्तन में खूब खौलाया और घँघोटा जाता था। कुछ देर के बाद पानी नीला हो जाता और नीले दाने जमने लगते। इसी से नील बनाया जाता था।

मध्य युग में भी हिन्दुस्तान नील के लिए मशहूर था। वेनिस के परिव्राजक मार्कोपोलो (१२९८) ने तेरहवीं सदी में त्रावनकोर राज्य के कोइलम (अरबों का कुमारमाली और अब क्विलोन) बन्दरगाह में बड़े पैमाने पर नील बनते और विदेशों में उसकी रफ़्तनी रोते देखा था। पन्द्रहवीं सदी के रूसी परिव्राजक आफ़ानासी निकितिन ने (१४६८) खम्भात में, वास्को द' गामा (१९४८), निक्कोलो कन्ती, सोलहवीं शती के जान हुइघेन वान लिन्सोटेन, वारथेमा (१५०३), बारबोसा (१५१६), गार्सिया दे ओर्ता (१५६३) ने पच्छिमी हिन्दुस्तान में नील और इसके वनाने की पद्धति का वर्णन किया है।[1] आईन-अकबरी में अबुल फ़ज्ल ने लिखा है कि आगरे के पास बयाना और अहमदाबाद में बढ़िया नील बनता था। उन दिनों यह दस से वारह रुपए मन विकता था।[2] उस समय पूरबी भारत में नील की खेती थी या नहीं इसका उल्लेख नहीं मिलता। बर्नियर ने लिखा है कि बयाना वग़ैरह से नील खरीदने के लिए हालैंड के व्यापारी वहाँ रहते थे।[3]

---

१. George Watt–The Commercial Products of India.
२. Ain–i–Akbari, translated by Jarret, Vol. II, pp. 181, 241.
३. Bernier's Travels, (Bangbasi Edition), p. 275.

अरब नाविक अलमाजिद के दिखाए रास्ते से वास्को द' गामा द्वारा यूरोप और हिन्दुस्तान के बीच समुद्र के रास्ते से सम्बन्ध स्थापित होने के पहिले कितनी ही दूसरी चीज़ों की तरह फ़ारस की खाड़ी के रास्ते नील सिकन्दरिया होता हुआ यूरोप पहुँचता था। दक्खिनी फ्रांस के मर्साई बन्दरगाह के वाणिज्य इतिहास से पता चलता है कि १२२४ ई० में वहाँ जो नील पहुँचा उसे 'बगदाद' का नील कहा गया है। वास्तव में यह नील हिन्दुस्तान का था। अँगरेज़ों के पहिले पुर्तगाल और हालैंड के कितने ही व्यापारी नील का व्यापार करके मालामाल हो गए थे। नील इतना क़ीमती समझा जाता था कि आविष्कृत हो जाने पर स्पेन वालों ने मेक्सिको में और पुर्त्तगालियों ने ब्राज़ील में नील की खेती शुरू की थी।

यूरोप में नील का प्रतिद्वन्द्वी वोड (Woad) नामक रंग था। मगर उसका रंग हिन्दुस्तान के नील की तरह गहरा और सुन्दर नहीं होता था। मध्य युग में जर्मनी, फ्रांस, इटली, इंगलैंड आदि में वोड की खेती होती थी। शुरू में यूरोप के रँगरेज नील में वोड मिलाकर इस्तेमाल करते थे। सोलहवीं सदी से यूरोप के भिन्न-भिन्न देशों में कपड़े का उद्योग बढ़ने लगा और इसके साथ ही नील की माँग भी।

उन दिनों हालैंड ही यूरोप में कपड़े के उद्योग का प्रधान केन्द्र था और वहाँ के रंगरेज़ ही सबसे मशहूर थे। इसीलिए सत्रहवीं सदी तक इंगलैंड तथा यूरोप के दूसरे देशों से कपड़ा रँगने के लिए हालैंड भेजा जाता था। इंगलैंड के कितने ही लोग यह व्यापार करके थोड़े ही दिनों में मालदार हो गए थे।

सोलहवीं सदी के अन्त तक हिन्दुस्तान और एशिया के नील तथा दूसरी चीज़ों के कारोबार पर पुर्त्तगालियों का ही एकाधिपत्य था। क़रीब सौ वर्षों तक पुर्त्तगाल की राजधानी लिसबन यूरोप में एशियाई पण्य द्रव्यों का मुख्य वाणिज्य केन्द्र थी, इस मामले में वह प्राचीन और विख्यात केन्द्र वेनिस से भी आगे बढ़ गई थी।

अगली शताब्दी में एशिया के व्यापार में हिस्सा बँटाने के लिए इंगलैंड, हालैंड, फ्रांस और पुर्तगालमें स्वार्थ-संघर्ष उपस्थित हुआ।

हालैंड ने १६३१ में अपनी ईस्ट इन्डिया कम्पनी बनाई, फ्रांस भी अधिक दिनों तक पीछे नहीं रहा।

हालैंड ने बड़े परिमाण में हिन्दुस्तान से नील की रफ़्तनी शुरू की। इसके फलस्वरूप यूरोप के कितने ही देशों से उसका संघर्ष उपस्थित हुआ क्योंकि उन देशों में वोड के किसानों, रंगरेज़ों और व्यापारियों को बहुत नुकसान होने लगा। फ्रांस के कितने ही सामन्तों को भी इससे क्षति हुई। हिन्दुस्तान का नील इतना प्रबल था।

१५९८ में फ्रांस के राजा ने अपने देश में नील का इस्तेमाल ग़ैर-क़ानूनी कर दिया। १६०९ में इंगलैंड के राजा चतुर्थ हेनरी ने और आगे बढ़कर नील का इस्तेमाल करने वालों के लिए फाँसी की सज़ा जारी की। जर्मनी में भी इसी तरह कठोर दंड की व्यवस्था की गई। जर्मनी में वोड बनाने वालों का समाज में विशेष सम्मान का स्थान था—वे 'वाइड हेरेन' (वोड के ज़मींदार) की उपाधि से विभूषत होते थे। १६०७ में जर्मन सम्राट रुडलफ़ ने नील का व्यवहार ग़ैर-क़ानूनी कर दिया।

वोड और नील के व्यवहार को लेकर इंगलैंड में काफ़ी दिनों तक संघर्ष चलता रहा। इंगलैंड के जुलाहे रंगसाज़ी के लिए वोड का इस्तेमाल ही जानते थे। इसीलिए बहुतेरे अँगरेज़ वस्त्र-व्यवसायी हालैंड में कपड़े रँगाते थे और उनका कपड़ा सुन्दर रँगा होने के कारण जनप्रिय होता और अधिक दाम में बिकता। एक प्रतिष्ठित अँगरेज़ हालैंड से नील का व्यवहार सीख आया और १६०८ में उसने राजा से नील से कपड़ा रँगने का एकाधिकार ले लिया। इसके साथ विलायती कपड़े का हालैंड में रँगाना निषिद्ध कर दिया गया। इससे इंगलैंड के जुलाहों और कपड़े के व्यापारियों को बहुत नुकसान होने लगा और नील पर रोक के विरुद्ध ज़ोरदार आन्दोलन शुरू हुआ। आन्दोलन ऐसे ऊँचे स्तर पर पहुँचा कि एक जज को राय देनी पड़ी की नील विषैला होता है, अतएव जनता के स्वार्थ के लिए ही इसका निषिद्ध किया जाना ज़रूरी है! इस राय के बाद नील विरोधी क़ानून बनते देर नहीं लगी। क़ानून अगले पचास सालों तक बना रहा।

इतनी संगठित बाधाओं के बावजूद यूरोप में वस्त्र उद्योग के विकास के साथ ही नील का इस्तेमाल भी बढ़ता और वोड का घटता गया। नील के इस्तेमाल के कारण हालैंड और बेलजियम में कपड़ा उद्योग की बड़ी उन्नति हुई।

इंगलैंड के सूती वस्त्र के उद्योग को इतना ज़बर्दस्त धक्का पहुँचा कि १६६० में द्वितीय चार्ल्स ने उसे बचाने के लिए बेलजियम से कुछ रँगरेज़ बुलाकर अपने देश के जुलाहों को नील का इस्तेमाल सिखाने की व्यवस्था की। इसी समय से ईस्ट इन्डिया कम्पनी ने हिन्दुस्तान से अधिकाधिक नील इंगलैंड भेजना शुरू किया। १६६४ से १६९४ के बीच १२,४२,००० पौंड नील विलायत पहुँचा था। यह नील प्रधानतः आगरा, लाहौर और अहमदाबाद से ही गया था।

अठारहवीं शताब्दी के मध्य भाग तक यूरोप के क़रीब सभी देशों में हिन्दुस्तान के नील पर लगाई रोक ख़त्म हो गई, यद्यपि जर्मनी के नुरेम-बुर्ग शहर के रँगरेज़ बहिष्कार की अपनी प्रतिज्ञा पर उस शताब्दी के अन्त तक अटल रहे। इस बीच यूरोप में नील का विकल्प निकालने की जितनी कोशिशें हुई थीं सभी विफल हुईं। नील का व्यापार खूब चमका, इसकी बढ़ती माँग को देख अँगरेज़, फ्रांसीसी, स्पेनी और पुर्त्तगाली लोगों ने अपने उत्तर और दक्खिन अमरीका के उपनिवेशों में इसकी खेती शुरू कर दी। कुछ ही दिनों में वे हिन्दुस्तानी नील के ज़बर्दस्त प्रतिद्वन्दी बन गए।

बंगाल में लुइ बोन्नो (Louis Bounaud) नामक एक फ्रांसीसी ने वर्त्तमान प्रणाली से १७७७ में नील बनाना शुरू किया। वेस्ट इन्डीज़ से आकर उसने चन्दननगर के पास तालडांगा और गोन्दलपाड़ा में दो नील कोठियाँ क़ायम कीं। आगे उसने और नगरों में भी कोठियाँ बनाईं और बहुत धन कमाया। कालना (ज़िला बर्दवान) की कोठी से उसने एक साल के अन्दर चौदह सौ मन नील

चालान किया था।[1] अँगरेज़ों में कैरेल ब्लूम ने ही १७७८ में पहिले पहल बंगाल में नील कोठी खोली थी।

१७७९ में कम्पनी ने आमतौर से सभी यूरोपियनों को बंगाल और बिहार में नील की खेती करने और कोठी बनाने का अधिकार दे दिया। बैपटिस्ट मिशनरी विलियम केरी ने अठारहवीं सदी के अंतिम दशाब्द में हिन्दुस्तान पहुँच कर मदनावाटी (ज़िला-मालदाह, बंगाल) कोठी में मैनेजरी से ज़िन्दगी शुरू की थी। इस समय विलायत स्थित कोर्ट आव डायरेक्टर्स को लिखी गई चिट्ठियों से पता चलता है कि बंगाल में नील की खेती वहुत सुभीते की नहीं हो रही थी। ११ अप्रैल १७८५ की चिट्ठी में डायरेक्टरों ने गवर्नर जेनरल से शिकायत की कि बंगाल का नील महँगा होता है, इसीलिए वह फ्रांसीसियों के साँ डोमिंगो, अमरीका के कैरोलिना अथवा स्पेनियों के नील से मुक़ाबला नहीं कर पाता। आगे उन्होंने फिर लिखा कि "जब हम बंगाल की सस्ती मजूरी और अनुकूल आवहवा की बात सोचते हैं तो इस वात में कोई सन्देह नहीं रह जाता कि रफ़्तनी के लिए वहाँ का नील बहुत मूल्यवान पण्य सिद्ध हो सकता है। हम इस ओर आप का ध्यान आकर्षित करते हैं।" १७८७ में फिर लिखा कि नील, कपास और चीनी के लिए राबर्ट हेवेन पाँच साल के लिए बंगाल भेजे जा रहे हैं, "जो पिछले तेरह वर्षों से वेस्ट इन्डीज़ में इन मूल्यवान् चीजों की पैदावार में विशेष योग्यता का परिचय दे चुके हैं।"[2]

१–Biographical Sketches of the first Indigo Planters in India, by H. J. Rainey in the 'Asian,' 18 March, 1799.

२–'Reports and Documents connected with the Proceedings of the East India Company in regard to the Culture and Manufacture of Cotton, Raw Silk and Indigo in India.' pp.4–6, London, 1836.

सरकार ने उनकी एक तरह से मदद की।

१७८८ में कम्पनी के डायरेक्टरों ने लिखा कि अर्थनीतिक पहलू के अलावा नील का महत्वपूर्ण राजनीतिक पहलू भी है। नील के लिए हर साल विदेशियों को बहुत धन देना पड़ता है। बंगाल में 'नेटिवों' की मेहनत से अगर नील जैसी क़ीमती और इंगलैंड के वस्त्र उद्योग के लिए बेहद ज़रूरी रफ़्तनी के लायक चीज़ बनने लगती है तो कम्पनी के राज की क़ीमत बहुत बढ़ जायगी। इतना खर्च करने के बाद नील की खेती की अवहेलना करना कदापि उचित नहीं होगा। डायरेक्टरों ने यह भी लिखा कि कम्पनी के कर्मचारी अगर बंगाल से रुपए के बदले नील भेजे तो वह रुपए भेजने के बराबर समझा जायगा।[1]

इसी समय वेस्ट इन्डीज़ से काफ़ी संख्या में निलहों को लाकर, विशेष सुभीते और आर्थिक सहायता देकर बंगाल के कई ज़िलों में बसा दिया गया। कुछ ही सालों में बंगाल में नील की खेती फैली और सदी के अंत तक यह उद्योग सुप्रतिष्ठित हो गया।

१७९० में इंगलैंड में १८,४०,८१५ पौंड नील विदेशों से आया था, इसमें अमरीका से ६,२६,०४२, स्पेन से ३,५५,८५९, वेस्ट इन्डीज़ से १,२६,२२० और सारे एशिया से ५,३१,६१९ पौंड आया था। लेकिन १७९५ में देखा गया कि सिर्फ़ बंगाल से ही २९,५५,८६२ पौंड नील विलायत पहुँचा है। अगले साल ४५,४८,६७० पौंड नील विलायत पहुँचा जिसमें ३८,९७,१२० पौंड हिन्दुस्तान से गया था। इसमें २० लाख पौंड इंगलैंड के वस्त्र उद्योग के काम में आया था और बाक़ी विलायत से दूसरे देशों को भेजा गया था।[2] कुछ वर्षों में ही यूरोप में अँगरेज़ों ने नील के व्यापार पर इजारेदारी क़ायम कर ली। बंगाल में नील की खेती की इस बढ़ती और यूरोप में इस पर अँगरेज़ों की इजारेदारी का सबसे बड़ा कारण यह

---

१. वही, पृष्ठ ९–१०.

२. वही, पृष्ठ २७, ४२, ५०.

था कि इसी समय फ्रांसीसियों, स्पेनियों और पुर्त्तगालियों ने नील के बदले कहवा की खेती शुरू कर दी, क्योंकि यह और अधिक मुनाफ़े की थी।

पूरबी भारत और ख़ास कर बंगाल में नील की खेती में बढ़ती का एक कारण और भी था। अठारहवीं सदी के मध्य भाग तक इंगलैंड में सूती कपड़े का उद्योग उतना बढ़ा चढ़ा नहीं था। ऊन का उद्योग ही अधिक बढ़ा चढ़ा हुआ था। इसी शताब्दी के उत्तरार्द्ध में ब्रिटेन में औद्योगिक क्रान्ति शुरू हुई। और वह संसार में सबसे अधिक औद्योगिक देश बन गया। हिन्दुस्तान की लूट से इसे बहुत बढ़ावा मिला। अँगरेज़ों ने इस देश के वस्त्र तथा दूसरे उद्योगों का सत्यानाश कर दिया। हिन्दुस्तान विलायत को कच्चा माल भेजने और वहाँ के बने मालों का सबसे बड़ा बाज़ार बन गया। इंगलैंड में वस्त्र उद्योग के बढ़ने के साथ ही नील की खपत भी बढ़ गई।

नील के उद्योग और व्यापार के विस्तार के साथ हिन्दुस्तान में ब्रिटिश साम्राज्य के विस्तार का गहरा सम्बन्ध था। देश के पूरबी हिस्से में साम्राज्य क़ायम करने के पहिले अँगरेज़ अवध, आगरा, पंजाब वग़ैरह से नील ले जाते थे। ये इलाक़े तब भी स्वतंत्र थे। जिन घिनौने तरीक़ों से अँगरेज़ों ने इनके अन्दरूनी मामलों में हस्तक्षेप किया था, नील के व्यापार का उनमें गुरुत्वपूर्ण स्थान था। उत्तरी भारत को अपने राज में मिलाने में नील से अँगरेज़ों को बड़ी सहायता मिली थी। नील के मुनाफ़े से कम्पनी ने एक बड़ी सेना खड़ी की थी जिसकी सहायता से पंजाब तक अपना राज्य बढ़ाया था।[1]

---

१. २८ अगस्त १८०० ई० को कम्पनी के डाइरेक्टरों ने गवर्नर जेनरल को लिखा—"In whatever degree, also, the Indigo trade of Oude is carried on by the Capital of Bengal,. . . . so far the Government of Bengal acquires an additional right of interference in

१७७७ और १८०३ के बीच कम्पनी की सरकार की तथा दूसरी सहायता से बंगाल और बिहार में नील की खेती बड़े पैमाने पर होने लगी। कहने की ज़रूरत नहीं कि धन विलायत से नहीं, इसी देश की लूट से ही आया था। १८०३ तक नील की खेती के लिए जितने रुपए की ज़रूरत पड़ती थी उसे कम्पनी नाम मात्र सूद पर पेशगी देती थी। सारा तैयार नील कम्पनी खरीद कर विलायत भेज देती थी। इसी तरह नमक, सुपारी, अफ़ीम वग़ैरह पर भी कम्पनी की इजारेदारी थी। १७८६ से १८०३ तक कम्पनी ने निलहों को क़रीब एक करोड़ रुपया पेशगी दी थी।[1] नील के व्यापार से इतना मुनाफ़ा होने लगा कि कम्पनी के डायरेक्टरों ने १८०६ में गवर्नर जेनरल को लिखा--"हम पूरी आशा रखते हैं कि पण्य (नील) हमारे लिए बेहद मुनाफ़े का उत्स बनेगा।"[2] नीचे लिखे आँकड़े से मुनाफ़े का कुछ अन्दाज़ा लगाया जा सकता है :

----

this trade. If these observations are just with respect to Oude, they will apply with still greater force to countries beyond it, not at all connected with us; whence, however, we are told, not only that much of the indigo exported by Oude comes but that the profits on indigo raised in those countries have furnished the funds for paying formidable military levies made in them." वही, पृष्ठ ५६.

१. वही, पृष्ठ ६०.

२. वही, पृष्ठ ६४.

कलकत्ते से नील की रफ़्तनी

	१८०५–६		१८०६–७		१८०७–८	
	पेटियाँ	मूल्य रु० में	पेटियाँ	मूल्य रु० में	पेटियाँ	मूल्य रु० में
लन्दन	१३,४८८	४५,२३,१२४	१७,५४२	५७,३१,३९०	२१,०२७	८१,८९,६४८
यूरोप	४३७	१,५२,२२७	५८७	२,१०,७०२	१,२४९	४,८३,२४०
अमरीका	४७७	२,१३,४९०	१,५४८	४,९७,४५८	३,२५७	११,१५,०६४
एशिया और अमरीका	९८५	३,०३,५३३	२,०७२	६,०७,७४०	१,७३१	५,९०,२१२
कुल जोड़—	१५,३८७	५१,९२,३७४	२०,७४९	७२,३८,२८८	२७,३०९	१,०३,७८,१६८

एक पेटी में साढ़े तीन मन नील रहता था। ऊपर के हिसाब से पता चलता है कि हिन्दुस्तान में सवा रुपए पौंड खरीद कर विलायत में १८१० में दस से साढ़े तेरह शिलिंग अर्थात् तब के रुपए के हिसाब से पाँच से सात रुपए पौंड बेचा जाता था।[1]

एक अँगरेज़ लेखक ने दिखाया है कि—"१८०० में जहाँ बंगाल में ३९,००० मन नील तैयार हुआ था, वहाँ और जगहों को मिला कर सिर्फ़ १४,००० मन। १८१५-१६ में बंगाल में १,२८,००० मन नील बना और उसी समय से अकेला बंगाल ही सारे संसार की नील की माँग पूरी करता आ रहा है।"[2] बंगाल में नील की खेती और व्यापार इतने लाभ का सिद्ध हुआ कि कम्पनी के कितने ही अफ़सर नौकरी छोड़कर नील की कोठियाँ खोलने लगे।

कुछ ही सालों में नील कोठी वाले इतने धनी और प्रबल हो गए कि उनकी शक्ति को कुछ सीमित करने के लिए १८११ में कम्पनी ने देशी लोगों को भी नीलकोठी बनाने का अधिकार देना और उन्हें उत्साहित करने के लिए पेशगी रुपया देना तय किया। कम्पनी की यह सदिच्छा काग़ज़ पर ही बनी रही। आगे चलकर बंगाल के कितने ही ज़मींदारों ने बग़ैर सरकारी मदद के ही नील कोठियाँ खोलीं थीं।

नील के व्यापार पर अँगरेज़ों का सौ वर्षों तक एकाधिपत्य रहा। इससे उन्होंने अरबों रुपए का मुनाफ़ा कमाया। किसानों को इसके बदले लूट, ज़ुल्म, बेइज्ज़ती के सिवा कुछ भी नहीं मिला।

(क) नील की खेती के हामी

१८३३ में इस्ट इन्डिया कम्पनी को मिली नई सनद में अँगरेजों को इस देश में ज़मीन का मालिक बनने और स्वतंत्र रूप से व्यापार करने का हक़ मिला। इसके लिए उन्होंने कई साल तक घनघोर

---

१. वही, पृष्ठ ६९.
२. Delta: Indigo and its enemies, p. 62.

आन्दोलन किया था। यह आन्दोलन अँगरेजी में 'कालोनाइज़ेशन' कहलाया। इस देश वालों ने भी इसके पक्ष-विपक्ष में हिस्सा लिया था।

आमतौर से बंगाल की ग्रामीण जनता और ज़मीदारों का एक हिस्सा 'कालोनाइज़ेशन' की घोर विरोधी थी। उन्होंने इसके खिलाफ़ आन्दोलन भी किया था। राममोहन राय, द्वारकानाथ ठाकुर, प्रसन्न कुमार ठाकुर वगैरह ज़मींदार और सौदागर अँगरेज़ों के समर्थक थे। इन लोगों ने 'कालोनाइज़ेशन' के भिन्न भिन्न फायदों के बारे में धर्मयुद्ध का जोश लेकर हिस्सा लिया।[1] विरोधियों ने इन्हें मुँहतोड़ जवाब दिया था।[2]

१८३१ में विलायत पहुँच कर राममोहन राय ने पार्लियामेन्ट की कामन्स सभा की सिलेक्ट कमेटी को जो मेमोरन्डम दिया था उसमें हिन्दुस्तान में ज़मीन-जायदाद के साथ अँगरेज़ों के बसने के नौ फ़ायदे और पाँच नुकसान गिनाए थे। फ़ायदे हैं (१) यूरोपीय ज्ञान-विज्ञान, पूँजी देश की कृषि में लगेगी, जैसे नील की खेती में लगी है; इससे देश-वासियों का उपकार होगा। (२) यूरोपवालों की संगत में भारतीयों के मन से कुसंस्कार दूर होगा, (३) चूँकि यूरोपीय वाशिन्दे शासकों के समकक्ष हैं और जनता के अधिकारों के बारे में सजग हैं, वे सरकार या पार्लियामेन्ट से अच्छे जनहित कर क़ानून पास करा सकेंगे, विचार विभाग की भी काफ़ी उन्नति होगी ; (४) यूरोपीयों की उपस्थिति और सहायता से जमींदार, महाजन और अधिकारियों के जुल्म से प्रजा को छुटकारा मिलेगा, (५) यूरोपीय वाशिन्दे अपनी वदान्यता, राष्ट्रीय चेतना और इस देश वालों के प्रति कर्तव्य बोध से स्कूल-कालिज कायम होंगे और उससे ज्ञान-विज्ञान फैलेगा, (६) इस देश में बसे यूरोपीयों से यूरोप वालों के लेन-देन से अधिकारी इस देश की हालत और अच्छी तरह जान सकेंगे और इससे भारत के बारे में क़ानून बनाने में वे

---

१. संवार कौमुदी, २६ फरवरी, १८. २८.
२. Bengal Hurkuru, 17 March 1829.

अधिक उपयुक्त होंगे; (७) पूरब से हो या पच्छिम से हो, देश पर हमला होने से देश के लोगों के अलावा अधिक यूरोपीय इस देश की सहायता कर सकेंगे; (८) उपर्युक्त कारणों से इंगलैंड और हिन्दुस्तान का सम्बन्ध मज़बूत और इस्तमरारी होगा—अगर हिन्दुस्तान पार्लियामेन्टरी और दूसरे उदार नीतिक तरीके से शासित होता है; (९) और अगर किसी कारण से दोनों देश एक दूसरे से अलग हो भी जाते हैं तो भी ये सम्मानीय निवासी हिन्दुस्तान को यूरोप के बराबर बना सकेंगे और कालक्रम में यूरोप की सहायता से एशिया के दूसरे देशों को भी शिक्षित और सुसभ्य बना सकेंगे।

राममोहन राय इस मामले में दूरदर्शी नहीं साबित होते। उनके गिनाए फ़ायदे बिलकुल काल्पनिक ही साबित हुए।

'कालोनाइज़ेशन' से नीचे लिख नुकसान बताए गए थे—(१) यूरोपीय दूसरी जाति के और शासक वर्ग के सगोत्रीय हैं। हिन्दुस्तान पर आधिपत्य क़ायम करने के लिए वे व्याकुल हो उठेंगे। देश के उन लोगों को जिनका शासक वर्ग समादर नहीं करता है, उन्हें दबा कर ये स्वतंत्र अधिकार और सुभीता उठाने की कोशिश करेंगे। वे भिन्न धर्मावलम्बी हैं, अतएव भारतीय धर्म पर चोट करने से वे बाज नहीं आएँगे। उनके हाथों भिन्न जाति, वर्ण, धर्म के भारतीयों की लांछना और अपमान की सीमा नहीं रहेगी। (२) यूरोपीयों का स्वदेशीय शासक वर्ग से घनिष्ट सम्पर्क रहेगा और वे उसका इस्तेमाल हिन्दुस्तान वालों के खिलाफ़ करेंगे। (३) सभी वर्ग और सभी प्रकार के यूरोपीयों को बेरोक आने देने से, परस्पर के स्वार्थ में निरन्तर संघर्ष होगा। इसके फलस्वरूप देशी और विदेशी जाति में संघर्ष शुरू हो सकता है जो एक का दूसरे द्वारा दबाए न जाने तक नहीं रुकेगा। (४) यूरोपीय और भारतीय एक होकर अमरीका की तरह विद्रोह कर सकते हैं। लेकिन सरकार अच्छी हुई तो ऐसा नहीं भी हो सकता है, जैसे कनाडा में हुआ है। (५) यहाँ की प्रतिकूल आबोहवा के कारण यूरोपीय अपनी धन दौलत ले देश छोड़ कर चले भी जा सकते हैं।

लेकिन इसके बावजूद राममोहन ने यूरोप वालों के 'कालोनाइज़ेशन' के पक्ष में भी अपनी राय दी। हाँ, उन्होंने यह भी कहा था कि शुरू में 'कालोनाइज़ेशन' अस्थायी होना चाहिए और केवल उच्च शिक्षित, चरित्रवान, भद्र और धनीमानी यूरोपीयों से ही इसका प्रारम्भ होना चाहिए। दोनों जातियों के लिए एक ही कानून हो और दोनों के समान संख्यक लोगों को लेकर जुरी बैठने से वैषम्य कुछ हद तक दूर होगा।[1]

राममोहन ने नील की खेती के तथा कथित अच्छे पहलू को ही देखा था। ३० मार्च १८३२ को पार्लियामेन्टरी जाँच के वक्त डेविड हिल से पूछा गया कि नील की खेती से बंगाल में कोई उन्नति हुई है या नहीं तो उन्होंने उत्तर दिया—"गाँवों के चेहरे में काफ़ी उन्नति हुई है मगर जनता की हालत में कोई उन्नति नहीं हुई है।" एक और गवाह ने कहा कि नील की खेती से किसानों की अपार क्षति होती है।[2]

बेरोक व्यापार (Free Trade), कालोनाइज़ेशन और नील की खेती का समर्थन कर के राममोहन-द्वारकानाथ ने जो भारी ग़लती की थी इसका सबूत अगले तीस साल का नील का इतिहास है। ब्रिटिश बुर्जआ वर्ग की भूमिका विलायत और हिन्दुस्तान जैसे उपनिवेश में एक नहीं हो सकती है, इसे ये लोग नहीं समझ पाए थे। राममोहन, द्वारकानाथ की भूमिका हर मामले में प्रगतिशील नहीं थी, इसे हमें नज़रन्दाज नहीं करना चाहिए।

(ख) नील बोने वालों का सत्यानाश

नील अलादीन का चिराग़ था। नील के गोरे व्यापारी रातों रात धनी हो जाते थे। नीलहे राजसी ठाट बाट से रहते थे। फारलङ्ग और लारमूर कीं बेंगल इन्डिगो कम्पनी के पास ५९५ गाँवों की ज़मींदारी थी ?[3]

---

१. Works of Rammohan Roy. Panini office, Allahabad edition, pp. 316-17.
२. Indigo Commission's Report, Evidence. P. 71.
३. Indigo Commission's Report, P. 21-22 and 197.

नील की खेती दो प्रकार की होती थी—खुद-काश्त और रैयती-काश्त यानी दादनी-काश्त। नीलहे बाहर से मज़दूर मँगाकर काम कराते थे। मज़दूर तीन रुपए और मज़दूरिनें तथा कम उम्र वाले बालक दो रुपए माहवार पाते थे। खुद-काश्त की सारी ज़िम्मेदारी निलहे की होती थी। इसीलिए वे इसे उतना पसंद नहीं करते थे। इसमें पूँजी भी काफ़ी लगती थी। इन्डिगो कमीशन की रिपोर्ट से पता चलता है कि दस हजार बीघे नील की खेती में ढ़ाई लाख लगते थे। लेकिन रैयती यानी दादनी-काश्त सिर्फ बीस हजार यानी दो-रुपए फी बीघा में कराई जा सकती थी।

फी बीघा दस से बारह बंडल नील होता था और हजार बंडल में ५ मन नील का रंग बनता था। पाँच बंडल नील के पेड़ से एक सेर नील का रंग बनता था जिसका दाम पाँच रुपए होता था। लेकिन दस बंडल नील के लिए किसान को ढाई रुपए से ज्यादा नहीं मिलता था।[1] निलहे एक मन नील में १३० रुपया मुनाफ़ा करते थे।

एक देशी पत्रिका ने हिसाब करके दिखाया था कि जिस नील के लिए निलहे किसान को दो सौ रुपए देते थे उससे वे १९५० रुपए का नील रंग पाते थे। अगर रंग बनाने के दो सौ रुपए मान लिए जाएँ तो भी १७५० रुपए का मुनाफा होता था।[2] किसानों के लिए नील सत्यानाशी और निलहों के लिए कामधेनु था। लिन्डे ने सच ही लिखा था कि "नील की खेती से किसान कुछ भी मुनाफा नहीं कर पाता है, नील से वह किसी भी दृष्टि से लाभवान नहीं होता है—न स्वास्थ्य की दृष्टि से, न रुपए पैसे से, न सुख-सुभीते की दृष्टि से। नील के बदले और किसी चीज़ का आविष्कार होता तो उनकी जान बचती।"[3]

---

१. वही पृष्ठ १५.
२. Indian Field, 24 July 1858,
३. F. E. C. Linde–A short sketch of the Cultivation, Manufacture and trade of Indigo. Calcutta, 1882, P. 6.

अध्यापक हारानचन्द्र चाकलादार ने अपने मशहूर निबन्ध में नील के किसानों के सत्यानाश का वर्णन करते हुए लिखा था—"रैयतों के लिए नील की खेती सोलहो आने क्षतिकर थी। इसकी खेती का मतलब था उसके परिवार के लिए फाकाकशी। निलहों का उद्देश्य स्पष्ट था, वे कम से कम या नहीं के बराबर खर्च में ज्यादा से ज्यादा मुनाफा करना चाहते थे। नील के किसान को वह नाममात्र मूल्य भी न देकर नील के पेड़ ले लेता था। इस नाम मात्र मूल्य के पाने पर भी यह नील के किसानों के लिए बहुत क्षतिकर होता था। तिस पर इस नाममात्र मूल्य से बहुत कुछ काट लिया जाता था—अमले इतना अधिक हिस्सा बाँट लेते और वज़न में इतनी बेईमानी की जाती कि यह नाम मात्र का मूल्य भी शून्य बन जाता था। रैयत और कुछ न हो, अगर लगान भी निकाल पाता तो अपने को भाग्यवान समझता था। . . .और यह भी याद रखना होगा कि जब और सब चीजों का दाम दुगुना था, या प्राय दुगुना हो गया था, तब भी नील का जो दाम या नाम मात्र दाम दिया जाता था, उसमें एक पैसा भी नहीं बढ़ाया गया।"[1]

बंगाल में नील के सत्यानाशी प्रभाव के असली रूप का पता तब चलता है जब हम देखते हैं कि यहाँ तीस लाख चालीस हजार बीघे सर्वोत्तम ज़मीन में इसकी खेती होती थी। इतनी ज़मीन में अगर तम्बाकू, धान वगैरह की खेती किसान कर पाते तो इस शस्य श्यामला सूबे में अकालों का ताँता न लगता, लाखों किसान तबाही से बचते, लाखों लोग अकाल ही काल के गाल में न जाते।

किसानों को लूटने के लिए निलहे और भी कितने ही तरीके अपनाते थे। नील काटने के बाद किसान को बैलगाड़ी या नाव से उसे नील की कोठी पर ले जाना पड़ता था। ले जाते वक्त धूप के कारण उसका वज़न भी घट जाता था। अपनी गाड़ी या नाव न हुई तो किसान को इसके लिए

---

१. 'Fifty years Ago' (in Dawn Magazine, July 1905)

भी खर्च करना पड़ता था। लेकिन निलहे गोरे इसके लिए उसे एक पैसा भी नहीं देते थे।

बंगाल में आम और सरकारी तौर से एक बीघा चौदह हज़ार वर्ग फुट का माना जाता था। लेकिन निलहे इक्कीस हजार पाँच सौ ग्यारह वर्ग फुट का एक बीघा मानते थे। "नील बोने वाले किसान भली भाँति जानते थे कि नील की खेती के लिए निलहा जिस तरह से ज़मीन नाप देगा वही उसे मान लेना पड़ेगा।"[1]

(ग) निहलों की नादिरशाही

ऊपर हमने किसानों पर निलहों के अत्याचार की कितनी ही बातें दी हैं। किसानों के अलावा निलहे जमींदारों पर भी अत्याचार करते थे। इन जातियों ने न जाने कितने ज़मींदारों का भी सत्यानाश किया।

किसानों को दादी देने, नहीं, उन पर जबर्दस्ती लादने, के बारे में लिखा विवरण पहिले और बाद वाले ज़माने के लिए बहुत कुछ सच है। "एक निलहा के एक गाँव का इज़ारा पाते ही, उसका प्रधान काम होता है गाँव में कितने हल हैं इसका पता लगाना, इसके बाद इस दूसरा काम होता है फी हल पीछे दो बीघे नील की खेती करने के लिए सभी रैयतों को वाध्य करना।" हल के बारे में पता लगाने के लिए वह खुद किसानों के पास नहीं जाता। वह "क्षण भर भी समय बर्बाद न कर गाँव के लोहार को कोठी पर पकड़वा मँगाता है। क्योंकि उसे ही मालूम है कि किसके पास कितने हल हैं।" इस तरह सारी बातें मालूम करके रैयतों को बुला भेजा जाता है और फिर एक-एक करके हर रैयत को बीघा पीछे दो रुपए दादनी दी जाती है और हरेक को फी हल दो से छ बीघे नील की खेती करने को कहा जाता है। उनसे एक सफ़ेद काग़ज़ पर लगे टिकट पर दस्तख़त कराया या अँगूठे का निशान बनवाया जाता है। इसके बाद कोठी के लोग खेतों में

---

१. Indigo Commission's Report, Evidence, p. 202.

जाकर चुन-चुन कर ऐसी ज़मीन में निशान लगा देते हैं। जिन्हें किसानों ने किसी अच्छी फसल के लिए तैयार कर रखा था।[1]

निलहों के ज़ुल्मों का अन्त यहीं नहीं होता।

शान्तिपुर (ज़िला नदीया) के जर्मन पादरी बमवाइट ने १७ अप्रैल १८६० में लिखा था—"इकरारनामामे पर दस्तखत के वक्त जो उपस्थित नहीं थे, दादनी के रुपए उनके घर भेज दिए गए थे और किसी तरह का आडम्बर न करके इकरारनामे की वही में उनका नाम दर्ज कर लिया गया था। एक ऐसा ही आदमी है एक ग़रीब पर सम्भ्रान्त इसाई। डेढ़ बीघे नील बोने के लिए उसके पास तीन रुपए भेजे गए थे। क्रमशः यह डेढ़ बीघा ज़मीन तीन बीघों में परिणत हुई पर दादनी भी नहीं मिली। इस पर तीन बीघे कोठी के बीघे थे—पाँच ज़मीदारी बीघे के बराबर। पिछले साल इस आदमी ने सोलह गाड़ी नील कोठी में पहुँचाए थे, वज़न के हिसाब से यह बारह बंडल था जिसके लिए उसे दिए गए तीन रुपए। कोठी के मामलों ने इसमें से उसे कितना घर ले जाने दिया था यह मुझे ठीक याद नहीं। लेकिन उसके खर्च का हिसाब मेरे सामने है, वह हुआ था सत्रह रुपए पाँच आने। मगर आप याद रखें कि उसे सही सलामत छुटकारा मिल गया था। मेरे सामने चार हजार हिसाब और हैं जो किसी भी आदमी को आश्चर्यचकित कर देगा। इस समय इस तरह के बहुतेरे आदमी निश्चिन्दपुर के पास दामुरहुदा की कोठी में कैद कर रखे गए हैं और उन पर तरह-तरह के पाशविक अत्याचार हो रहे हैं ताकि वे कबूल कर लें कि उन्होंने दाद नी ली है और नील की खेती करेंगे।[2]

कोकबर्न (Cockburn) बहुत दिनों तक निलहा रहे और बाद में मुर्शिदाबाद के डिप्टी मैजिस्ट्रेट बन गए थे। उन्होंने कहा था—"जो निलहे जमीदार बने हैं वे प्रजा की रक्षा के लिए बने कानूनों की बात

---

१. Calcutta Review, June 1860.
२. Hindu Patriot, 28 April 1860.

सुन कर हँसते हैं। कोई भी उन क़ानून के खिलाफ़ प्रयोग में नहीं लाया जा सकता क्योंकि जब तक प्रजा का सब कुछ निलहों की मुट्ठी में है तब तक प्रजा कानून का सहारा लेने की हिम्मत ही नहीं कर सकती है।"[1]

निलहे सूद पर रुपया देते थे और देशी महाजनों के मुकाबले दूना सूद लेते थे। देलानूर १८४८ में फरीदपुर के मैजिस्ट्रेट थे। नील कमीशन के सामने अपनी गवाही में उन्होंने कहा था—"नील की ऐसी एक भी पेटी भी विलायत नहीं पहुँचती है जो मानव रक्त से रंजित न हो—इस कथन के लिए मिशनरियों को दोषी ठहराया गया है। उनका कथन मेरा भी कथन है। फरीदपुर में मैजिस्ट्रेट रहते समय मैंने जो अनुभव प्राप्त किया उसके बल पर मैं दावे के साथ कह सकता हूँ कि यह कथन सोलहो आने सच है। मैंने कुछ ऐसे रैयतों को देखा था जिनकी पीठ बल्लम से आर पार छेद दी गई थी। कई ऐसे रैयत मेरे सामने लाए गए थे जिन्हें निलहा फोर्ड ने गोली मारी थी। मैं ऐसे कई रैयतों की बात जानता हूँ जिन्हें भाले से ज़ख्म करके हरण किया गया था।"[2]

ब्रिटिश पार्लियामेन्ट में निलहों के बारे में इस तरह के अत्याचारों की बातें बहुतों ने कही थीं। लेआर्ड ने कहा था—"निलहों ने लाचार किसानों की जमीन दखल की है, वे हथियारबन्द होकर किसानों के घरों में घुसे हैं, उनका घर द्वार बर्बाद किया है, पेड़ काट डाले हैं, बगीचे उजाड़ डाले हैं—जिन्होंने बाधा देने की कोशिश की उनमें से किसी को मार डाला है, किसी को पकड़ कर अपनी निजी जेलों में बन्द कर दिया है। सारे देश में उद्दाम अराजकता फैली हुई हैं, जिसकी तुलना किसी सभ्य देश में नहीं मिलती।"[3]

---

१. Selections from Bengal Government Records No. XXXIII, 'Indigo Cultivation', Pt. I, p. 230.

२. वही, प्रश्न १९१८

३. Hansard vol. 162 Col. 802.

मफस्सलों की फौजदारी अदालतें गोरे निलहों के मुक़दमों का फ़ैसला नहीं कर सकती थीं, कलकत्ते की सुप्रीम अदालत को ही इसका हक़ था। अधिकांश में गोरे विचारक भिन्न भिन्न कारणों से गोरे निलहों का ही पक्ष लेते थे।

इन दिनों के न्याय और अदालतों का वर्णन भूदेव मुखोपाध्याय ने इन शब्दों में दिया है :

"कलकत्ता सुप्रीम कोर्ट और सदर दीवानी व उसके अधीन तमाम अदालतों में परस्पर विद्वेष था। देहाती की कोई अदालत में अगर किसी निलाह या और गोरे सौदागर के मामले में अदालत दखल देने जाती तो वह फौरन अदालत के विचारपति के खिलाफ सुप्रीम कोर्ट में मुकदमा दायर कर देता और विचारपति खर्च के भार से परेशान होता। इसलिए सरकार ने उस समय ऐसा-नियम बनाया कि, सुप्रीम कोर्ट के खर्च का रुपया सरकार से मिलेगा। सरकार ने ऐसा नियम बना रखा है कि सुप्रीम कोर्ट के सामने जो मुकदमा हाज़िर किया जायगा उसे कम्पनी की दूसरी अदालत अपने हाथों में नहीं ले सकेगी। लेकिन सुप्रीम कोर्ट के विचारपतियों ने ऐसा कोई नियम नहीं बनाया था। जो मुकदमा कम्पनी की अदालत में रुजू है वे उन मुक़दमों के फैसले का भार अपने ऊपर लेते थे। इन्हीं कारणों से कम्पनी की अदालतों का स्तर और शक्ति बहुत ही घट गई थी : विशेष कर के अँगरेज कम्पनी की अदालतों के अधीन नहीं थे। और वे इन अदालतों की कोई पर्वाह नहीं करते थे। एक ही देश में रह कर प्रजा का एक हिस्सा एक अदालत के आधीन हो और दूसरा हिस्सा उसके अधीन हो, इस तरह की बात बेमेल है। तिस पर बहुतेरे अँगरेज़ देहातों में खेती और व्यापार करते हैं, मगर इस देश के लोग जिस अदलत के अधीन हैं उस अदालत को नहीं मानते हैं। ऐसा करने से चरम विश्रृंखला पैदा होती है।"[१]

इस विश्रृंखलता को दूर करने के लिए भारत सरकार के क़ानून सचिव

---

१. बाङलार इतिहास, द्वितीय भाग, पृ. ६१-६२।

जान इलियट ड्रिंकवाटर बीटर ने १८४९ में एक नए क़ानून का मसौदा तैयार किया जिसमें देहातों की अदालतों को अँगरेज़ों के मुक़दमे का फ़ैसला करने का अधिकार देने की बात थी। फिर क्या था, गोरों ने इसके ख़िलाफ़ वह तूफ़ान खड़ा किया कि यह क़ानून नहीं बन सका। महात्मा राम गोपाल घोष ने बीटन के मसौदे के समर्थन में 'ब्लैक ऐक्ट' नामक एक किताब लिखी, उनके नेतृत्व में देशी लोगों के क़ानून बनाने के पक्ष में आन्दोलन भी किया मगर कोई नतीजा नहीं निकला। निलहों का अत्याचार पहिले से और बढ़ चला।

२० अप्रैल १८५४ में नदीया ज़िले के जज-मैजिस्ट्रेट स्कोन्स ने बंगाल सरकार के सेक्रेटरी सेसिल बीउन को एक गुरुत्वपूर्ण रिपोर्ट लिख भेजी जिसमें उन्होंने जल्द एक जाँच कमीशन बैठाने का अनुरोध किया।[१]

इस चिट्ठी के लिए बंगाल के लेफ्टनैंट गवर्नर ने तत्कालीन गवर्नर जेनरल लार्ड डैलहौज़ी द्वारा समर्थित हो ५ जून १८५४ की चिट्ठी में स्कोन्स को फटकारते हुए लिखा कि उन्होंने 'नेटिवों' की बात सुनी है मगर 'संभ्रान्त' निलहों की बात नहीं सुनी है। अन्त में लिखा कि किसी प्रकार के कमीशन की ज़रूरत नहीं है।[२]

इसी बीच १८५६ में निलहों को अनरेरी मैजिस्ट्रेट का पद पाने का अधिकार मिला। चोर ही कोतवाल बन बैठे। हिन्दुस्तान के लिए गर्व और गौरव की बात है कि किसानों ने इस जुल्म को चुपचाप बरदाश्त नहीं किया, वे बड़ी तादाद में शसस्त्र होकर लड़े, निलहों के अत्याचारों का डट कर मुकाबला किया। देशी जमीदारों के एक हिस्से का समर्थन भी उनके पीछे था।

---

१. "Selections from the records of the Goverment of Bengal. Papers relating to Indigo Cultivation in Bengal" Calcutta, 1860, p. 2-3.

२. उपर्युक्त, पृ. ५–९

परिशिष्ट–६

नीलदर्पण सम्बन्धी गीत

नील-विद्रोह और नीलदर्पण के ऐतिहासिक मुक़दमे को लेकर कई मशहूर गानों का जनता में बड़ा प्रचार हुआ था। 'नीलदर्पण' के बाद वाले संस्करण में इनमें से कुछ गाने इस प्रकार मुद्रित हुए थे--

रागिनी अड़ाना बहार--ताल तिओट

हे निरदय नीलकरगण।
आर सहे ना प्राणे, दहिले नील आगुने,
गुणराशि कि कुदिने, कल्ले हेथा पदार्पण।
दादनेर सुकौशले, श्वेत समाजेर बले,
लुठेछ सकल तो हे कि आर आछे एखन॥
दीन जने दुःख दिते, काहार न लागे चिते,
केवल नीलेर हेरि पाषाण समान मन।
बृटन स्वभावे शेषे, कालि दिले वंगे एसे,
तरिले जलधिजल, पोड़ाते स्वर्णभवन।

(विद्याभूणी–कृत)

कवि का सुर

नील वानरे सोनार बाङला कल्ले एबार छारेखार।
असमये हरिश मलो लङ्गेर हलो कारागार।
प्रजार आर प्राण बाँचानो भार।
राम सीतार कारणे, सुग्रीव मिताली करे वधे रावणे,
जत सओदागरेरा सहाय एदेर × × दुटो एडिटार।
एखन स्पष्ट लेखा घुचे ग्यालो, जज साहेब एक अवतार।
जत × × × × राजत्व हलो साधुर पक्षे गंगा पार॥

(वही)

राग सूरत मल्हार—ताल आड़ाठका

नील दर्पणे लङ् साहेब यथार्थ जा ताइ लिखेछे।
नीले नीले सब निले प्रजार बल भाइ कि रेखेछे ॥१
कारो × × कार तादेर उपर अत्याचार,
ताइ निये बार बार, लिखे लिखे हरिश मरेछे ॥२
ईडन्, ग्रान्ट महामति, न्यायवान् उभये अति,
करिते प्रजार गति, कत चेष्टा पाइतेछे ॥३
इन्डिगो रिपोर्ट प'ड़े के ना अन्तरे पोड़े,
तबु नीलिरा न'ड़े च'ड़े पोड़ार मुख देखातेछे ॥४
बल्ते दुखे बुक विदरे, वेल्स अविचार क'रे,
निर्दोषी लङ्के घरे, एकटि मास म्याद दियेछे ॥५
वेल्स, पिकक, जाकसने, वसिया विचारासने,
× × × × हाजार टाका फाइन करेछे ॥६
निदारुण सेन्टेन्स शुने, सिंह बाबू दया गुणे,
हाजार टाका दिलेन गुने, वाल्टर ब्रेट ताइ ताक हयेछे ॥७
इंलैन्डेश्वरी शुन, पिउनीर सकल गुण,
आइने जे सुनिपुण, एबार ता बेरिये पड़ेछे ॥८
जे अवधि कलिकाता, पाइयाछे ये विधाता,
सेइ अवधि देखि माता, रेस हेट्रेड खुब चेगेछे ॥९
वेंचे बातुलेर मत लम्फ झम्प करे कत,
आबार बले आमार मत, केबा जज हेथा एसेछे ॥ १०
किन्तु पील, सिटन आदि, एक-एक बुद्धिर काँदि,
तादेर लागि आजो काँदि, हाय कि विचार कोरे गेछे ॥११
महाराणी तोमा प्रति एइ क्षणे एइ मिनति,
वेल्स पापे देओ मुकति, धिराज एइ बलितेछे ॥१२

(धीराज कृत)

निलहों के बारे में कुछ और गाने

(केदारनाथ वन्द्योपाध्याय ने बड़े परिश्रम से अठारहवीं-उन्नीसवीं सदी के कवि-गानों को इकट्ठा कर आज से सत्तर साल पहिले १८९४ ई० में 'गुप्तरत्नोद्धार' के नाम से छपा दिया था। नीचे के गाने इसी संग्रह से दिए जा रहे हैं।

कवि-गान में दो या ततोधिक कवि कविता में बहस करते थे किसी विषय विशेष को लेकर। इसमें पहिला कवि 'चितान' और उसका विपक्षी 'महड़ा' गाता था। विशाल जनता इसे रात भर सुनती थी। कभी-कभी यह 'द्वन्द्व' कई रात चलता था। बंगाल के देहातों में आज भी इसका प्रचार है।)

गाना–१

महड़ा

कोथा रँले मा, भिक्टोरिया मागो मा,
कातरे कर करुणा।
मा तोमार भारतवर्षे, सुखो आर नाहि स्पर्शे,
प्रजारा नहे हर्षे, सबाइ विमर्शे—
एमन सोनार वर्षे, खासेर वर्षे,
केवल वर्षे यातना।
"आसिया" आसिया मागो करुणामयि
करुणाचक्षे देख ना।
नामेते नीलेर कुठि, हतेछे कुटि कुटि,
दुःखी लोके प्राणे मारा जाय,
पेटे खेते नाहि पाय।
कुटेल सब साहेबजादा, धप्धपे बाइरे शादा,
भितरे पचा कादार भड़भड़ानि,
पेंको गन्ध ताय।

ओमा एके मन्सार फोंस फुसुनि,
धुनोर गन्ध ताय ।
ह्लो चोरेर काछे वर्म्म कथा,
मर्म्म कभु बोझे ना ।

गाना–२

चितान

होलो नीलकरेरदेर अनररि
मेजेष्टरि - भार,
कुइन, मा, मा मा गो ।
होलो नीलकरेरदेर अनररि
मेजेष्टरि - भार ।
प'ड़ेछे सब पातर वक्षे, अभागा प्रजार पक्षे,
विचारे रक्षे नाइको आर ।
नील करेर हद्द लीले, नीले निले सकल निले,
देशे उठेछे एइ भाष ।
जत प्रजार सर्वनाश ।
कुठियाल विचारकारी, लाठियाल सहकारी,
बानरेर हाते होलो कालेर खोन्ता—
लोन्ता जले चाष ।
होलो डाइनेर कोले छेले सोंपा,
चिलेर बासाय माच ।
हबे बाघेर हातेर छागेर रक्षे,
शुनेनि केउ शुनबेना ॥

गाना–३

अन्तरा

प्रजा धच्छे आर साच्छे तारा एककाले,
पिठेते माच्छे खुब कोड़ा ।
काटा घाये लुणेर छिटे, पोड़ार उपर पोड़ा,
जेन गोदेर उपर विषफोड़ा ।।

चितान

होलो भक्षकेते रक्षेकर्त्ता, घटे सर्वनाश ।
काल्साप कि कोनो काले, दयाते भेके पाले ?
टपाटप अम्नि करे ग्रास ।।
बाँगाली तोमार केना, ए कथा जाने केना ?
हयेछि चिरकेले दास;
करि शुभ अभिलाष ।
तुमि मा कल्पतरु, आमरा सब पोषा गरु,
शिखिनि शिंग बाँकानो ।
केवल खाबो खोल, बिचिलि घास् ।।
जेन राँगा आम्ला तुले माम्ला,
गामला भाङे ना ।
आमरा भुसि पेलेइ खुसि हब,
घुसि खेले बाँचबो ना ।।

गाना–४

अन्तरा

जमी चुन्चे, दिन गुणचे,
केवल बुनचे बीज,

दोहाइ ना शुन्चे एकटि बार।
नीलेर दादन, ठेंगार गादन,
बाँधन चमत्कार;
करे भिटे माटि चाटि सार ॥

चितान

तोमार साधेर बाँगला, होलो कांगला,
सयना अत्याचार ।
बेगारे हय रेयोत् सारा, जमीदार पड़े मारा,
लाटेर दिन खाजना हयना आर ।
कांगाली बाँगाली जत, चिरदिन अनुगत,
जानिने मन्द आचरण;
पूजि तोमार श्रीचरण ।
आमा देर बाइरे कालो, भितरे बड़ भालो,
मनेते राँगा आलो,
टुक्टुके टुक् सिंदुरे बरण ।
राजविद्रोहिता कारे बले, स्वप्ने जानिने;
केवल ईश्वरेर निकटे करि
तोमार जयेर वासना ॥

गाना–५

महड़ा

भालो कार्य्यंटि धार्य्यं कोरे यदि गो,
एइ राज्यटी करेछ मा खास।
एसे ए देशेते वसत् कर, अन्नपूर्णा मूर्त्ति धर,
अन्नदाने बाँचाओ प्रजार प्राण।

सब अन्न भूमि कर तुमि, तुले निये नीलेर चाष ।
कोथा मा पाये धरि, हये राज राजेश्वरी,
सन्तानेर पुराओ अभिलाष ।।
होलो रान्नाधरे कान्नाहाटि, धन्ना पड़े लाठालाठि,
उदरे अन्न कारो नाइ ।
दोहाइ मा तोमार दोहाइ ।
केह रय नीराहारे, केह रय निराहारे,
यदि विपदे श्रीपदे राख, ओगो मा,
तबेइ रक्षा पाइ ।
नाइ उनुन ज्वाला, एकि ज्वाला,
जालाय नाइक जल ।
आबार पोड़ा भाग्गी, सकल माग्गी,
उपवासे उपवास ।।

चितान

तुमि विश्वमाता भिक्टोरिया थाक, बिलाते ।
आमरा मा सब तोमार अधीन, दीन चिरदिन,
शुभ दिन दिन मा भारते ।।
कोम्पानि राज उठिये निले, के बुझे तोमार लीले ?
निले मा एइ भारतेर भार ।
पेये शुभ समाचार ।

गाना–६

मा तोमार हबे भालो, आशाते दिलेन आलो,
सुखे रेको समभावे, शादा कालो,
भेद रबेना आर ।

जत नीलेर शादा, मुलुकचाँदा, शादा केह नय,
कोरे नीलेर कर्म्म, कि अधर्म्म,
मने काली हय प्रकाश ।।

अन्तरा

ना बुनले नील, मेरे किल,
"किल" करे नीलकरे ।
देशेर छोटकर्त्ता, दिलेन तादेर,
हर्त्ता कर्त्ता कोरे ।
जोरे बेंधे आने धोरे ।।

चितान

जेमन काजीरे सुधाले परे, हिंदुर परब नाइ ।
तेमनि सब नीलकरेर आचार, विषम विचार,
गोस्वामी भक्षणेर गोंसाइ ।
एकेतो मागगी गंडा, लुठेल ताय कुटेल षंडा,
तारातो ठांडा केह नय ।
लुटे एन्डा बाच्छा लय ।
गियेछे पूंजि पाटा, भिटेते शेंकुल काँटा,
आमार धन गियेछे, मान गियेछे,
एखन मा प्राण निये संशय ।
गेल गरु जरु, तृण तरु, किछु नाहि आर ।
करे हाकिम हये साकिन नष्ट,
समान कष्ट बारमास ।।

गाना नम्बर दो का अँग्रेजी तर्जुमा

२३ नवम्बर १८५८ को बंगाल हरकारू (Bengal Hurkaru) ने निम्नलिखित टिप्पणी के साथ दो नम्बर गाने का अँगरेजी तर्जुमा छापा था।

The appointment of Indigo Planters as Honorary Magistrates, has excited strong feelings of indignation among many natives, and particularly among the ryots--who say *je rakhak se bhakhak*, ie; who is appointed our Protector eats us up. These feelings have found vent in the form of verse and in parts of the Krishnagur district a Bengalee song set to music has been extensively sung on this subject. The following is the translation of one of the songs :

Song.

Chorus

Ye sons of the soil,
Alas !, tis to fool ye
These Honorary Magistrates
Are appointed to rule ye !

The Land is going to ruin
Our rulers they see its undoin' !
They love us not-think ye they do, sirs ?
Pray, why then this dire application

Of the knife to the throat of our nation–
Come, answer me, why is it so, sirs ?
Ye sons of the soil, etc

2

The Planter he sits on the seat, O !
Of Judgement–the Witch whom the meat, O !
Of infants delights–now holds sway
O'er the Nursery doom'd to destruction !
The Ape weilds the Sword of Protection !
O hapless Bengala ! cry 'Lack !' Lackaday !
Ye sons of the soil, etc

3

The Planter, who forces e'en our priests, sirs,
To plough–to his mill to bring grist, sirs,–
And makes us all slaves–high or low !
O Lady of Albion! Our Sovereign–our mother,
O save us thy children !
Friends have we no other !
O save us are we sink 'neath the blow !
Ye sons of the soil, etc

परिशिष्ट–७

नील विद्रोह

१८५९ के पहिले नील बोने वाले किसानों ने जगह-जगह विच्छिन्न रूप से निलहों के अत्याचारों का मुक़ाबला किया था। इस सदी के चौथे दशक में तीतू मीर का विद्रोह भी उल्लेखयोग्य घटना है। फराइज़ी लोगों की तरह तीतूमीर भी विशुद्ध इस्लाम की प्रतिष्ठा ज़मींदारी का खात्मा और विदेशी विधर्मी अँगरेज़ों का विताड़न चाहते थे। उनके विचारों में धार्मिक कट्टरता और विप्लवी राजनीतिका सम्मिश्रण देखा जाता है। तीतू मीर को ज़मींदारों, निलहों और कम्पनी की सरकार के ख़िलाफ़ लड़ना पड़ा था। तीतू निलहों से खूब लड़े और कितनी ही लड़ाइयों में उन्हें बुरी तरह हराया भी। तीतू की बढ़ती शक्ति देखकर सरकार इतनी बेचैन हो गई थी कि १८३९ में उनके खिलाफ़ फौज भेजी गई थी। तीतू की एक लड़ाई गोबर डांगा (ज़िला २४ परगना) के ज़मींदार काली प्रसन्न मुखोपाध्याय और मोल्लाहाटी नीलकोठी के मैनेजर डेविस की सम्मिलित वाहिनी से हुई जिसमें कई हाथियों समेत दो सौ हब्शी और एक हज़ार लठैत ज़मींदार और निलहे की ओर थे। इसी तरह १८३९ में नारकेल बाड़िया में तीतू से एक और लड़ाई हुई जिसमें वे मारे गए।

किसानों के स्थानीय संघर्षों की अनन्त कथाओं के लिए यहाँ स्थान नहीं है। उनका संगठित संघर्ष १८५९ से शुरू होता है। इस समय की हालत का वर्णन करते हुए एक अँगरेज़ी अखबार ने लिखा था : "प्रत्येक क्रिया की एक प्रतिक्रिया भी होती है। निलहों के अत्याचार की मात्रा पर ही रैयतों के प्रतिरोध का रूप निर्भर करेगा। यहाँ भी उसका व्यतिक्रम नहीं दिखाई पड़ता। जिस सब-डिवीज़न से डिप्टी मैजिस्ट्रेट अब्दुल

लतीफ[1] का असम्मान जनक तबादला हुआ था निलहों के खिलाफ़ लड़ाई भी वहीं से शुरू हुई। नील की खेती न करने का किसानों का दृढ़-संकल्प जैसा आकस्मिक वैसा ही अप्रत्याशित भी था।"[2]

१८५९ में जब पीटर ग्रान्ट बंगाल के छोटे लाट थे तभी से "यह नील का सवाल अपरिहार्य रूप से सरकार पर दबाव डालने लगा।"[3] आज़ादी की पहली लड़ाई के बाद सरकार ने निलहों के जुल्म को कुछ संयत किया। क्योंकि वह निलहों के 'राष्ट्र के अन्दर राष्ट्र' को बदलना बरदाश्त करना नहीं चाहती थी।

जब निलहों ने देखा कि किसान नील न बोने पर तुले हुए हैं तो उन्होंने उनकी ज़मीन में खुद ज़बरदस्ती नील बोना तय किया। किसानों ने मैजिस्ट्रेट ईडेन से मदद माँगी। उन्होंने पुलिस भेजते हुए हुक्म दिया कि अपनी ज़मीन में नील बोना किसानों की मर्ज़ी पर निर्भर करता है, इसके लिए उन पर ज़ोर-जुल्म ग़ैर क़ानूनी होगा।

उन दिनों का वर्णन करते हुए एक पत्रिका ने लिखा था—"बंगाल के ग्राम वालों में एक आकस्मिक और अत्याश्चर्यजनक परिवर्त्तन आ गया है। लमहे में उन्होंने अपनी स्वाधीनता की घोषणा कर दी है। जिन रैयतों से हम क्रीतदासों अथवा रूस देश के भूमिदासों जैसा समझने के आदी थे, ज़मींदार और निलहों का जिन्हें हम अबाध यंत्र समझते थे, अन्त में वे जाग उठे हैं, काम में तत्पर हो उठे हैं, और प्रतिज्ञा की है कि अब उन्हें जंज़ीर नहीं पहनाया जा सकेगा। इस समय गाँव के लोग जिस आश्चर्यजनक अनुभूति से नील की खेती को देख रहे हैं और जिसके

---

१. अब्दुल लतीफ़ यशोहर के डिप्टी मैजिस्ट्रेट थे। नौकरी खतरे में डाल कर उन्होंने अनुकरणीय साहस के साथ किसानों की सहायता और निलहों के जुल्मों का विरोध किया था।

२. Calcutta Review, June, 1860.

३. Buckland--Bengal Under the Lt. Governors, Vol. I, P. 184.

फलस्वरूप बहुत सी जगहों में उनका विस्फोट हुआ है इसकी कल्पना बहुत दूरदर्शी लोगों ने भी नहीं की थी। १८५७ के ठीक बाद ही ये घटनाएँ बंगाल के भविष्य को बहुत प्रभावित करेंगी इसमें सन्देह नहीं।"[१]

१६ मार्च १८६० को निलहों ने छोटे लाट को स्मारक पत्र भेजा था उसमें लिखा था कि किसान संगठित होकर विद्रोही हो उठे हैं और निलहे किसानों से नील की खेती नहीं करा पा रहे हैं। एक कोठी का उदाहरण देकर उन्होंने लिखा, "देहातों की अदालतों में किसी रैयत के खिलाफ़ मुकदमा करना असंभव हो गया है, क्योंकि अभियोग साबित करने के लिए हम गवाह नहीं पा रहे हैं; यहाँ तक कि सरकारी कर्मचारी तक भी अदालत में जाकर गवाही देने की हिम्मत नहीं करते हैं।" और "रैयत इन दिनों बहुत उत्तेजित हैं, वस्तुत: वे बाग़ी हो गए हैं, हर तरह के दुष्कर्म के लिए वे तैयार हैं। रोज वे हमारी कोठी और बीज के गोलों में आग लगाने की कोशिश में हैं। हमारे अधिकांश घरेलू नौकर-चाकर काम छोड़ कर चले गए हैं, क्योंकि रैयतों ने उन्हें धमकाया है कि वे उनका घर द्वार फूँक देंगे या उन्हें मार डालेंगे। हमें डर है कि जो दो चार अभी हमारे साथ हैं वे भी जल्द चले जायेंगे, क्योंकि बग़ल की बाजारों में उन्हें सौदा नहीं मिल रहा है।"[२]

किसानों से बचाने के लिए फ़ौरन मदद की माँग करते हुए कहा गया कि "मदद नहीं मिली तो देहातों में प्राण बचाना उनके लिए संभव नहीं होगा। सारे जिले में क्रान्ति शुरू हो गई है।" इसके उदाहरण में उन्होंने किसानों को अनगिनत आक्रमणों को उल्लेख किया।

ऊपर की खबर को छाप कर हरिश मुखर्जी ने 'हिन्दू पेट्रियट' में लिखा था कि रैयतों की स्वार्थरक्षा के लिए कोई संस्था नहीं है। इसी समय 'ढाका न्यूज़' ने लिखा था—"रूस के सैकड़ों वर्षों के भूमिदास दासता से मुक्त हुए हैं। बंगाल के किसान अगर अपनी ज़मीन में स्वतंत्र

---

१. Calcutta Review, June 1860. P. 355.
२. Hindu Patriot, 17th. March 1860.

रूप से खेती करना चाहते हैं अथवा जन्मने के पहिले ही अपने श्रम को बेचने के बदले अपनी मर्जी से उसे काम में लगाना चाहें तो हम उन्हें क्यों रोकें।"[१]

निलहा सभा के सेक्रेटरी फोर्बस ने बंगाल सरकार को लिखा था—"मेरी राय में दक्खिनी बंगाल में एक आम विद्रोह सुनिश्चित है अगर सरकार इसे दबाने की कोशिश नहीं कती है।" सेक्रेटरी ने इस पर टिप्पणी लिखी कि "सरकार की मदद के बिना किसानों का असंतोष दबाना निलहों के बूते के बाहर है।"[२]

मार्च, अप्रैल, मई, जून में विद्रोह नदीया, जैसोर, बारासान, पाबना, राजशाही, फरीदपुर—चारों ओर फैल गया। हिन्दू मुसलमान ईसाई किसान कंधे से कंधा मिला कर नए जोश से आगे बढ़े। अप्रैल में बारासात के किसानों ने एक स्वर से एलान किया कि वे प्राण देने के लिए तैयार हैं पर नील नहीं बोएँगे। जुलाई महीने में ब्रिटिश जमींदार और सौदागर समिति के सभापति ने भारत मंत्री उड को लिखा—

"देहातों की हालत इस वक्त सोलहो आना अराजकतापूर्ण है। किसान अपना कर्ज़ और इकरारनामा अस्वीकार करके ही चुप नहीं बैठे हैं, उन्होंने (गोरे) महाजनों और मालिकों को देश से निकाल कर बाहर करने का इन्तिजाम कर रहे हैं। वे इस सूबे से सभी यूरोपियनों को निकालना, उनकी छीनी हुई सम्पत्ति रखना और यूरोपियनों का कर्ज़ रद्द करना चाहते हैं।"[३]

किसानों की लड़ाई ने कितनी तेज़ी से क्रान्तिकारी रूप ले लिया था 'इन्डियन फील्ड' (४ फरवरी १८६०) में एक पादरी ने लिखा कि "किसान नील नहीं बोना चाहते। ज़मीदार के हमले की धमकी सुनकर वे भी लड़ने को तैयार हो गए। निलहों का आक्रमण बेकार रहा क्योंकि

---

१. Hindu Patriot में उद्धृत 31 st. March, 1860.
२. वही, खंड ४४ (१८६०) पृ० १९५।
३. वही, खंड ४५ (१८६१) पृ० ५-६।

उनके लठैत किसानों को दृढ़ प्रतिज्ञ देख कर डर गए हैं, किसान छ कम्पनियों में बँट गए। तीर-कमान लाठी, बल्लम, ढेले, बाँस, पत्थरबाजों की कम्पनियाँ थीं। स्त्रियाँ पुरुषों से पीछे न थीं। ये गिनती में कम होने पर भी दुधर्ष हैं।"

अमृत बाजार पत्रिका के मालिक शिशिर कुमार घोष के जीवनी कार ने किसानों की आत्मरक्षा की तैयारियों का रोचक वर्णन देते हुए लिखा है कि "वे गाँव के छोर पर एक सिंगा रखते थे। आक्रमण का खतरा दिखाई देते ही सिंगा बजता और चार-पाँच गाँव के किसान आ जमा हो जाते और लड़कर निलहों के लठैतों को मार भगाते।"[1]

यशोहर–खुलना के इतिहास कार सतीशचन्द्र मित्र ने लिखा है— "गाँव में एक दमामा रखा जाता था। निलहों के आदमी अत्याचार करने गाँव में आते तो वह बजाया जाता। कोई बिना पिटे नहीं लौटता। किसानों पर अनगिनत मुक़दमे होते, वे जेलों में जाते, अदालतों में उनका समर्थन करने वाला कोई नहीं था। ब्रिटिश इन्डियन एसोसिएशन ने दो-तीन मुख्तार भेजे थे लेकिन वे सभी का काम नहीं कर पाते थे। शिशिर कुमार घोष प्रजा के एकमात्र मित्र थे। वे उनकी मदद करते थे। नाना साहब और ताँतिया टोपी का नाम देश भर में फैल गया था। विद्रोही-किसान अपने नेताओं को इन्हीं नामों से पुकारते थे।[2]

१८८० में शिशिर कुमार ने अमृत बाजार पत्रिका में अपने लेख में लिखा था कि नील-विद्रोह में ५० लाख किसानों ने जिस देशभक्ति, आत्मत्याग और निष्ठा का परिचय दिया था 'उसका उदाहरण दुनिया के इतिहास में कम ही देखा जाता है। जिन किसानों को जेलों में बन्द रखा गया था वे भी नील बोने के लिए तैयार नहीं हुए, यद्यपि सरकार ने वायदा किया था कि वे जेलों से छोड़ दिए जायँगे, उनके बर्बाद किए गए

---

१. अनाथनाथ वसु—महात्मा शिशिर कुमार घोष, १३२७ वंगाब्द (१९२०), पृ० ३६।

२. यशोहर खुलनार इतिहास, १३२९ (१९२३ ई०), पृ० ७८१।

घर द्वार फिर से बना दिए जायँगे, भिखारी बने स्त्री-बच्चों को वापिस लाया जायगा।

शिशिर कुमार का कहना है कि किसानों को संगठित करने का श्रेय चौगाछा (ज़िला नदीया) के विष्णुचरण विश्वास और दिगम्बर विश्वास को है। विष्णुचरण साधारण काश्तकार और दिगम्बर मामूली महाजन थे। दोनों ने कुछ दिनों तक नील कोठी में काम भी किया था। लेकिन आत्म सम्मान बचाने के लिए बहुत दिनों तक वहाँ नहीं टिक सके।[1] वंकिम चन्द्र के जीवनी लेखक ने इनके बारे में लिखा है—"कितने वाट्टाइलर, हैमडेन, वाशिंगटन, निरन्तर बंगाल में पैदा हो रहे हैं, छोटे वनफूलों की तरह मनुष्य आँखों से ओझल आँधियों से छिन्न-भिन्न हो रहे हैं, उसे देखकर भी हम नहीं देखते हैं, हम उनके चित्र खींच कर नहीं लिख रखते हैं। क्योंकि हम इतिहास लिखना नहीं जानते। हाल ही चित्र बनाना सीख रहे हैं। बंगाली मार खाकर मारने के लिए उठ खड़े हुए। चौगाछा के दो साधारण प्रजा। इन दोनों स्वार्थत्यागी महापुरुषों ने बंगाल के कंगाल लाचार किसानों को एक सूत्र में बाँधा, गदर की हाल में बुझी आग से चिनगारी लेकर गाँवों में फैलाने लगे।"[2]

चौगाछा और उसके पास के गाँव ने १८५९ में एलान किया कि वे नील नहीं बोएँगे। निलहों के हज़ार लठैत चढ़ आए। गाँव वाले पहिले पीछे हट गए, गाँव लूटा गया, आग भी लगाई गई। बहुतेरे किसान पकड़ गए, बहुतेरों को जेल की सजा हो गई। विश्वास द्वय को पकड़ने की बड़ी कोशिशें हुई लेकिन बेकरार रहे। किसानों के मुक़दमे का सारा खर्च उन्होंने दिया। जेल जाने वालों के परिवार की भी वे मदद करते रहे।

विणु चरण और दिगम्बर ने देखा कि कम से कम एक लड़ाई में

---

१. Pictures of Indian Life. Calcutta, 1917.

२. शचीशचन्द्र चट्टोपाध्याय—वंकिम जीवनी, १३१८ (१९११ ई०) पृ० ८७–८८।

निलहों को हराए बग़ैर काम नहीं चलेगा। चौगाछा और आसपास के गावों से स्त्रियों और बच्चों को दूसरी जगह भेज दिया गया। बाहर से भी लठैत बुलाए, भाले वाले आए। किसी ने नील नहीं बोया। कुछ ही दिनों में चौगाछा के अन्तर्गत काठ गड़ा की कोठी बन्द हो गई।

किसानों को सबक सिखाने के लिए निलहों के डेढ़ हज़ार लठैतों ने लोकनाथपुर पर आक्रमण किया। तैयार बैठे किसानों ने मुँह तोड़ जवाब दिया। लठैत भाग खड़े हुए। किसानों ने इस तरह की कितनी ही लड़ाइयाँ जीतीं।

सतीशचन्द्र मित्र लिखा है कि "न केवल विश्वास गण ही बल्कि देश में ऐसे बहुतेरे लोग पैदा हुए थे। विद्रोह स्थानीय या सामायिक नहीं था। जहाँ जब तक विद्रोह का कारण रहा तब यह भी बना रहा। दुख की बात है इन वीरों का इतिहास लिपिबद्ध नहीं हुआ।"

नील-कमीशन ने जब हर्सेल से पूछा कि, "आप क्या ऐसे सरपंच का नाम जानते हैं जो अपने ज्ञान बुद्धि और दृढ़ चरित्र से रैयतों को जगा और संगठित कर सकते हैं?" इसके उत्तर में उन्होंने कहा कि "मैं इस तरह के सौ आदमियों के नाम गिना सकता हूँ। एक गाँव में ऐसे नेता दिखाई पड़े हैं जिनका प्रभाव थोड़े ही समय में दूसरे गाँवों में बड़ी तेज़ी से फैल गया है।"[1]

आशानगर (ज़िला नादिया) के मेवाई सरदार, बाँशबेड़िया (ज़िला हुगली) के वैद्यनाथ और विश्वनाथ सरदार, झिनाई दर (ज़िला यशोहर) के महेशचन्द्र चट्टोपाध्याय जैसे अनगिनत वीर नील-विद्रोह के अमर नेताओं में हैं। इनके नाम से निलहे थर्राते थे।

किसानों का इतना बड़ा विद्रोह एक दिन में नहीं हुआ। इसकी तैयारियाँ खुद गाँव वालों ने ही की थीं। अनुभवी नेताओं की कमी भी उन्हीं ने पूरी की। एक प्रकार से शहर वालों की मदद के बिना ही इतने दिनों तक इतनी बड़ी लड़ाई से किसानों की सांगठनिक प्रतिभा और

---

१. Indigo Commission; Evidence, P. 6.

क्रान्तिकारी शक्ति का पता चलता है। सरकार ने मान लिया था कि नील-विद्रोह के पीछे षडयंत्रकारियों का हाथ है। इसका पता लगाने की भी उन्होंने पूरी कोशिशें की थीं। सारी बातों की जाँच पड़ताल के बाद नील कमीशन ने राय दी थी कि नील-विद्रोह के पीछे सरकारी कर्मचारियों, पादरियों जमींदारों, या बाहर के किसी षडयंत्रकारी का हाथ नहीं है। अपनी हालत के सुधार के लिए खुद किसानों ने ही इसे संगठित किया था, गावों में जाकर एक दूसरे की मदद की थी।

नील-विद्रोह में किसानों की भूमिका के बारे में सौ साल पहिले हरिश्चन्द्र मुखर्जी का कथन सोलहो आना सच है—"बंगाल अपने किसानों पर गर्व कर सकता है। नील-आन्दोलन शुरू होने के बाद से बंगाल के रैयतों ने जिस नैतिक शक्ति का सुस्पष्ट परिचय दिया है वैसा किसी देश के किसानों में नहीं देखा गया है। दरिद्र, राजनीतिक ज्ञान और शक्ति से हीन, नेतृत्व विहीन होते हुए भी इन किसानों ने एक ऐसी क्रान्ति की थी जो गुरुत्व और महत्व की दृष्टि से किसी भी देश के सामाजिक इतिहास की क्रान्ति से तुलना में घट कर नहीं है। उन्हें ऐसी शक्ति के विरुद्ध लड़ना पड़ा था जिसके हाथों में अपार शक्ति के सभी साधन थे। सरकार उनके खिलाफ़ थी, अख़बार उनके खिलाफ़ थे, क़ानून-अदालत सब कुछ उनके खिलाफ़ थी। इतनी शक्तियों के खिलाफ़ उन्होंने जो सफलता प्राप्त की थी उसका सुफल समाज के सभी बाशिन्दे और देश के भविष्य के वंशधर उपभोग करेंगे।...इसी बीच रैयतों पर अत्याचार करने वालों ने समझ लिया है कि उनके अत्याचार के दिन लद गए हैं।"[1]

------

१. Hindu Patriot, 19 May, 1860.

परिशिष्ट—८

नील-कमीशन

नील-विद्रोह जब पराकाष्ठा पर पहुँच गया था, उसी समय ३१ मार्च १८६० में नील की खेती की हालत और किसानों की शिकायतों की जाँच के लिए कमीशन बैठाया गया। कमीशन ने १८ मई से १४ अगस्त तक १३६ आदमियों (१५ सरकारी कर्मचारी, २१ निलहे, ८ पादरी, १३ ज़मींदार और ७७ रैयत) की गवाही ली और २७ अगस्त को रिपोर्ट पेश की। नील कमीशन में सरकार की तरफ़ से सीटन-कार (सभापति) और आर. टेम्पल, पादरियों की तरफ़ से सेल, निलहा समिति की ओर से फरगूसन और ब्रिटिश इन्डियन ऐसोसियेशन की तरफ़ से चन्द्रमोहन चटर्जी थे।

कमीशन की जाँच से निलहों के अनन्त प्रकार के ज़ुल्मों की बात सरकार को माननी पड़ी। निलहों और किसानों के बीच नील बोने के तथाकथित इकरारनामे के बारे में कमीशन ने लिखा है कि स्वेच्छा से किसान नील बोने के लिए राज़ी नहीं होते। दादनी और इक़रारनामा उन पर ज़बर्दस्ती लादा जाता है। दादनी लाद देने के बाद "रैयत को ज़मीन जोतने, नील बोने, निराने, काटने और गाड़ी में लाद कर कोठी में पहुँचाने के लिए बाध्य किया जाता है...निलहा किसान की सबसे अच्छी ज़मीन नील के लिए चुनता है जिसे किसान अच्छी फसल के लिए तैयार किए रहते हैं।...नील बेहद कम दाम में लिया जाता है, इससे किसान हमेशा कर्ज़ में डूबा रहता है। जिस किसान ने एक बार नील बोना शुरू किया वह नील की खेती की विरासत अपनी अगली
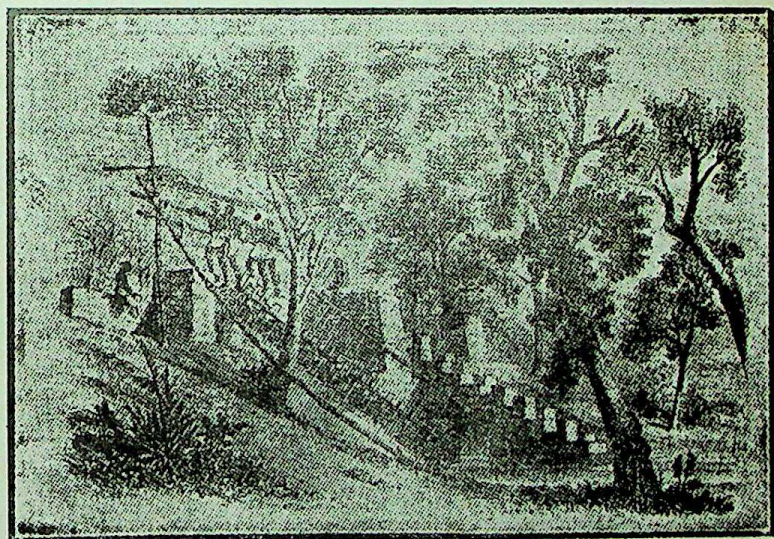
जल निकालने का चीनी कल

तीसरी चौथी पीढ़ी के लिए भी छोड़ जाता है। उसके वंशधर कभी इस क़र्ज़ को पटा नहीं पाते हैं और पटाने की हालत में होने पर भी उन्हें पटाने नहीं दिया जाता । ज़बर्दस्ती चालू रखा गया यह इन्तज़ाम अमलों के शोषण अत्याचार से और भी विषैला बन जाता है।...निलहों के कर्मचारी किसानों पर अनेक प्रकार के अत्याचार करते और उन्हें लूटते हैं। जैसे, बँसवाड़ी से बाँस काट लेना, बगीचे का फल तोड़ लेना, हल छीन लेना, बैल रोक रखना। निलहों की मर्ज़ी के मुताबिक जो काम करने को राज़ी नहीं हुए उन्हें सबक सिखाने के लिए निष्ठुर तरीके अपनाए गए हैं और इस बात के अनगिनत दृष्टान्त हैं कि कर्मचारियों ने घर-द्वार धूल में मिला दिया है, जला दिया है, बाज़ार लूट ली है, लोगों को उड़ा ले गए हैं और सभ्रान्त लोगों तक को हफ्तों, महीनों अँधेरे सीलन भरे गोदाम में बन्द कर रखा है, पुलिस की नज़र बचाने के लिए उन्हें एक से दूसरी कोठी में ले गए हैं। इससे भी बर्बर अत्याचार स्त्रियों पर किए गए हैं। ज़मीदारों से विरोध, ज़बर्दस्ती उनकी ज़मीन दखल करने इत्यादि के कारण बहुतेरे मुक़दमे और दंगे हुए हैं। ...बहुतेरे क्षेत्रों में निलहों ने दंगे-फ़साद करके या डर दिखाकर ज़मीदारों की इच्छा के विरुद्ध उनकी ज़मीन नील बोने के लिए ली है। इस प्रकार निलहों ने ज़मीदार बनकर रैयतों पर प्रभाव फैलाया है। ऐसा न करने पर, किसानों पर ज़ुल्म किए बग़ैर वे इतना नील क़तई पैदा नहीं कर सकते थे। ज़ोर-ज़ुल्म से इतनी ज़मीन हथियाना संभव नहीं होता अगर पुलिस इतनी नालायक, क़ानून इतना कमज़ोर न होता और सरकार खास करके, मैजिस्ट्रेट भारतीयों के स्वार्थ के विरुद्ध निलहों का पक्ष न लेते।...जहाँ-जहाँ नील की खेती हो रही है, वहाँ-वहाँ किसानों की हालत रंचमात्र भी बेहतर नहीं हो रही है।...इस वक्त किसानों का असंतोष विस्फोट का रूप ले रहा है, यह (असंतोष) पिछले बीस-तीस वर्षों से पुंजीभूत हो रहा था। स्थानीय सरकारी अफ़सरों, बुद्धिमान भारतीय और यूरोपीय सरकारी व ग़ैर सरकारी रिपोर्टों में बहुधा इस ओर ध्यान खींचा गया था। सर्वोपरि जिस प्रकार की नील की खेती का वर्णन यहाँ किया गया

है, वह नैतिक दृष्टि से दुराचारपूर्ण, व्यवहार में क्षतिकारक और सोलहो आने अतर्कसंगत है।"[१]

नील कमीशन निलहों को एक बड़े गुण—राजनीतिक गुण—की बात लिखना नहीं भूला : "देश के अन्दर चारों ओर फैले यूरोपियों की उपस्थिति और उनके निवास का राजनीतिक मूल्य बहुत अधिक है। बुरे वक्त और संकट में सरकार को इन्हीं निलहों की मदद लेनी होगी अराजकता के दमन के लिए, अनुशासन बनाए रखने के लिए और असंतोष के विरुद्ध कार्रवाई करने के लिए।"[२] रिपोर्ट में यह भी लिखा है कि "सरकार को मानना चाहिए कि देश के अन्दर निलहों की मौजूदग़ी विद्रोह के खिलाफ़ एक गारंटी और सरकार की शक्ति और ऐश्वर्य का स्रोत है।"[३]

कमीशन ने पुलिस और मैजिस्ट्रेटों के बारे में भी कहा था। पुलिस के बारे में उसकी राय थी : "सामूहिक रूप से वे घूसखोर और भ्रष्टाचारी हैं, इसे अस्वीकार नहीं किया जा सकता।...निलहों ने खुले आम हमें बताया है कि वे पुलिस अफ़सरों से अपनी मर्ज़ी के मुताबिक काम करा लेते हैं। जब हालत ऐसी है कि और सौदों की तरह पुलिस भी एक सौदा है, तो यह साफ़ है कि जिनके पास पैसा है वे ही इससे फ़ायदा उठाएँगे।"[४]

उन दिन सभी मैजिस्ट्रेट अँगरेज़ थे। वे अधिकांश क्षेत्रों में निलहों के मददगार और सलाहकार थे। कमीशन को ऐसा कोई प्रमाण नहीं जिससे पता चले कि मैजिस्ट्रेट निलहों को पसंद नहीं करते यद्यपि निलहों का कहना था कि मैजिस्ट्रेट और पादरी उन्हें पसंद नहीं करते हैं। "निलहों को नापसंद करना या उनका समर्थन न करना तो दूर रहा, हमारी राय है

---

१. Indigo Commission Report, P. 45.
२. वही, पृ. २१
३. वही, पृ. ६
४. वही पृ. Evidence.

कि रैयतों के प्रति अपने कर्त्तव्य के बारे में मैजिस्ट्रेट सजग नहीं थे और उन्हें जितनी सहायता और हिफ़ाज़त इनसे मिलनी चाहिए थी मैजिस्ट्रेटों ने नहीं दी। सचाई यह है कि अँगरेज़ मैजिस्ट्रेटों का झुकाव अपने देश-वासियों की ओर ही था जो उन्हें दावतें खिलाते थे या जिनके ये मेहमान बनते थे।"[1]

पादरियों के बारे में कमीशन की राय थी कि "चर्च-मिशनरी सोसाइटी (पादरी लाङ इसी सोसाइटी के थे) के कुछ पादरियों ने राजनीतिक आन्दोलनकारी का पार्ट अदा किया था। "लेकिन उन्होंने किसी व्यक्तिगत स्वार्थ या किसी राजनीतिक उद्देश्य से यह काम नहीं किया।" इसके अलावा उन्होंने कोई भी "असंगत या ग़ैरक़ानूनी काम नहीं किया। उल्टे उन्होंने रैयतों से क़ानून मानकर चलने और ग़ैरक़ानूनी काम से बचने को कहा; उन्होंने उनसे इस साल नील बोने के लिए भी कहा है।... पादरियों के कहने से किसानों ने नील बोना बन्द कर दिया है यह बेबुनियाद बात है।"[2]

कमीशन ने विद्रोह के बारे में लिखा है—"हम बहुत सोच-विचार कर इस फ़ैसले पर पहुँचे हैं कि, हाल में नदीया और दूसरे ज़िलों में किसानों ने जो नील बोने से इनकार कर दिया है, वह दूसरे किसी भी मौके और समय में हो सकता। जनमत की इस विक्षुब्ध अभिव्यंजना (outburst of popular feeling) की सभी सामग्री तैयार थी।...ज़मीदार या कलकत्ते के गुप्त प्रतिनिधियों के प्रचार के फलस्वरूप असंतोष फैला है, इसका कोई भी प्रमाण ढूंढ़ने पर भी हमें नहीं मिला।...हमारी राय है कि ये ज़मीदार किसानों के स्वतंत्र रूप से काम करने के प्रयास या उनके किसी प्रकार के संगठित आन्दोलन से बहुत डरते हैं। क्योंकि, वे जानते हैं, कि इससे उनके निजी स्वार्थ को धक्का पहुँच सकता है। इसलिए ज़मीदारों के लिए

---

१. वही, पृ. ३०
२. वही, पृ. ३१

किसानों को भड़काना स्वाभाविक नहीं है।"[1]

कमीशन की रिपोर्ट निलहों की शक्ति और प्रभाव पर करारी चोट की। लेकिन किसानों के फ़ायदे के क़ानून बनाने की ज़रूरत उसने नहीं मानी। सरकार, नील-कमीशन, छोटे लाट और निलहे कुल मिलाकर इस नतीजे पर पहुँचे कि, "नील की खेती में किसी प्रकार के सरकारी हस्तक्षेप से समस्या और भी पेचीदा बन जायगी। अच्छे मैजिस्ट्रेट, अच्छे जज; अच्छी पुलिस नियुक्त करना ही सरकार का काम है। वे ही इस बात की देख-भाल करेंगे कि न्याय हो और एक पक्ष दूसरे को सताने या ठगने न पाए।"[2]

इसके बाद सरकार ने घोषणा द्वारा सूचित कर दिया कि (१) सरकार नील की खेती के पक्ष या विपक्ष में नहीं है; (२) दूसरी किसी भी फ़सल की तरह नील की खेती करना या न करना, प्रजा की मर्ज़ी पर है; (३) प्रजा या निलहा जो कोई भी क़ानून तोड़ेगा, उसे सज़ा मिलेगी। निलहों पर कुछ अंकुश लगाने और प्रजा अदालती सहायता पहुँचाने के लिए नदीया, यशोहर, आदि ज़िलों में सब-डिवीज़नों और साथ ही इनमें अदालतों की संख्या बढ़ाई गई। थाने भी बढ़ाए और पुलिस भी। इससे हालत में कोई बुनियादी अन्तर नहीं आया। लेकिन किसान अपनी संगठित जंगी शक्ति के बारे में सजग हो गए।

कमीशन की रिपोर्ट से कोई भी खुश नहीं हुआ। अत्याचार की बात सरकारी तौर से स्वीकृत हो जाने से निलहे बदला लेने के लिए व्याकुल हो उठे। सीटन-कार, छोटे लाट ग्रान्ट, हरिश मुखर्जी, पादरी जेम्स लाङ कोई भी उनकी कोप दृष्टि से नहीं बचा। इसीलिए कमीशन की रिपोर्ट की कटु आलोचना करते हुए ब्रिटिश निहित-स्वार्थ के मुखपत्र 'कलकत्ता रिव्यू' ने कुछ सच्ची बातें भी लिख डालीं। "एक सरकार

---

१. वही पृष्ठ ३१
२. Buckland—Bengal under Lieutenant Governors. Vol. I, P. 256.

जब सामान्य रूप से जनता की विरागभाजन हो जाती है (और हिन्दुस्तान की सरकार भारतवासियों के निकट विरागभाजन हो गई यह १८५७ में निस्संदेह सिद्ध हो गई है। और ग़ैरसरकारी यूरोपीयों के निकट भी वह विरागभाजन हो गई है इसे कौन अस्वीकार कर सकता है?) तो इसी से आमतौर से साफ़ सिद्ध हो जाता है कि सरकार दोषपूर्ण, अन्यायी, या जनता की आवश्यकता के लिए अनुपयोगी है।...हमारी सरकार पुश्तैनी है जो बदलती नहीं और जिसमें नए ख़ून का संचार नहीं होता है। यह सरकार जैसी बंगाल में है, सारे हिन्दुस्तान में भी वैसी ही है और उसकी ग़ैरज़िम्मेदारी प्रगट होती है, उसकी गुस्ताख़ी तथा सभी प्रकार के सुधारों के प्रति उसकी अवज्ञा में।"[1]

छोटे लाट चार्ल्स ग्रान्ट तक ने कहा था: "सचमुच ही जिस रिपोर्ट का नरम स्वर बहुत प्रशंसनीय है, उसमें भी किसानों के मनोभाव की तीव्रता का बहुत क्षीण आभास ही मिलता है।"[2]

नील-विद्रोह की शुरुआत निलहों के विरोध से होने पर जब इसने किसान-विप्लव का रूप लेना शुरू किया तो निलहों के बचाने के लिए अपनी सारी ताक़त से सरकार आ हाज़िर हुई। क़ानून और अनुशासन की रक्षा के लिए सरकार और निलहों के चोली-दामन का सम्बन्ध स्पष्ट हो गया। वर्ग-स्वार्थ नग्न रूप में सामने आ गया।

१८६० के ग्यारह नम्बर क़ानून के बल पर किसानों से ज़बरदस्ती नील की खेती कराने की कोशिशें हुई थीं। जी-जान से लड़कर, हज़ारों की तादाद में जेल जा छिपकर आन्दोलन चला किसानों ने बड़ी सफलता से इसे नाकामयाब कर दिया। १८६८ में ऊपर लिखा क़ानून सरकार को रद्द करना पड़ा।

नील की खेती उत्तरी हिन्दुस्तान में थोड़ी बहुत पहिले से ही होती

---

१. Calcutta Review, June, 1861.
२. Buckland Bengal under Lieutenant Governors, Vol. I. P. 257.

आ रही थी। बंगाल में होने वाले जुल्म वहाँ भी कुछ दूर तक होते रहे। १८६६–६७ में तिरहुत–भागलपुर और १८६७–६८ में चम्पारण के किसानों में स्थानीय पैमाने पर विद्रोह करके इसका जवाब भी दिया था। १८५७ में पश्चिमोत्तर प्रदेश (अब उत्तर प्रदेश) में आज़ादी की इस पहली लड़ाई के योद्धाओं ने अलीगढ़, बदायूँ, आजमगढ़, मिर्ज़ापुर आदि ज़िलों में बहुतेरी नील की कोठियों को धूल में मिला दिया था।[1] बाबू कुँअर सिंह ने यही पवित्र काम बिहार में किया था।[2] बिहार–उत्तर प्रदेश में निलहों ने स्त्रियों पर जो पाशविक अत्याचार किए थे उसकी गवाही अनगिनत सत्ती-चौरा अब भी देते हैं।

सताई जनता की शक्ति असामान्य और अपराजेय है––१८५७ की तरह नील-विद्रोह का भी यही अमर संदेश है।

------

१. Choudhury S. B.—Civil Rebellion in the Indian Mutinies, 1857-1859, pp.80, 115, 154, 158.

२. वही, पृ. १७४, १९०-९१, २५२, २७९।
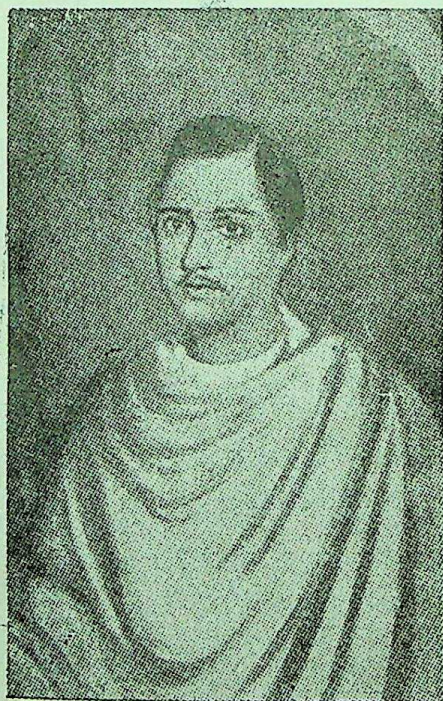
कालीप्रसन्न सिंह

परिशिष्ट–९

नीलदर्पण का मुक़दमा

मध्य सितम्बर १८६० में 'नीलदर्पण' ढाका से प्रकाशित हुआ। इसके कुछ ही समय के बाद जेम्स लाङ से इसके बारे में बंगाल सरकार के सेक्रेटरी सेटन-कार से बातें हुईं। सेटन-कार ने नाटक को बड़े ध्यान से पढ़ा, लेखक की भाषा और ग्रामीण जीवन से घनिष्ट परिचय से वह बहुत प्रभावित हुए। दोनों ही बँगला के अच्छे ज्ञाता थे।

सेटन-कार ने इसके अँगरेज़ी तर्जुमा किए जाने की स्वीकृति दी और उनकी जानकारी में ही एक देशी सज्जन ने लाङ की देख-रेख में इसका उल्था किया। १८६१ अप्रेल के अंत या मई के शुरू में कलकत्ते से इसका अँगरेज़ी अनुवाद प्रकाशित हुआ। इसका आख्यापत्र इस प्रकार था—

NIL DURPAN ; OR THE INDIGO PLANTING MIRROR, A DRAMA TRANSLATED FROM THE BENGALI BY A NATIVE. CALCUTTA- C. H. MANUEL, CALCUTTA, PRINTING & PUBLISHING PRESS, NO. 10, WESTON'S LANE, COSSITOLLAH. 1861.

लाङ ने विलायत में पार्लियामेन्ट के ग्यारह विशिष्ट सदस्यों, भारत सचिव, (२० कापियाँ), कितने ही और मशहूर लोगों, संस्थाओं, डेलीन्यूज़, इकनामिस्ट और सटरडे रिव्यू पत्रिकाओं को बंगाल सरकार की ओर से भिजवाईं। कलकत्ते के किसी भी पत्रिका को कोई कापी नहीं

भेजी मगर बम्बई टाइम्स, लाहोर क्रानिकल, मद्रास स्पेक्टेटर और मुफस्सीलाइट को कापियाँ भेजी गईं। इस देश में इसकी सिर्फ चौदह कापियाँ ही बाँटी गईं जिनमें से अधिकांश आगे चल कर वापिस मँगाकर नष्ट कर दी गईं।

२७ मई को तर्जुमे की कापी इंग्लिशमैन नामक अँगरेजी के कट्टर भारत-विरोधी पत्र को मिली। फिर क्या था, इंगलिशमैन और बंगाल हरकारु (Bengal Hurkaru) ने नीलदर्पण के खिलाफ़ जहर उगलना शुरू किया। निलहों की संस्था लैंडहोल्डर्स एन्ड ऐसो-सियेशन आव ब्रिटिश इन्डिया ने २५ और २९ मई को बंगाल सरकार को लिखा कि सरकारी देखरेख में 'नीलदर्पण' की कापियाँ बाँटी गई हैं। किताब में निलहों के खिलाफ़ किसानों को राजद्रोहात्मक कामों के लिए उकसाया गया है। सरकार उनका नाम हमें दे ताकि उनके खिलाफ़ सख्त क़ानूनी कार्रवाई की जा सके।

सरकार की तरफ़ से ३ जून को लिखा गया कि गवर्नर की गैरहाज़िरी में और उनकी इजाज़त के बिना ही सरकारी मुहर लगाकर किताबें भेजी गई हैं। किताब में हतक़इज्ज़ती की क़ानून विरोधी कोई बात नहीं है। गवर्नर को इस बात का दुःख है कि किताब सरकारी मुहर लगाकर भेजी गई।

फिर भी शुक्रवार १९ जुलाई १८६१ को रानी (मलका विक्टोरिया) बनाम लाङ का मुक़दमा सुप्रीम कोर्ट में सर मरडन्ट वेल्स के कोर्ट में पेश हुआ। अदालत सरकारी, ग़ैर सरकारी लोगों से खचाखच भरी हुई थी, पादरी भी कुछ कम नहीं आए थे। ऐसा लग रहा था मानो मुक़दमा लाङ पर नहीं, बंगाल सरकार पर है। ठीक ग्यारह बजे पन्द्रह जुरियों ने शपथ ली। रानी की तरफ़ से पैटरसन नामक वकील ने प्रकाशक मैनुएल और लाङ को कड़ी सजा देने की वकालत की। २० और २४ जुलाई को लाङ के वकील इगलिन्टन ने जिरह की और सरकारी वकील की दलीलों को तार-तार कर दिया। चीफ़ जस्टिस निष्पक्ष न्याय के लिए बैठे थे मगर बराबर वेशर्मी से रानी यानी निलहों का पक्ष लेते रहे।
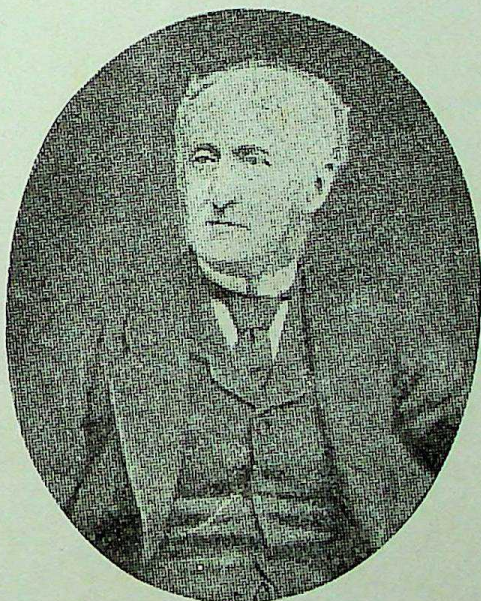
डब्ल्यू० एस० सीटेक्कार
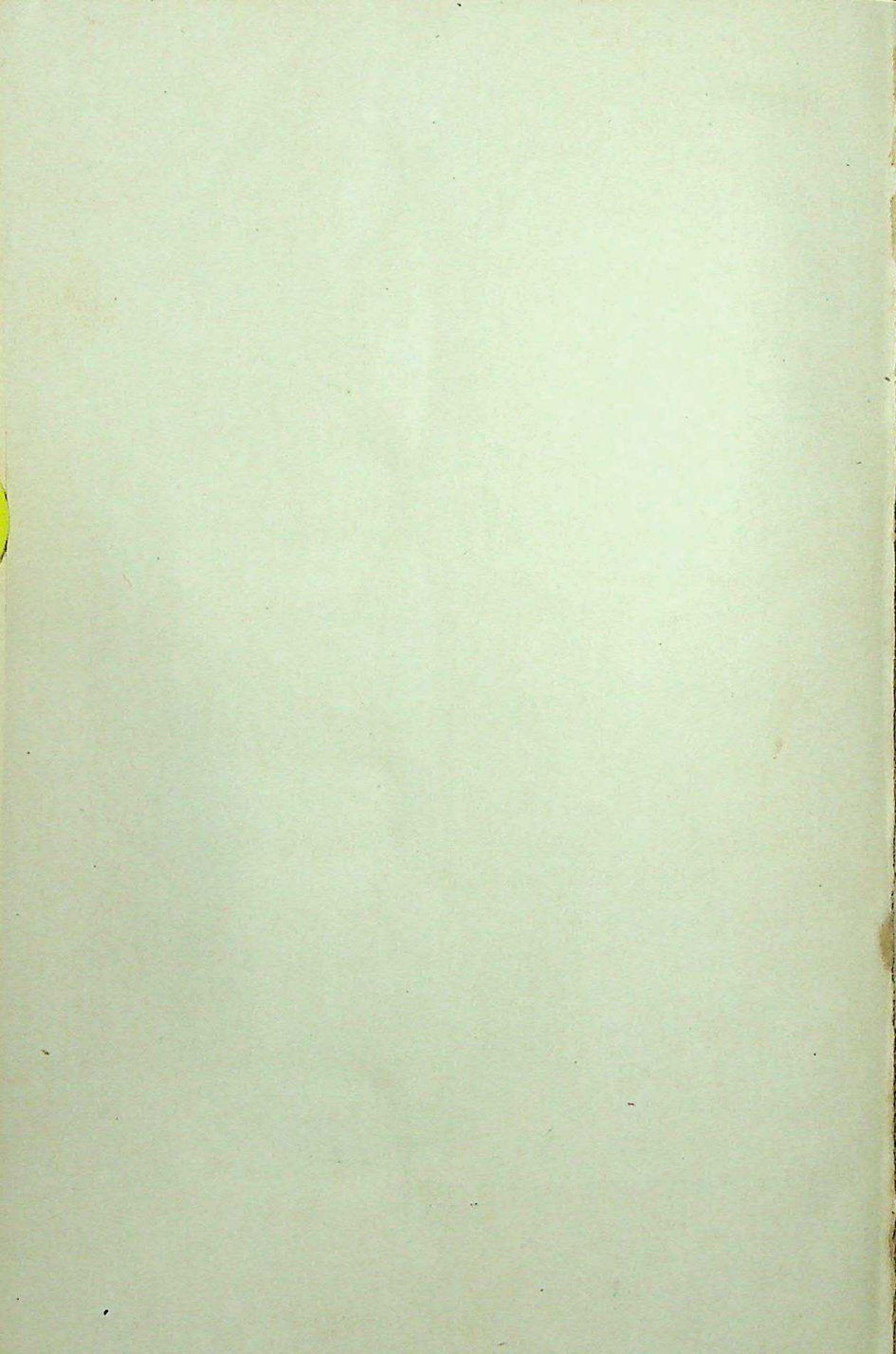
अदालत के सज़ा सुनाने के पहिले पादरी लाङ ने एक लम्बा बयान दिया। इसमें उन्होंने कहा कि अठारह करोड़ भारतवासियों के, जिन पर रानी और पार्लियामेन्ट की हुकूमत है, कल्याण के लिए ही उन्होंने सब कुछ किया है। लाङ ने यह विश्वास प्रगट किया कि—

"I know I shall have the sympathy of good men, the friends of the Natives, in India and in England, and of all those throughout the world who believe in the indissoluble connection of spiritual and intellectual improvement." बयान के अन्त में लाङ ने कहा—

"My Lord, a Court of Law has decided that the work is libel and it is my duty to submit to that verdict and to act accordingly. My conscience convicts me, however, of no moral offence or of any offence deserving the language used in the charge of the jury. But, dread the effects of this precedent. This work being libel, then the exposure of any social evil of caste, of polygamy, of Kulin Brahminism, of the opium trade and of any other evils which are supported by the interests of men, may he treated as libels too, and thus the great work of moral, social and religious reformation may be checked."

सज़ा सुनाते हुए लाङ को उन्होंने उपदेश दिया कि "The fact of your being a clergyman is an aggravation of your offence, and when you state publicly in Court that the advance of Christianity is

impeded by the irreligious conduct of many Europeans, I think that such an expression of opinion on your part, when called upon to receive the sentence of this Court for libelling many of your countrymen, is rather out of place. And perhaps the great majority of the Europeans may think that your conduct has not done much to promote real practical Christianity. You of all men ought to have inculcated and stood forth as the teacher of that inestimable precept. 'Do unto all men as you would they should do unto you.' इसके बाद जज ने कहा "The sentence of the Court is that you pay a fine of Rs. 1000 to your Sovereign Lady the Queen, and that you be imprisoned in the Common Jail for the period of one calendar month, and that you be further imprisoned until the fine is paid."

अदालत में कितने ही देशी लोग थैलियाँ बाँध कर हाज़िर थे। वे इस बात पर तुले हुए थे कि जुर्माना कितना भी क्यों न हो वे नक़द गिन कर महात्मा लाङ को छुड़ा ले जायँगे। कालिप्रसन्न सिंह ने हज़ार रुपये का जुर्माना गिन दिया। जेल की सज़ा की दवा उनके पास नहीं थी। दिल मसोसकर वह रह गए।
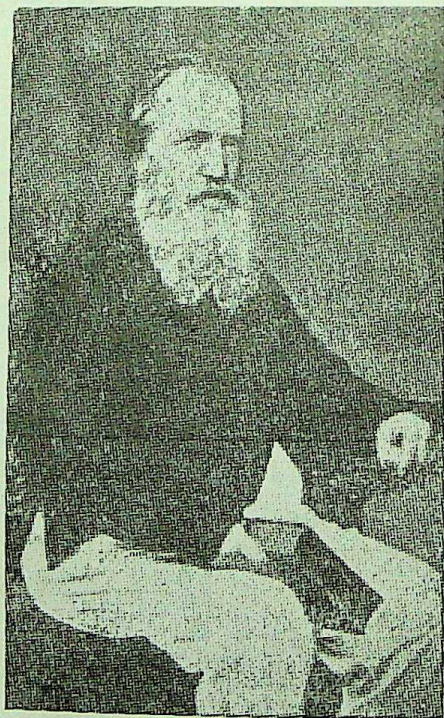
रेवरेन्ड जेम्स लांग

परिशिष्ट–१०

रेवेरेन्ड जेम्स लाङ् की भूमिका

'नीलदर्पण' अथवा 'दी इन्डिगो प्लांटिग मिरर' में रेवरेन्ड जेम्स लाङ की भूमिका—

The original Bengali of this Drama–the Nil Durpan, or Indigo Planting Mirror–having excited considerable interest, a wish was expressed by various Europeans to see a translation of it. This has been made by a Native, both the original and translation are *bona fide* Native Productions and depict the Indigo Planting System as viewed by Natives at large.

The Drama is the favourite mode with the Hindus for describing certain states of society, manners, customs. Since the days of Sir W. Jones, by scholars at Paris, St. Petersburgh, and London, the Sanskrit Drama has, in this point of view, been highly appreciated. The Bengali Drama imitates in this respect its Sanskrit parent. The evils of Kulin Brahminism, widow marriage, prohibition, quackery, fanaticism, have been depicted by it with great effect.

Nor has the system of Indigo planting esca-

ped notice; hence the origin of this work, the Nil Durpan, which, though exhibiting no marvellous or very tragic scenes, yet, in simple homely language, gives the "annals of the poor"; pleads the cause of those who are the feeble ; it describes a respectable ryot, a peasant proprietor, happy with his family in the enjoyment of his land till the Indigo System compelled him to take advances, to neglect his own land, to cultivate crops which beggared him, reducing him to the condition of a serf and a vagabond; the effect of this on his home, children and relatives are pointed out in language, plain but true ; it shows how arbitrary power debases the lord as well as the peasant; reference is also made to the partiality of various Magistrates in favour of Planters and to the Act of last year penally enforcing Indigo contracts.

Attention has of late years been directed by Christian Philanthropists to the condition of the ryots of Bengal, their teachers, and the oppression they suffer, and the conclusion arrived at is, that there is little prospect or possibility of ameliorating the mental, moral or spiritual condition of the ryot without giving him security of landed tenure. If the Bengal ryot is to be treated as a serf, or a mere squatter or day-labourer,

the missionary, the school-master, even the Developer of the resources of India, will find their work like that of Sisyphus–vain and useless.

Statistics have proved that in France, Switzerland, Holland, Belgium, Sweden, Denmark, Saxony, the education of the peasant, along with the security of tenure he enjoys on his small farms, has encouraged industrious, temperate, virtuous, and cleanly habits, fostered a respect for property, increased social comforts, cherished a spirit of healthy and active independence, improved the cultivation of the land, lessened pauperism, and has rendered the people averse to revolution, and friends of crder. Even Russia is carrying out a grand scheme of serf–emancipation in this spirit.

It is the earnest wish of the writer of these lines that harmony may be speedily established between the Planter and the Ryot, that mutual interests may bind the two classes together, and that the European may be in the Mofussil the protecting Aegis of the peasants, who may be able "to sit each man under his mango and tamarind tree, none daring to make him afraid."

————

परिशिष्ठ-११

सहायक ग्रंथ सूची

1. Abul Fazl-Ain-i-Akbari, Translated by Jarret Vol. II. Calcutta, 1873.
2. Buckland-Bengal under the Lieutenant Governors, 2 Vols. Calcutta, 1901.
3. Indigo Commission Report.
4. Buchanan-Development of Capitalist Enterprise in India. New York, 1934.
5. Report of the Select Committee on the Affairs of the E. I. Co., Vol. I, 1832.
6. Watts-Dictionary of Economic Products of India, Vol. V. Calcutta, 1889-96.
7. Linde-A Short Sketch of the Cultivation, Manufacture and Trade of Indigo, 1882.
8. Selections from Bengal Goverment Records No. XXXIII, Indigo Cultivation in Bengal.
9. S. B. Choudhury-Civil Rebellion in the Indian Mutinies, 1857-59, Calcutta, 1957.
10. A Ryot-Selections from Papers on Indigo Cultivation in Bengal. Calcutta, 1858.
11. . . .Do ...No. II Calcutta, 1860.

12. 'Report of the Proceedings of the East India Company in regard to the Culture and Manufacture of Indigo' in 'Reports and Documents connected with the Proceedings of the E.I. Co., in regard to the Culture and Manufacture of Cotton–Wool, Raw–Silk and Indigo in India. London, 1836.
13. Colsworthy Grant–Rural Life in Bengal. London, 1860.
14. Kumund Behari Bose (Ed)–Indigo planters and all about them. Calcutta, 1903.
15. Haran Chandra Chakladar—Fifty Years Ago : The woes of a class of Bengal Peasantry under European Indigo-Planters, in Dawn Magazine, July 1905.
16. Delta--Indigo and its Enemies. London 1861.
17. Jogesh Chandra Bagal--Peasant Revolution in Bengal (Collection of letters from Amrit Bazar Patrika). Calcutta 1953.
18. James Long--Selections from Unpublished Records of Government from 1747-1767, relating mainly to the social conditions of Bengal. Calcutta, 1869.
19. Wilson, M–History of Bihar Indigo Factories. Calcutta, 1908.

20. Lalit Chandra Mitra–History of Indigo Disturbance in Bengal with a full report of the Nil Durpan Case. Calcutta, 1903.

21. Jumma Khurrutch (pseudonym)–To the President and Members of the Indigo Commission. Calcutta, 1860.

22. सुशीलकुमार दे–दीनबन्धु मित्र। कलकत्ता, १३६६ वंगाब्द (१९५९)।

23. दीनबन्धु मित्र–नीलदर्पण, वंगीय साहित्य-परिषद् संस्करण। कलकत्ता, १३५० वंगाब्द (१९४३)।

24. व्रजेन्द्रनाथ वन्द्योपाध्याय–संवादपत्रे सेकालेर कथा, कलकत्ता।

25. प्रमोद सेनगुप्त–नीलविद्रोह। कलकत्ता, १९६०।

———
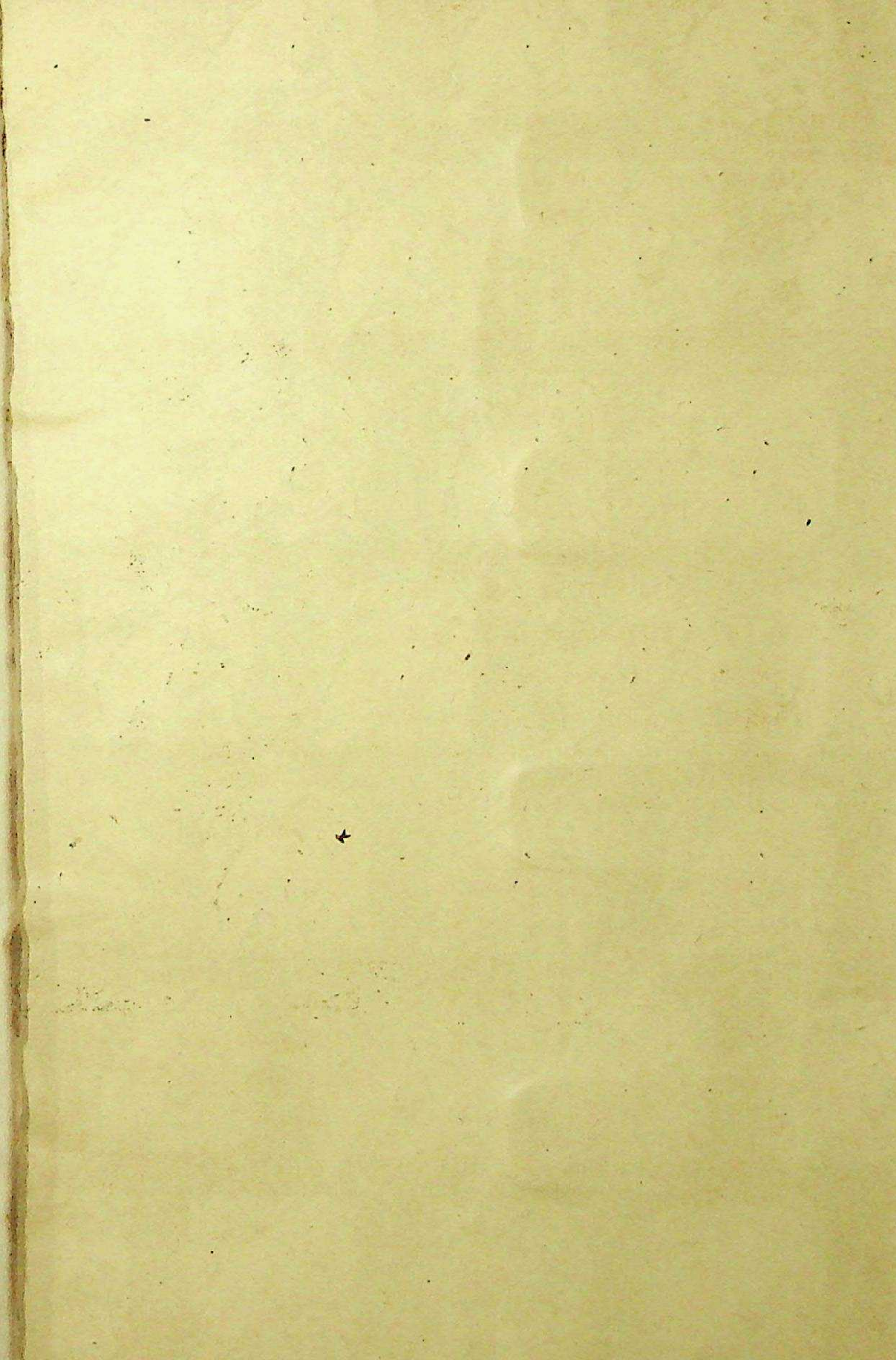
नीलदर्पण

निलहों द्वारा अत्याचारित निराश्रित प्रजा के लिए दीनबन्धु मित्र ने जो कुछ किया है, उसके लिए बंग-भूमि उनकी सदा कृतज्ञ रहेगी।... 'नीलदर्पण' का प्रकाशन अत्यन्त समयोपयोगी हुआ था। निदारुण अत्याचार पीड़ित किसानों के आर्तनाद से शिक्षित समाज भी दंग रह गया था। 'नीलदर्पण' में ही उनके प्रतिवाद ने वाणी का रूप लिया।

अभिनीत नाटक के तौर पर इसकी सफलता इस देश के नाट्य मंच के इतिहास में सभी दृष्टियों से अद्वितीय है। दीनबन्धु के असाधारण सामाजिक अनुभव, प्रत्यक्ष अनुभूति, मनुष्य में अनन्त विश्वास और उससे प्रेम, उदारता और हास्य रस की शक्ति—ये सारे तत्व नाट्यकार के लिए वरदान सिद्ध हुए थे।

'नीलदर्पण' की रचना करके दीनबन्धु मित्र ने एक क्रान्तिकारी परम्परा की सृष्टि की है।

मूल्य

चार रुपये पचास पैसे

अग्निपरीक्षा

बंगाल की प्रसिद्ध उपन्यास लेखिका शुभश्री आशापूर्णा देवी कृत 'अग्निपरीक्षा' एक उत्कृष्ट सामाजिक उपन्यास है, जिसमें परम्परागत मानों और मूल्यों के साथ आधुनिक मानों और मूल्यों का अद्भुत सामंजस्य हुआ है। रचना-क्रम में अनेक आकस्मिक, अप्रत्याशित मोड़ आते हैं, जो हमें केवल विस्मित, चकित अथवा स्तम्भित ही नहीं करते, वरन् जो मूल कथा को गति देते हैं, और उसे आकर्षक और मनमोहक भी बनाते हैं। लेखिका की शैली मधुर, प्राञ्जल और पुष्ट है। प्रस्तुत उपन्यास में लेखिका की अपनी कला पराकाष्ठा को पहुँच गयी है।

चरित्रचित्रण, पात्रों का रूपनिरूपण और उनके व्यक्तित्व का विकास एवं परिमार्जन बड़े ही स्वाभाविक ढंग से हुआ है।

'अग्निपरीक्षा' सर्वथा पठनीय है।

मित्र प्रकाशन प्राइवेट लिमिटेड, इलाहाबाद